LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

ऐच्छिक हिन्दी – II

Editor

Dr. Vinod Kumar

Printed by
LAXMI PUBLICATIONS (P) LTD.
113, Golden House, Daryaganj,
New Delhi-110002
for
Lovely Professional University
Phagwara

पाठ्यक्रम

(SYLLABUS)

ऐच्छिक हिन्दी - II

उद्देश्य

- छात्रों को व्याकरण सम्बन्धी भाषा का ज्ञान देना।
- छात्रों को विकारी शब्दावली का ज्ञान देना।
- छात्रों को काव्य सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करवाना।
- छात्रों को काव्य के विभिन्न रूप–प्रबन्ध, खण्ड एवं मुक्तक काव्य से परिचित करवाना।

Sr. No.	Content
1	संज्ञा की परिभाषा एवं भेद
2	सर्वनाम की परिभाषा एवं भेद
3	विशेषण की परिभाषा एवं भेद
4	क्रिया की परिभाषा एवं भेद
5	क्रिया-विशेषण की परिभाषा एवं भेद
6	विपरीतार्थक शब्द-50, पर्यायवाची शब्द-50
7	अनेकार्थक शब्द- 50
8	काव्य का स्वरूप एवं परिभाषा
9	काव्य के प्रमुख भेद: प्रबंध काव्य
10	काव्य के प्रमुख भेद: खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य

Content

Unit 1: संज्ञा की परिभाषा एवं भेद 1
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 2: सर्वनाम की परिभाषा एवं भेद 35
Reeta Singh, Lovely Professional University

Unit 3: विषेषण की परिभाषा एवं भेद 42
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 4: क्रिया की परिभाषा एवं भेद 50
Hardeep Kaur, Lovely Professional University

Unit 5: क्रियाविषेषण की परिभाषा एवं भेद 61
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 6: विपरीत शब्द 84
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 7: पर्यायवाची शब्द 103
Reeta Singh, Lovely Professional University

Unit 8: अनेकार्थक शब्द 127
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 9: काव्य का स्वरूप एवं परिभाषा 134
Hardeep Kaur, Lovely Professional University

Unit 10: महाकाव्य 146
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 11: पौराणिक प्रबंध काव्य की परंपरा 162
Vinod Kumar, Lovely Professional University

Unit 12: आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य 175
Reeta Singh, Lovely Professional University

Unit 13: काव्य के प्रमुख भेद—खंडकाव्य 183
Reeta Singh, Lovely Professional University

Unit 14: काव्य के प्रमुख भेद—मुक्तक काव्य 187
Vinod Kumar, Lovely Professional University

नोट

इकाई–1 : संज्ञा की परिभाषा एवं भेद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
1.1 संज्ञा के भेद
1.1.1 व्यक्तिवाचक संज्ञा
1.1.2 जातिवाचक संज्ञा
1.1.3 भाववाचक संज्ञा
1.1.4 समूहवाचक संज्ञा
1.1.5 द्रव्यवाचक संज्ञा
1.2 संज्ञा के रूपान्तर (लिंग, वचन और कारक में संबंध)
1.3 लिंग
1.4 वचन
1.5 कारक
1.6 पद परिचय
1.7 सारांश (Summary)
1.8 शब्दकोश (Keywords)
1.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
1.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- संज्ञा के भेद जानने में।
- संज्ञा के रूपांतर जानने में।
- पद-परिचय जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'संज्ञा' उस विकारी शब्द को कहते हैं, जिससे किसी विशेष वस्तु, भाव और जीव के नाम का बोध हो। यहाँ 'वस्तु' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में हुआ है, जो केवल वाणी और पदार्थ का वाचक नहीं, वरन उनके धर्मो का भी सूचक है। साधारण अर्थ में 'वस्तु' का प्रयोग इस अर्थ में नहीं होता। अतः, वस्तु के अंतर्गत प्राणी, पदार्थ और धर्म आते हैं। इन्हीं के आधार पर संज्ञा के भेद किये गये हैं।

नोट

1.1 संज्ञा के भेद

संज्ञा के भेदों के संबंध में वैयाकरण एकमत नहीं हैं। पर अधिकतर वैयाकरण संज्ञा के पाँच भेद मानते हैं– (1) **जातिवाचक,** (2) **व्यक्तिवाचक,** (3) **गुणवाचक,** (4) **भाववाचक,** और (5) **द्रव्यवाचक।** ये भेद अंग्रेजी के आधार पर हैं; कुछ रूप के अनुसार और कुछ प्रयोग के अनुसार। संस्कृत व्याकरण में 'प्रातिपदिक' नामक शब्दभेद के अंतर्गत संज्ञा, सर्वनाम, गुणवाचक (विशेषण) आदि आते हैं, क्योंकि वहाँ इन तीन शब्दभेदों का रूपांतर प्राय: एक ही जैसे प्रत्ययों के प्रयोग से होता है। किंतु, हिंदी व्याकरण में सभी तरह की संज्ञाओं को दो भागों में बाँटा गया है–एक, वस्तु की दृष्टि से और दूसरा, धर्म की दृष्टि से–

संज्ञा
↓
- धर्म
  ↓
  - भाववाचक
- वस्तु
  ↓
  - व्यक्तिवाचक
  - जातिवाचक
  - समूहवाचक
  - द्रव्यवाचक

इस प्रकार, हिंदी व्याकरण में संज्ञा के मुख्यत: पाँच भेद हैं–(1) **व्यक्तिवाचक,** (2) **जातिवाचक,** (3) **भाववाचक,** (4) **समूहवाचक** और (5) **द्रव्यवाचक। पं. गुरु** के अनुसार, ''समूहवाचक का समावेश व्यक्तिवाचक तथा जातिवाचक में और द्रव्यवाचक का समावेश जातिवाचक में हो जाता है।''

नोट्स 'संज्ञा' उस विकारी शब्द को कहते हैं, जिससे किसी विशेष वस्तु, भाव और जीव के नाम का बोध हो।

1.1.1 व्यक्तिवाचक संज्ञा

जिस शब्द से किसी एक वस्तु या व्यक्ति का बोध हो, उसे 'व्यक्तिवाचक संज्ञा' कहते हैं। जैसे–राम, गाँधीजी, गंगा, काशी इत्यादि। 'राम', 'गाँधीजी' कहने से एक-एक व्यक्ति का 'गंगा' कहने से एक नदी का और 'काशी' कहने से एक नगर का बोध होता है। व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ जातिवाचक संज्ञाओं की तुलना में कम हैं।

दीमशित्स के अनुसार व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ निम्नलिखित रूपों में होती हैं–

1. व्यक्तियों के नाम–श्याम, हरि, सुरेश।
2. दिशाओं के नाम–उत्तर, पश्चिम, दक्षिण, पूर्व।
3. देशों के नाम–भारत, जापान, अमेरिका, पाकिस्तान, बर्मा।
4. राष्ट्रीय जातियों के नाम–भारतीय, रूसी, अमेरिकी।
5. समुद्रों के नाम–काला सागर, भूमध्य सागर, हिंद महासागर, प्रशांत महासागर।
6. नदियों के नाम–गंगा, ब्रह्मपुत्र, वोल्गा, कृष्णा, कावेरी, सिंधु।
7. पर्वतों के नाम–हिमालय, विंध्याचल, अलकनंदा, कराकोरम।
8. नगरों, चौकों और सड़कों के नाम–वाराणसी, गया, चाँदनी चौक, हरिसन रोड, अशोक मार्ग।
9. पुस्तकों तथा समाचारपत्रों के नाम–रामचरितमानस, ऋग्वेद, धर्मयुग, इण्डियन नेशन, आर्यावर्त।
10. ऐतिहासिक युद्धों और घटनाओं के नाम–पानीपत की पहली लड़ाई, सिपाही-विद्रोह, अक्टूबर-क्रांति।

11. दिनों व महीनों के नाम–मई, अक्टूबर, जुलाई, सोमवार, मंगलवार।
12. त्योहारों व उत्सवों के नाम–होली, दीवाली, रक्षाबंधन, विजयादशमी।

1.1.2 जातिवाचक संज्ञा

जिन संज्ञाओं से एक ही प्रकार की वस्तुओं अथवा व्यक्तियों का बोध हो, उन्हें 'जातिवाचक संज्ञा' कहते हैं। जैसे–मनुष्य, घर, पहाड़, नदी इत्यादि। 'मनुष्य' कहने से संसार की मनुष्य-जाति का, 'घर' कहने से सभी तरह के घरों का, 'पहाड़' कहने से संसार के सभी पहाड़ों का और 'नदी' कहने से सभी प्रकार की नदियों का जातिगत बोध होता है।

जातिवाचक संज्ञाएँ निम्नलिखित स्थितियों की होती हैं–

1. संबंधियों, व्यवसायों, पदों और कार्यों के नाम–बहन, मंत्री, जुलाहा, प्रोफेसर, ठग।
2. पशु-पक्षियों के नाम–घोड़ा, गाय, कौआ, तोता, मैना।
3. वस्तुओं के नाम–मकान, कुर्सी, घड़ी, पुस्तक, कलम, टेबल।
4. प्राकृतिक तत्वों के नाम–तूफान, बिजली, वर्षा, भूकंप, ज्वालामुखी।

1.1.3 भाववाचक संज्ञा

जिस संज्ञा-शब्द से व्यक्ति या वस्तु के गुण या धर्म, दशा अथवा व्यापार का बोध होता है, उसे 'भाववाचक संज्ञा' कहते हैं। जैसे–लंबाई, बुढ़ापा, नम्रता, मिठास, समझ, चाल इत्यादि। हर पदार्थ का धर्म होता है। पानी में शीतलता, आग में गर्मी, मनुष्य में देवत्व और पशुत्व इत्यादि का होना आवश्यक है। पदार्थ का गुण या धर्म पदार्थ से अलग नहीं रह सकता। घोड़ा है, तो उसमें बल है, वेग है और आकार भी है। व्यक्तिवाचक संज्ञा की तरह भाववाचक संज्ञा से भी किसी एक ही भाव का बोध होता है। 'धर्म गुण, अर्थ' और 'भाव' प्राय: पर्यायवाची शब्द हैं। इस संज्ञा का अनुभव हमारी इंद्रियों को होता है और प्राय: इसका बहुवचन नहीं होता।

भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण

भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण जातिवाचक संज्ञा, विशेषण, क्रिया, सर्वनाम और अव्यय में प्रत्यय लगाकर होता है। उदाहरणार्थ–

(क) **जातिवाचक संज्ञा से**–बूढ़ा-बुढ़ापा; लड़का–लड़कपन; मित्र–मित्रता; दास–दासत्व; पंडित–पंडिताई इत्यादि।

(ख) **विशेषण से**–गर्म–गर्मी; सर्द–सर्दी; कठोर–कठोरता; मीठा–मिठास; चतुर–चतुराई इत्यादि।

(ग) **क्रिया से**–घबराना–घबराहट; सजाना–सजावट; चढ़ना–चढ़ाई; बहना–बहाव; मारना–मार; दौड़ना–दौड़ इत्यादि।

(घ) **सर्वनाम से**–अपना–अपनापन, अपनाव; मम–ममता, ममत्व; निज–निजत्व इत्यादि।

(ङ) **अव्यय से**–दूर–दूरी; परस्पर–पारस्पर्य; समीप–सामीप्य, निकट–नैकट्य; शाबाश–शाबाशी; वाहवाह–वाहवाही इत्यादि।

भाववाचक संज्ञा में जिन शब्दों का प्रयोग होता है, उनके धर्म में या तो गुण होगा या अवस्था या व्यापार। ऊपर दिये गये उदाहरण इस कथन की पुष्टि करते हैं।

क्या आप जानते हैं जिस शब्द से किसी एक वस्तु या व्यक्ति का बोध हो, उसे 'व्यक्तिवाचक संज्ञा' कहते हैं।

नोट

1.1.4 समूहवाचक संज्ञा

जिस संज्ञा से वस्तु अथवा व्यक्ति के समूह का बोध हो, उसे 'समूहवाचक संज्ञा' कहते हैं। जैसे–व्यक्तियों का समूह–सभा, दल, गिरोह; वस्तुओं का समूह–गुच्छा, कुंज, मंडल घौद इत्यादि।

1.1.5 द्रव्यवाचक संज्ञा

जिस संज्ञा से नाप-तौल वाली वस्तु का बोध हो, उसे 'द्रव्यवाचक संज्ञा' कहते हैं। इस संज्ञा का सामान्यत: बहुवचन नहीं होता। जैसे–लोहा, सोना, चाँदी, दूध, पानी, तेल, तेजाब इत्यादि।

संज्ञाओं का प्रयोग

संज्ञाओं के प्रयोग में कभी-कभी उलटफेर भी हो जाया करता है। कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं–

(क) **जातिवाचक : व्यक्तिवाचक**–कभी-कभी जातिवाचक संज्ञाओं का प्रयोग व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में होता है। जैसे–'पुरी' से जगन्नाथपुरी का, 'देवी' से दुर्गा का, 'दाऊ' से कृष्ण के भाई बलदेव का, 'संवत्' से विक्रमी संवत् का, 'भारतेंदु' से बाबू हरिश्चंद्र का और 'गोस्वामी' से तुलसीदासजी का बोध होता है। इसी तरह, बहुत-सी योगरूढ़ संज्ञाएँ मूल रूप से जातिवाचक होते हुए भी प्रयोग में व्यक्तिवाचक के अर्थ में चली आती हैं। जैसे–गणेश, हनुमान, हिमालय, गोपाल इत्यादि।

(ख) **व्यक्तिवाचक : जातिवाचक**–कभी-कभी व्यक्तिवाचक संज्ञा का प्रयोग जातिवाचक (अनेक व्यक्तियों के अर्थ) में होता है। ऐसा किसी व्यक्ति का असाधारण गुण या धर्म दिखाने के लिए किया जाता है। ऐसी अवस्था में व्यक्तिवाचक संज्ञा जातिवाचक संज्ञा में बदल जाती है। जैसे–गाँधी अपने समय के **कृष्ण** थे; यशोदा हमारे घर की **लक्ष्मी** है; तुम कलियुग के **भीम** हो इत्यादि।

(ग) **भाववाचक : जातिवाचक**–कभी-कभी भाववाचक संज्ञा का प्रयोग जातिवाचक संज्ञा में होता है। उदाहरणार्थ–ये सब कैसे अच्छे पहरावे हैं! यहाँ 'पहरावा' भाववाचक संज्ञा है, किंतु प्रयोग जातिवाचक संज्ञा में हुआ। 'पहरावे' से 'पहनने के वस्त्र' का बोध होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. हिंदी व्याकरण में संज्ञा के पाँच भेद हैं–व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक, समूहवाचक और .... ।
2. संज्ञा के रूप लिंग, वचन और .... के कारण बदलते हैं।
3. भाववाचक संज्ञा का निर्माण जातिवाचक संज्ञा, विशेषण, क्रिया, सर्वनाम और अव्यय में .... लगाकर होता है।
4. जिस संज्ञा से वस्तु अथवा व्यक्ति के समूह का बोध हो उसे .... कहते हैं।

1.2 संज्ञा के रूपान्तर (लिंग, वचन और कारक में संबंध)

संज्ञा विकारी शब्द है। विकार शब्दरूपों को परिवर्तित अथवा रूपांतरित करता है। संज्ञा के रूप लिंग, वचन और कारक चिह्नों (परसर्ग) के कारण बदलते हैं।

लिंग के अनुसार

नर खाता है–नारी खाती है।

लड़का खाता है–लड़की खाती है।

नोट

इन वाक्यों में 'नर' पुल्लिग है और 'नारी' स्त्रीलिंग। 'लड़का' पुल्लिग है और 'लड़की' स्त्रीलिंग। इस प्रकार, लिंग के आधार पर संज्ञाओं का रूपांतर होता है।

वचन के अनुसार

लड़का खाता है–लड़के खाते हैं।

लड़की खाती है–लड़कियाँ खाती हैं।

इन वाक्यों में 'लड़का' शब्द एक के लिए आया है और 'लड़के' एक से अधिक के लिए। 'लड़की' एक के लिए और 'लड़कियाँ' एक से अधिक के लिए व्यवहृत हुआ है। यहाँ संज्ञा के रूपांतर का आधार 'वचन' है। 'लड़का' एकवचन है और 'लड़के' बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है।

कारक-चिह्नों के अनुसार

लड़का खाना खाता है–लड़के ने खाना खाया।

लड़की खाना खाती है–लड़कियों ने खाना खाया।

इन वाक्यों में 'लड़का खाता है' में 'लड़का' पुल्लिग एक वचन है और 'लड़के ने खाना खाया' में भी 'लड़के' पुल्लिग एकवचन है, पर दोनों के रूप में भेद है। इस रूपांतर का कारण कर्ता कारक का चिह्न 'ने' है, जिससे एकवचन होते हुए भी 'लड़के' रूप हो गया है। इसी तरह, लड़के को बुलाओ, लड़के से पूछो, लड़के का कमरा, लड़के के लिए चाय लाओ इत्यादि वाक्यों में संज्ञा (लड़का-लड़के) एकवचन में आयी है। इस प्रकार, संज्ञा बिना कारक-चिह्न के भी होती है और कारक-चिह्नों के साथ भी। दोनों स्थितियों में संज्ञाएँ एकवचन में अथवा बहुवचन में प्रयुक्त होती हैं।

उदाहरणार्थ–

बिना कारक-चिह्न के – लड़के खाना खाते हैं। (बहुवचन)

लड़कियाँ खाना खाती हैं। (बहुवचन)

कारक-चिह्नों के साथ – लड़कों ने खाना खाया।

लड़कियों ने खाना खाया।

लड़कों से पूछो।

लड़कियों से पूछो।

इस प्रकार, संज्ञा का रूपांतर लिंग, वचन और कारक के कारण होता है।

1.3 लिंग

शब्द की जाति को लिंग कहते हैं।

संज्ञा के जिस रूप से व्यक्ति या वस्तु की नर या मादा जाति का बोध हो, उसे व्याकरण में 'लिंग' कहते हैं। 'लिंग' संस्कृत भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ होता है 'चिह्न' या 'निशान'। 'चिह्न' या 'निशान' किसी संज्ञा का ही होता है। 'संज्ञा' किसी वस्तु के नाम को कहते हैं और वस्तु या तो पुरुषजाति की होगी या स्त्रीजाति की। तात्पर्य यह कि प्रत्येक संज्ञा पुल्लिग होगी या स्त्रीलिंग। संज्ञा के भी दो रूप हैं। एक, अप्राणिवाचक संज्ञा–लोटा, प्याली, पेड़, पत्ता इत्यादि और दूसरा, प्राणिवाचक संज्ञा–घोड़ा-घोड़ी, माता-पिता, लड़का-लड़की इत्यादि।

लिंग के भेद

सारी सृष्टि की तीन मुख्य जातियाँ हैं–(1) पुरुष, (2) स्त्री और (3) जड़।

नोट

अनेक भाषाओं में इन्हीं तीन जातियों के आधार पर लिंग के तीन भेद किये गये हैं–

(1) **पुल्लिग,** (2) **स्त्रीलिंग** और (3) **नपुंसकलिंग।** अंग्रेजी व्याकरण में लिंग का निर्णय इसी व्यवस्था के अनुसार होता है। मराठी, गुजराती आदि आधुनिक आर्य भाषाओं में भी यह व्यवस्था ज्यों-की-त्यों चली आ रही है। इसके विपरीत, हिंदी में दो ही लिंग–पुल्लिग और स्त्रीलिंग–हैं। नपुंसकलिंग यहाँ नहीं है। अत:, हिंदी में सारे पदार्थवाचक शब्द, चाहे वे चेतन हों या जड़, स्त्रीलिंग और पुल्लिग, इन दो लिंगों में विभक्त हैं।

वाक्यों में लिंग-निर्णय

हिंदी में लिंगों की अभिव्यक्ति वाक्यों में होती है, तभी संज्ञा शब्दों का लिंगभेद स्पष्ट होता है। वाक्यों में लिंग विशेषण, सर्वनाम, क्रिया और विभक्तियों में विकार उत्पन्न करता है। जैसे–

विशेषण में

मोटा-सा आदमी आया है।	('आदमी' पुल्लिग के अनुसार)
यह **बड़ा** मकान है।	('मकान' पुल्लिग के अनुसार)
यह **बड़ी** पुस्तक है।	('पुस्तक' स्त्रीलिंग के अनुसार)
यह **छोटा** कमरा है।	('कमरा' पुल्लिग के अनुसार)
यह **छोटी** लड़की है।	('लड़की' स्त्रीलिंग के अनुसार)

टिप्पणी–हिंदी में विशेषण का लिंगभेद इन दो नियमों के अनुसार किया जा सकता है–

(क) आकारांत विशेषण स्त्रीलिंग में ईकारांत हो जाता है; जैसे–अच्छा–अच्छी, काला–काली, उजला–उजली, भला–भली, पीला–पीली।

(ख) अकारांत विशेषणों के रूप दोनों लिंगों में समान होते हैं; जैसे–मेरी टोपी गोल है। मेरा कोट सफेद है। उसकी पगड़ी लाल है। लड़की सुंदर है। उसका शरीर सुडौल है। यहाँ सुंदर, गोल आदि विशेषण हैं।

सर्वनाम में

मेरी पुस्तक अच्छी है।	('पुस्तक' स्त्रीलिंग के अनुसार)
मेरा घर बड़ा है।	('घर' पुल्लिग के अनुसार)
उसकी कलम खो गयी है।	('कलम' स्त्रीलिंग के अनुसार)
उसका स्कूल बंद है।	('स्कूल' पुल्लिग के अनुसार)
तुम्हारी जेब खाली है।	('जेब' स्त्रीलिंग के अनुसार)
तुम्हारा कोट अच्छा है।	('कोट' पुल्लिग के अनुसार)

क्रिया में

बुढ़ापा **आ गया**।	('बुढ़ापा' पुल्लिग के अनुसार)
सहायता **मिली** है।	('सहायता' स्त्रीलिंग के अनुसार)
भात **पका** है।	('भात' पुल्लिग के अनुसार)
दाल **बनी** है।	('दाल' स्त्रीलिंग के अनुसार)

विभक्ति में

संबंध–गुलाब का रंग लाल है।	('रंग' पुल्लिग के अनुसार)
आपका चरित्र अच्छा है।	('चरित्र' पुल्लिग के अनुसार)
आपकी नाक कट गयी।	('नाक' स्त्रीलिंग के अनुसार)
संबोधन–अयि देवि! तुम्हारी जय हो।	('देवि' स्त्रीलिंग के अनुसार)

तत्सम (संस्कृत) शब्दों का लिंग निर्णय

संस्कृत पुल्लिंग शब्द

पं. कामताप्रसाद गुरु ने संस्कृत शब्दों को पहचानने के निम्नलिखित नियम बताये हैं–

(अ) जिन संज्ञाओं के अंत में 'त्र' होता है। जैसे–चित्र, क्षेत्र, पात्र, नेत्र, चरित्र, शस्त्र इत्यादि।

(आ) 'नांत' संज्ञाएँ। जैसे–पालन, पोषण, दमन, वचन, नयन, गमन, हरण इत्यादि।

अपवाद–'पवन' उभयलिंग है।

(इ) 'ज'-प्रत्ययांत संज्ञाएँ। जैसे–जलज, स्वेदज, पिंडज, सरोज इत्यादि।

(ई) जिन भाववाचक संज्ञाओं के अंत में त्व, त्य, व, य होता है। जैसे–सतीत्व, बहूत्व, नृत्य, कृत्य, लाघव, गौरव, माधुर्य इत्यादि।

(उ) जिन शब्दों के अंत में 'आर', 'आय', वा 'आस' हो। जैसे–विकार, विस्तार, संसार, अध्याय, उपाय, समुदाय, उल्लास, विकास, ह्रास इत्यादि।

अपवाद–सहाय (उभयलिंग), आय (स्त्रीलिंग)।

(ऊ) 'अ'-प्रत्ययांत संज्ञाएँ। जैसे–क्रोध, मोह, पाक, त्याग, दोष, स्पर्श इत्यादि।

अपवाद–जय (स्त्रीलिंग), विनय (उभयलिंग) आदि।

(ऋ) 'त'-प्रत्ययांत संज्ञाएँ। जैसे–चरित, गणित, फलित, मत, गीत, स्वागत इत्यादि।

(ए) जिनके अंत में 'ख' होता है। जैसे–नख, मुख, सुख, दुःख, लेख, मख, शंख इत्यादि।

संस्कृत स्त्रीलिंग शब्द

पं. कामताप्रसाद गुरु ने संस्कृत स्त्रीलिंग शब्दों को पहचानने के निम्नलिखित नियमों का उल्लेख अपने व्याकरण में किया है–

(अ) आकारांत संज्ञाएँ। जैसे–दया, माया, कृपा, लज्जा, क्षमा, शोभा इत्यादि।

(आ) नाकारांत संज्ञाएँ। जैसे–प्रार्थना, वेदना, प्रस्तावना, रचना, घटना इत्यादि।

(इ) उकारांत संज्ञाएँ। जैसे–वायु, रेणु, रज्जु, जानु, मृत्यु, आयु, वस्तु, धातु, ऋतु इत्यादि।

अपवाद–मधु, अश्रु, तालु, मेरु, हेतु, सेतु इत्यादि।

(ई) जिनके अंत में 'ति' वा 'नि' हो। जैसे–गति, मति, रीति, हानि, ग्लानि, योनि, बुद्धि, ऋद्धि, सिद्धि (सिध् + ति = सिद्धि) इत्यादि।

(उ) 'ता'-प्रत्ययांत भाववाचक संज्ञाएँ। जैसे–नम्रता, लघुता, सुंदरता, प्रभुता, जड़ता इत्यादि।

(ऊ) इकारांत संज्ञाएँ। जैसे–निधि, विधि, परिधि, राशि, अग्नि, छवि, केलि, रुचि इत्यादि।

अपवाद–वारि, जलधि, पाणि, गिरि, अद्रि, आदि, बलि इत्यादि।

(ऋ) 'इमा'–प्रत्ययांत शब्द। जैसे–महिमा, गरिमा, कालिमा, लालिमा इत्यादि।

तत्सम पुल्लिंग शब्द

चित्र, पत्र, पात्र, मित्र, गोत्र, दमन, गमन, गगन, श्रवण, पोषण, शोषण, पालन, लालन, मलयज, जलज, उरोज, सतीत्व, कृत्य, स्त्रीत्व, लाघव, वीर्य, माधुर्य, कार्य, कर्म, प्रकार, विहार, प्रचार, सार, विस्तार, प्रसार, अध्याय, स्वाध्याय, उपहार, ह्रास, मास, लोभ, क्रोध, बोध, मोद, ग्रंथ, नख, मुख, शिख, दुःख, सुख, शंख, तुषार, तुहिन, उत्तर, प्रश्न, मस्तक, आश्चर्य, नृत्य, काष्ठ, छत्र, मेघ, कष्ट, प्रहर, सौभाग्य, अंकन, अंकुश, अंजन, अंचल, अंतर्धान, अंतस्तल, अंबुज, अंश, अकाल, अक्षर, कल्मष, कल्याण, कवच, कायाकल्प, कलश, काव्य, कास, गज, गण, ग्राम, गृह, चंद्र, चंदन, क्षण, छंद, अलंकार, सरोवर, परिमाण, परिमार्जन, संस्करण, संशोधन, परिवर्तन,

नोट

परिवेष्टन, परिशोध, परिशीलन, प्रांगण, प्राणदान, वचन, मर्म, यवन, रविवार, सोमवार, मार्ग, राजयोग, रूप, रूपक, स्वदेश, राष्ट्र, प्रांत, नगर, देश, सर्प, सागर, साधन, सार, तत्व, स्वर्ग, दातव्य, दंड, दोष, धन, नियम, पक्ष, पृष्ठ, विधेयक, विनिमय, विनियोग, विभाग, विभाजन, विरोध, विवाद, वाणिज्य, शासन, प्रवेश, अनुच्छेद, शिविर, वाद, अवमान, अनुमान, आकलन, निमंत्रण, नियंत्रण, आमंत्रण, उद्भव, निबंध, नाटक, स्वास्थ्य, निगम, न्याय, समाज, विघटन, विसर्जन, विवाह, व्याख्यान, धर्म, वित्त, उपादान, उपकरण, आक्रमण, पर्यवेक्षण, श्रम, विधान, बहुमत, निर्माण, संदेश, प्रस्ताव, ज्ञापक, आभार, छात्रावास, अपराध, प्रभाव, उत्पादन, लोक, विराम, परिहार, विक्रम, न्याय, संघ, परिवहन, प्रशिक्षण, प्रतिवेदन, संकल्प इत्यादि।

तत्सम स्त्रीलिंग शब्द

दया, माया, कृपा, लज्जा, क्षमा, शोभा, सभा, प्रार्थना, वेदना, समवेदना, प्रस्तावना, रचना, घटना, अवस्था, नम्रता, सुंदरता, प्रभुता, जड़ता, महिमा, गरिमा, कालिमा, लालिमा, ईर्ष्या, भाषा, अभिलाषा, आशा, निराशा, पूर्णिमा, अरुणिमा, काया, कला, चपला, अक्षमता, इच्छा, अनुज्ञा, आज्ञा, आराधना, उपासना, याचना, रक्षा, संहिता, आजीविका, घोषणा, गणना, परीक्षा, गवेषणा, नगरपालिका, नागरिकता, योग्यता, सीमा, स्थापना, संस्था, सहायता, मंत्रणा, मान्यता, व्याख्या, शिक्षा, समता, संपदा, संविदा, सूचना, सेवा, सेना, अनुज्ञप्ति, विज्ञप्ति, अनुमति, अभियुक्ति, अभिव्यक्ति, उपलब्धि, विधि, क्षति, पूर्ति, विकृति, चित्तवृति, जाति, निधि, सिद्धि, समिति, नियुक्ति, निवृत्ति, रीति, शक्ति, प्रतिकृति, कृति, प्रतिभूति, प्रतिलिपि, अनुभूति, युक्ति, धृति, हानि, स्थिति, परिस्थिति, विमति, वृत्ति, आवृत्ति, शांति, संधि, समिति, संपत्ति, सुसंगति, कटि, छवि, रुचि, अग्नि, केलि, नदी, नारी, मंडली, लक्ष्मी, शताब्दी, श्री, कुंडली, कुंडलिनी, कौमुदी, गोष्ठी, धात्री, मृत्यु, आयु, वस्तु, ऋतु, रज्जु, रेणु, वायु इत्यादि।

अपवाद–शशि, रवि, पति, मुनि, गिरि इत्यादि।

अब हम हिंदी के तद्भव शब्दों के लिंग विधान पर विचार करेंगे।

तद्भव (हिंदी) शब्दों का लिंग निर्णय

तद्भव शब्दों के लिंग निर्णय में अधिक कठिनाई होती है। तद्भव शब्दों का लिंगभेद, वह भी अप्राणिवाचक शब्दों का, कैसे किया जाए और इसके सामान्य नियम क्या हों, इसके बारे में विद्वानों में मतभेद है। पंडित कामताप्रसाद गुरु ने हिंदी के तद्भव शब्दों को परखने के लिए पुल्लिग के तीन और स्त्रीलिंग के दस नियमों का उल्लेख अपने 'हिंदी व्याकरण' में किया है। वे नियम इस प्रकार हैं–

तद्भव पुल्लिग शब्द

(अ) ऊनवाचक संज्ञाओं को छोड़ शेष आकारांत संज्ञाएँ। जैसे–कपड़ा, गन्ना, पैसा, पहिया, आटा, चमड़ा इत्यादि।

(आ) जिन भाववाचक संज्ञाओं के अंत में ना, आव, पन, वा, पा होता है। जैसे–आना, गाना, बहाव, चढ़ाव, बड़प्पन, बढ़ावा, बुढ़ापा इत्यादि।

(इ) कृदंत की आनांत संज्ञाएँ। जैसे–लगान, मिलान, खान, पान, नहान, उठान इत्यादि।

अपवाद–उड़ान, चट्टान इत्यादि।

तद्भव स्त्रीलिंग शब्द

(अ) ईकारांत संज्ञाएँ। जैसे–नदी, चिट्ठी, रोटी, टोपी, उदासी इत्यादि।

अपवाद–घी, जी, मोती, दही इत्यादि।

(आ) ऊनवाचक याकारांत संज्ञाएँ। जैसे–गुड़िया, खटिया, टिबिया, पुड़िया, ठिलिया इत्यादि।

(इ) तकारांत संज्ञाएँ। जैसे–रात, बात, लात, छत, भीत, पत इत्यादि।

अपवाद–भात, खेत, सूत, गात, दाँत इत्यादि।

(ई) ऊकारांत संज्ञाएँ। जैसे–बालू, लू, दारू, ब्यालू, झाडू इत्यादि।

अपवाद–आँसू, आलू, रतालू, टेसू इत्यादि।

(उ) अनुस्वारांत संज्ञाएँ। जैसे–सरसों, खडाऊँ, भौं, चूँ, जूँ इत्यादि।

अपवाद–गेहूँ।

(ऊ) सकारांत संज्ञाएँ। जैसे–प्यास, मिठास, निंदास, रास (लगाम), बाँस, साँस इत्यादि।

अपवाद–निकास, काँस, रास (नृत्य)।

(ऋ) कृदंत नकारांत संज्ञाएँ, जिनका उपांत्य वर्ण अकारांत हो अथवा जिनकी धातु नकारांत हो। जैसे–रहन, सूजन, जलन, उलझन, पहचान इत्यादि।

अपवाद–चलन आदि।

(ए) कृदंत की अकारांत संज्ञाएँ। जैसे–लूट, मार, समझ, दौड़, सँभाल, रगड़, चमक, छाप, पुकार इत्यादि।

अपवाद–नाच, मेल, बिगाड़, बोल, उतार इत्यादि।

(ऐ) जिन भाववाचक संज्ञाओं के अंत में ट, वट, हट होता है। जैसे–सजावट, घबराहट, चिकनाहट, आहट, झंझट इत्यादि।

(ओ) जिन संज्ञाओं के अंत में 'ख' होता है। जैसे–ईख, भूख, राख, चीख, काँख, कोख, साख, देखरेख इत्यादि।

अपवाद–पंख, रूख।

अर्थ के अनुसार लिंग निर्णय

कुछ लोग अप्राणिवाचक शब्दों का लिंग भेद अर्थ के अनुसार करते हैं। पं. कामताप्रसाद गुरु ने इस आधार और दृष्टिकोण को 'अव्यापक और अपूर्ण' कहा है; क्योंकि इसके जितने उदाहरण हैं, प्राय: उतने ही अपवाद हैं। इसके अलावा, इसके जो थोड़े-से नियम बने हैं, उनमें सभी तरह के शब्द सम्मिलित नहीं होते। गुरुजी ने इस संबंध में जो नियम और उदाहरण दिये हैं, उनमें भी अपवादों की भरमार है। उन्होंने जो भी नियम दिये हैं, वे बड़े जटिल और अव्यावहारिक हैं। यहाँ इन नियमों का उल्लेख किया जा रहा है–

(क) अप्राणिवाचक पुल्लिंग हिंदी शब्द

1. शरीर के अवयवों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–कान, मुँह, दाँत, ओठ, पाँव, हाथ, गाल, मस्तक, तालु, बाल, अँगूठा, मुक्का, नाखून, नथना, गट्टा इत्यादि। **अपवाद**–कोहनी, कलाई, नाक, आँख, जीभ, ठोड़ी, खाल, बाँह, नस, हड्डी, इंद्रिय, काँख इत्यादि।
2. रत्नों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–मोती, माणिक, पन्ना, हीरा, जवाहर, मूँगा, नीलम, पुखराज, लाल इत्यादि। **अपवाद**–मणि, चुन्नी, लाड़ली इत्यादि।
3. धातुओं के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–ताँबा, लोहा, सोना, सीसा, काँसा, राँगा, पीतल, रूपा, टीन इत्यादि। **अपवाद**–चाँदी।
4. अनाजों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–जौ, गेहूँ, चावल, बाजरा, चना, मटर, तिल इत्यादि। **अपवाद**–मकई, जुआर, मूँग, खेसारी इत्यादि।
5. पेड़ों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–पीपल, बड़, देवदारु, चीड़, आम, शीशम, सागौन, कटहल, अमरूद, शरीफा, नींबू, अशोक, तमाल, सेब, अखरोट इत्यादि। **अपवाद**–लीची, नाशपाती, नारंगी, खिरनी इत्यादि।
6. द्रव्य पदार्थों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे–पानी, घी, तेल, अर्क, शर्बत, इत्र, सिरका, आसव, काढ़ा, रायता इत्यादि। **अपवाद**–चाय, स्याही, शराब।
7. भौगोलिक जल और स्थल आदि अंशों के नाम प्राय: पुल्लिंग होते हैं। जैसे–देश, नगर, रेगिस्तान, द्वीप, पर्वत, समुद्र, सरोवर, पाताल, वायुमंडल, नभोमंडल, प्रांत इत्यादि।

   अपवाद–पृथ्वी, झील, घाटी इत्यादि।

नोट

(ख) अप्राणिवाचक स्त्रीलिंग हिंदी-शब्द

1. नदियों के नाम स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे–गंगा, यमुना, महानदी, गोदावरी, सतलज, रावी, व्यास, झेलम इत्यादि।

   अपवाद–शोण, सिंधु ब्रह्मपुत्र नद हैं, अतः पुल्लिग हैं।

2. नक्षत्रों के नाम स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे–भरणी, अश्विनी, रोहिणी इत्यादि।

   अपवाद–अभिजित, पुष्य आदि।

3. बनिये की दुकान की चीजें स्त्रीलिंग हैं। जैसे–लौंग, इलायची, मिर्च, दालचीनी, चिरौंजी, हल्दी, जावित्री, सुपारी, हींग इत्यादि।

   अपवाद–धनिया, जीरा, गर्ममसाला, नमक, तेजपत्ता, केसर, कपूर इत्यादि।

4. खाने-पीने की चीजें स्त्रीलिंग हैं। जैसे–कचौड़ी, पूरी, खीर, दाल, पकौड़ी, रोटी, चपाती, तरकारी, सब्जी, खिचड़ी इत्यादि।

   अपवाद–पराठा, हलुआ, भात, दही, रायता इत्यादि।

प्रत्ययों के आधार पर तद्‌भव हिंदी शब्दों का लिंग निर्णय

हिंदी के कृदंत और तद्धित-प्रत्ययों में स्त्रीलिंग-पुल्लिग बनानेवाले अलग-अलग प्रत्यय इस प्रकार हैं–

स्त्रीलिंग कृदंत-प्रत्यय–अ, अंत आई, आन, आवट, आस, आहट, ई, औती, आवनी, क, की, त, ती, नी इत्यादि हिंदी कृदंत-प्रत्यय जिन धातु-शब्दों में लगे होते हैं, वे स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे–लूट, चमक, देन, भिड़ंत, लड़ाई, लिखावट, प्यास, घबराहट, हँसी, मनौती, छावनी, बैठक, फुटकी, बचत, गिनती, करनी, भरनी।

द्रष्टव्य–इन स्त्रीलिंग कृदंत-प्रत्ययों में अ, क, और न प्रत्यय कहीं-कहीं पुल्लिग में भी आते हैं और कभी-कभी इनसे बने शब्द उभयलिंग भी होते हैं। जैसे–'सीवन' ('न'-प्रत्ययांत) क्षेत्रभेद से दोनों लिंगों में चलता है। शेष सभी प्रत्यय स्त्रीलिंग हैं।

पुल्लिग कृदंत-प्रत्यय–अक्कड़, आ, आऊ, आक, आकू, आप, आपा, आव, आवना, आवा, इयल, इया, ऊ, एरा, ऐया, ऐत, औता, औना, औवल, क, का, न, वाला, वैया, सार, हा इत्यादि हिंदी कृदंत-प्रत्यय जिन धातु-शब्दों में लगे हैं, वे पुल्लिग होते हैं। जैसे–पियक्कड़, घेरा, तैराक, लड़ाकू, मिलाप, पुजापा, घुमाव, छलावा, लुटेरा, कटैया, लड़ैत, समझौता, खिलौना, बुझौवल, घालक, छिलका, खान-पान, खानेवाला, गवैया।

द्रष्टव्य–(1) क और न कृदंत-प्रत्यय **उभयलिंग** हैं। इन दो प्रत्ययों और स्त्रीलिंग प्रत्ययों को छोड़ शेष सभी पुल्लिग हैं। (2) 'सार' उर्दू का कृदंत-प्रत्यय है, जो हिंदी में फारसी से आया है मगर काफी प्रयुक्त है।

स्त्रीलिंग तद्धित-प्रत्यय–आई, आवट, आस, आहट, इन, एली, औड़ी, औटी, औती, की, टी, ड़ी, त, ती, नी, री, ल, ली इत्यादि हिंदी तद्धित-प्रत्यय जिन शब्दों में लगे होते हैं, वे स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे–भलाई, जमावट, हथेली, टिकली, चमड़ी।

पुल्लिग तद्धित-प्रत्यय–आ, आऊ, आका, आटा, आना, आर, इयल, आल, आड़ी, आरा, आलू, आसा, ईला, उआ, ऊ, एरा, एड़ी, ऐत, एला, ऐला, ओटा, ओट, औड़ा, ओला, का, जा, टा, ड़ा, ता, पना, पन, पा, ला, वंत, वान, वाला, वाँ, वा, सरा, सों, हर, हरा, हा, हारा इत्यादि हिंदी तद्धित प्रत्यय जिन शब्दों में लगे होते हैं वे शब्द पुल्लिग होते हैं। जैसे–धमाका, खर्राटा, पैताना, भिखारी, हत्यारा, मुँहासा, मछुआरा, सँपेरा, गँजेड़ी, डकैत, अधेला, चमोटा, लँगोटा, हथौड़ा, चुपका, दुखड़ा, रायता, कालापन, बुढ़ापा, गाड़ीवान, टोपीवाला, छठा, दूसरा, खंडहर, पीहर, इकहरा, चुड़िहारा।

द्रष्टव्य–1. इया, ई, एर, एल, क तद्धित प्रत्यय उभयलिंग हैं। जैसे–

प्रत्यय	पद	तद्धित पद	
इया	मुख	मुखिया	(पुल्लिग)
	खाट	खटिया (ऊनवाचक)	(स्त्रीलिंग)
ई	डोर	डोरी	(स्त्रीलिंग)
एर	मूँड़	मुँड़ेर	(स्त्रीलिंग)
	अंध	अंधेर	(पुल्लिग)
एल	फूल	फुलेल	(पुल्लिग)
	नाक	नकेल	(स्त्रीलिंग)
क	पंच	पंचक	(पुल्लिग)
	ठंड	ठंडक	(स्त्रीलिंग)

2. विशेषण अपने विशेष्य के लिंग के अनुसार होता है। जैसे–'ल' तद्धित-प्रत्यय संज्ञा-शब्दों में लगने पर उन्हें स्त्रीलिंग कर देता है, मगर विशेषण में–'घाव + ल = घायल'–अपने विशेष्य के अनुसार होगा, अर्थात् विशेष्य स्त्रीलिंग हुआ तो 'घायल' स्त्रीलिंग और पुल्लिग हुआ तो पुल्लिग।
3. 'क' तद्धित प्रत्यय स्त्रीलिंग है, किंतु संख्यावाचक के आगे लगने पर उसे पुल्लिग कर देता है। जैसे–चौक, पंचक, (पुल्लिग) और ठंडक, धमक (स्त्रीलिंग)। 'आन' प्रत्यय भाववाचक होने पर शब्द को स्त्रीलिंग करता है, किंतु विशेषण में विशेष्य के अनुसार। जैसे–लंबा + आन = लंबान (स्त्रीलिंग)।
4. अधिकतर भाववाचक और ऊनवाचक प्रत्यय स्त्रीलिंग होते हैं।

उर्दू-शब्दों का लिंग निर्णय

उर्दू से होते हुए हिंदी में अरबी-फारसी के बहुत-से शब्द आये हैं, जिनका व्यवहार हम प्रतिदिन करते हैं। इन शब्दों का लिंगभेद निम्नलिखित नियमों के अनुसार किया जाता है–

पुल्लिग उर्दू शब्द

1. जिनके अंत में 'आब' हो, वे पुल्लिग हैं। जैसे–गुलाब, जुलाब, हिसाब, जवाब, कबाब।

   अपवाद–शराब, मिहराब, किताब, ताब, किमखाब इत्यादि
2. जिनके अंत में 'आर' या 'आन' लगा हो। जैसे–बाजार, इकरार, इश्तहार, इनकार, अहसान, मकान, सामान, इम्तहान इत्यादि।

   अपवाद–दुकान, सरकार, तकरार इत्यादि।
3. आकारांत शब्द पुल्लिग हैं। जैसे–परदा, गुस्सा, किस्सा, रास्ता, चश्मा, तमगा। (मूलतः ये शब्द विसर्गात्मक हकारांत उच्चारण के हैं। जैसे–परदः, तमगः। किंतु, हिंदी में ये 'परदा', 'तमगा' के रूप में आकारांत ही उच्चरित होते हैं।)

   अपवाद–दफा।

स्त्रीलिंग उर्दू शब्द

1. ईकारांत भाववाचक संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–गरीबी, गरमी, सरदी, बीमारी, चालाकी, तैयारी, नवाबी इत्यादि।
2. शकारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–नालिश, कोशिश, लाश, तलाश, वारिश, मालिश इत्यादि।

   अपवाद–ताश, होश आदि।

नोट

3. तकारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–दौलत, कसरत, अदालत, इजाजत, कीमत, मुलाकात इत्यादि।
   अपवाद–शरबत, दस्तखत, बंदोबस्त, वक्त, तख्त, दरख्त इत्यादि।
4. आकारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–हवा, दवा, सजा, दुनिया, दगा इत्यादि।
   अपवाद–मजा इत्यादि।
5. हकारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–सुबह, तरह, राह, आह, सलाह, सुलह इत्यादि।
6. 'तफईल' वजन की संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–तसवीर, तामील, जागीर, तहसील इत्यादि।

अंग्रेजी शब्दों का लिंग निर्णय

विदेशी शब्दों में उर्दू (फारसी और अरबी)–शब्दों के बाद अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी हिंदी में कम नहीं होता। जहाँ तक अंग्रेजी शब्दों के लिंग निर्णय का प्रश्न है, मेरी समझ से इसमें कोई विशेष कठिनाई नहीं है; क्योंकि हिंदी में अधिकतर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग पुल्लिग में होता है। इस निष्कर्ष की पुष्टि नीचे दी गयी शब्दसूची से हो जाती है। अत:, इन शब्दों के तथाकथित 'मनमाने प्रयोग' बहुत अधिक नहीं हुए हैं। मेरा मत है कि इन शब्दों के लिंग निर्णय में रूप के आधार पर **अकारांत, आकारांत और ओकारांत को पुल्लिग और ईकारांत को स्त्रीलिंग समझना चाहिए।** फिर भी, इसके कुछ अपवाद तो हैं ही। अंग्रेजी के 'पुलिस' (Police) शब्द के स्त्रीलिंग होने पर प्राय: आपत्ति की जाती है। मेरा विचार है कि यह शब्द न तो पुल्लिग है, न स्त्रीलिंग। सच तो यह है कि 'फ्रेंड' (Friend) की तरह उभयलिंग है। अब तो स्त्री भी 'पुलिस' होने लगी है। ऐसी अवस्था में जहाँ पुरुष पुलिस का काम करता हो, वहाँ 'पुलिस' पुल्लिग में और जहाँ स्त्री पुलिस का काम करेगी, वहाँ उसका व्यवहार स्त्रीलिंग में होना चाहिए। हिंदी में ऐसे शब्दों की कमी नहीं है, जिनका प्रयोग दोनों लिंगों में अर्थभेद के कारण होता है। जैसे–टीका, हार, पीठ इत्यादि। ऐसे शब्दों की सूची आगे दी गयी है।

लिंग निर्णय के साथ हिंदी में प्रयुक्त होनेवाले अंग्रेजी शब्दों की सूची निम्नलिखित है–

अंग्रेजी के पुल्लिग शब्द

अकारांत–ऑर्डर, आयल, ऑपरेशन, इंजिन, इंजीनियर, इंजेक्शन, एडमिशन, एक्सप्रेस, एक्सरे, ओवरटाइम, क्लास, कमीशन, कोट, कोर्ट, कैलेंडर, कॉलेज, कैरम, कॉलर, कॉलबेल, काउंटर, कॉरपोरेशन, कार्बन, कंटर, केस, क्लिनिक, क्लिप, कार्ड, क्रिकेट, गैस, गजट, ग्लास, चेन, चॉकलेट, चार्टर, टॉर्च, टायर, ट्यूब, टाउनहॉल, टेलिफोन, टाइम, टाइमटेबल, टी-कप, ट्रांजिस्टर, टेलिग्राम, ट्रैक्टर टेंडर, टैक्स, टूथपाउडर, टिकट, डिवीजन, डांस, ड्राइंग-रूम, नोट, नंबर, नेकलेस, थर्मस, पार्क, पोस्ट, पोस्टर, पिंगपौंग, पेन, पासपोर्ट, पार्लियामेंट, पेटीकोट, पाउडर, पेंशन, परमिट, प्रमोशन, प्रोविडेंट फंड, पेपर, प्रेस, प्लास्टर, प्लग, प्लेग, प्लेट, पार्सल, प्लेटफार्म, फुटपाथ, फुटबॉल, फार्म, फ्रॉक, फर्म, फैन, फ्रेम, फुलपैंट, फ्लोर, फैशन, बोर्ड, बैडमिंटन, बॉर्डर, बाथरूम, बुशर्ट, बॉक्स, बिल, बोनस, ब्रॉडकास्ट, बजट, बांड, बोल्डर, ब्रश, ब्रेक, बैंक, बल्ब, बम, मैच, मेल, मीटर, मनीआर्डर, रोड, रॉकेट, रबर, रूल, राशन, रिवेट, रिकार्ड, रिबन, लैंप, लौंगक्लॉथ, लेजर, लीज, लाइसेंस, वाउचर, वार्ड, स्टोर, स्टेशनर, स्कूल, स्टोव, स्टेज, स्लीपर, स्टील, स्विच, स्टैंडर्ड, सिगनल, सेक्रेटेरियट, सैलून, हॉल, होल्डॉल, हैंगर, हॉस्पिटल, हेयर, ऑयल, हैंडिल, लाइट, लेक्चर, लेटर।

आकारांत–कोटा, कैमरा, वीसा, सिनेमा, ड्रामा, प्रोपगैंडा, कॉलरा, फाइलेरिया, मलेरिया, कारवाँ।

ओकारांत–रेडिओ, स्टुडिओ, फोटो, मोटो, वीटो, स्नो।

अंग्रेजी के स्त्रीलिंग शब्द

ईकारांत–एसेंबली, कंपनी, केतली, कॉपी, गैलरी, डायरी, डिग्री, टाई, ट्रेजेडी, ट्रेजरी, म्युनिसिपैलिटी, यूनिवर्सिटी, बार्ली, पार्टी, लैबोरेटरी।

नोट

हिंदी के उभयलिंगी शब्द

हिंदी के कुछ ऐसे अनेकार्थी शब्द प्रचलित हैं, जो एक अर्थ में पुल्लिग और दूसरे अर्थ में स्त्रीलिंग होते हैं। ऐसे शब्द 'उभयलिंगी' कहलाते हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

शब्द		अर्थ	वाक्य
कल (हिंदी पुं.)	–	आगामी दिन	तुम्हारा कल कब आयेगा?
(हि. स्त्री.)	–	चैन, आराम	रोगी को अभी कल पड़ी है।
टीका (हिंदी पुं.)	–	तिलक भेंट	कल टीका लगेगा।
(संस्कृत स्त्री.)	–	टिप्पणी अर्थ	आपकी टीका अच्छी है।
पीठ (सं. पुं.)	–	पीढ़ा, स्थान	यह विद्या का पीठ है।
(हि स्त्री.)	–	पृष्ठभाग	हमारी पीठ में दर्द है।
कोटि (पुं.)	–	करोड़	मेरा चार कोटि लग चुका है।
(स्त्री.)	–	श्रेणी	मनुष्य की अनेक कोटियाँ हैं।
यति (पुं.)	–	संन्यासी	कुंभ के मेले में यतियों की भीड़ है।
(स्त्री.)	–	विराम	यहाँ यति लगनी चाहिए। (छंद का ठहराव)
विधि (पुं.)	–	ब्रह्मा	विधि अवश्य न्याय करेगा।
(स्त्री.)	–	प्रणाली, ढंग	काम करने की विधि अच्छी है।
बाट (पुं.)	–	बटखरा	तुम्हारा बाट ठीक नहीं।
(स्त्री.)	–	मार्ग, इंतजार	वह तुम्हारी बाट जोहता रहा।
शान (हि. सं. पुं.)	–	हथियार-औजार तेज करने का पत्थर	मैं तुम्हारे शान का उपयोग करूँगा।
(अरबी स्त्री.)	–	ठाट-बाट, प्रभुत्व	तुम्हारी शान के क्या कहने!
शाल (हि. सं. पुं.)	–	वृक्षविशेष	यह शाल बहुत पुराना है।
(फारसी स्त्री.)	–	दुशाला	उसकी शाल कीमती है।

लिंग निर्णय के कुछ सरल सूत्र

अप्राणिवाचक संज्ञाओं के लिंगभेद में हिंदी के सामान्य पाठकों को कठिनाई होती है। हिंदी के वैयाकरणों ने अब तक जो भी नियम बताये हैं, वे काफी उलझन पैदा करते हैं। पं. गुरु ने लिंगभेद के लगभग चालीस नियम बताये हैं। इनसे लिंग की कठिनाई दूर नहीं होती। नियमों के अपवाद कभी-कभी उनके उदाहरण से कहीं अधिक हैं। हमें कुछ ऐसे सरल सूत्रों की आवश्यकता है, जो तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशज–सभी प्रकार की संज्ञाओं पर समानरूप से लागू हो सकें। यहाँ कुछ सूत्रों का उल्लेख किया जाता है। प्रयोग करके देखें कि ये सूत्र कहाँ तक उपयोगी और वैज्ञानिक हैं।

1. हिंदी ने संज्ञाओं के लिंगभेद में संस्कृत की लिंग-व्यवस्था का काफी हद तक अनुसरण किया है। हिंदी तद्भवों पर संस्कृत के तत्समों का सीधा प्रभाव है। तत्सम यदि पुल्लिग अथवा नपुंसक है, तो उसका तद्भव पुल्लिग ही होगा। इस प्रकार, संस्कृत का ज्ञान रखने वालों को हिंदी-तद्भव के लिंग निर्णय में विशेष कठिनाई नहीं होगी। सूत्र यह है कि ***तद्भव चाहे अकारांत हों या आकारांत, उनके तत्सम यदि अकारांत हैं, तो ऐसे शब्द पुल्लिग होंगे।* जैसे–**

नोट

	तद्भव	–	तत्सम		तद्भव	–	तत्सम
	(पुल्लिग)	–	(पुल्लिग)		(पुल्लिग)	–	(पुल्लिग)
अकारांत–	आम	–	आम्र	**आकारांत –**	कंधा	–	स्कंध
	हाथ	–	हस्त		कोठा	–	कोष्ठ
	कान	–	कर्ण		पारा	–	पारद
	दूध	–	दुग्ध		कुआँ	–	कूप
	काठ	–	काष्ठ		पिंजड़ा	–	पिंजर
					करेला	–	कारवेल

2. तद्भव यदि अकारांत हों और उनके तत्सम आकारांत हों, तो ऐसे शब्द स्त्रीलिंग होंगे। दूसरे शब्दों में, तत्सम यदि स्त्रीलिंग हैं, तो उनके विकृत रूप तद्भव भी स्त्रीलिंग होंगे। जैसे–

	तत्सम	–	तद्भव		तत्सम	–	तद्भव
	(स्त्रीलिंग)	–	(स्त्रीलिंग)		(स्त्रीलिंग)	–	(स्त्रीलिंग)
आकारांत–	संध्या	–	साँझ	**आकारांत –**	शय्या	–	सेज
	नासिका	–	नाक		शिला	–	सिल
	भिक्षा	–	भीख		जिह्वा	–	जीभ

3. यदि तत्सम और तद्भव दोनों अकारांत हैं, तो दोनों पुल्लिग होंगे। जैसे–

तत्सम	–	तद्भव	तत्सम	–	तद्भव
(पुल्लिग)	–	(पुल्लिग)	(पुल्लिग)	–	(पुल्लिग)
ओष्ठ	–	ओठ	पक्ष	–	पंख
कर्पूर	–	कपूर	वाष्प	–	भाफ
तत्सम	**–**	**तद्भव**	**तत्सम**	**–**	**तद्भव**
आम्र	–	आम	मयूर	–	मोर
निंब	–	नीम	सूत्र	–	सूत
प्रस्तर	–	पत्थर	ज्येष्ठ	–	जेठ

4. तत्सम ऊकारांत और उकारांत शब्द पुल्लिग होते हैं। जैसे–

ऊकारांत–प्रसू, भ्रू।

उकारांत–अश्रु, जंतु, राहु, केतु, तालु, त्रिशंकु, बंधु, मेरु।

इसी तरह, उकारांत और ऊकारांत तद्भव पुल्लिग होते हैं। जैसे–

जनेऊ, डाकू, पिल्लू, चुल्लू, घुँघरू, आँसू, गेहूँ।

5. जिस अकारांत अथवा आकारांत संज्ञा का बहुवचन बनाने में कोई विकार नहीं होता, वह पुल्लिग और जिस संज्ञा का बहुवचन बनाने में विकार (एँ, याँ) होता हो, वह स्त्रीलिंग है। यह नियम सभी अप्राणिवाचक तत्सम तथा तद्भव संज्ञाओं पर लागू होता है। जैसे–

राम के चार **भवन** हैं।–पुल्लिग (अविकृत)

राम की चार **इमारतें** हैं।–स्त्रीलिंग (विकृत)

राम की बातें हुईं।–स्त्रीलिंग (विकृत)

राम के **वचन** सुने हैं।–पुल्लिग (अविकृत)

श्याम के चार **पुत्र** हैं।–पुल्लिग (अविकृत)

मैंने कोशिशें कीं।–स्त्रीलिंग (विकृत)

कमरे में चार **खिड़कियाँ** हैं। स्त्रीलिंग (विकृत)

यह एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है। इसके परीक्षण से हमारी लिंग-संबंधी समस्या की कठिनाई दूर हो सकती है।

आकारांत संज्ञाएँ

कामना–कामनाएँ, इच्छा–इच्छाएँ, दिशा–दिशाएँ, वार्ता–वार्ताएँ, टीका–टीकाएँ, कविता–कविताएँ, भाषा–भाषाएँ, परीक्षा–परीक्षाएँ इत्यादि।

6. आकारांत भाववाचक संज्ञाएँ स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–माया, लज्जा, दया, कृपा, छाया, करुणा, आभा, क्षमा इत्यादि।
7. यदि बहुवचन बनाने पर संज्ञाओं का अंत्य 'आ', 'ए' हो जाए, तो ये संज्ञाएँ पुल्लिंग होती हैं। जैसे–ताला–ताले, पहिया–पहिये, कपड़ा–कपड़े, गला–गले, छाता–छाते, जूता–जूते, कुत्ता–कुत्ते इत्यादि।
8. द्रव्यवाचक संज्ञाएँ पुल्लिंग होती हैं। जैसे–दही, मोती, पानी इत्यादि।
9. क्रियार्थक संज्ञाएँ पुल्लिंग होती हैं। जिस शब्द के अंत में 'ना' लगा हो, वे पुल्लिंग होते हैं। जैसे–लिखना, पढ़ना, टहलना, गिरना, उठाना इत्यादि।
10. द्वंद्व समास के शब्द पुल्लिंग होते हैं। जैसे–सीता-राम, राधा-कृष्ण, शिव-पार्वती, दाल-भात, लोटा-डोरी, नर-नारी, राजा-रानी, माँ-बाप इत्यादि।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के नियम और प्रत्यय

हिंदी-स्त्रीप्रत्यय

निम्नलिखित सामान्य नियम द्रष्टव्य हैं–

1. अकारांत तथा आकारांत पुल्लिंग शब्दों को **ईकारांत कर देने से वे** स्त्रीलिंग हो जाते हैं। जैसे–

आकारांत शब्द

लड़का–लड़की	गधा–गधी	नाना–नानी	साला–साली
गूँगा–गूँगी	नाला–नाली	मोटा–मोटी	काला–काली
देव–देवी	पुत्र–पुत्री	गोप–गोपी	मेढक–मेढकी
नर–नारी	हिरन–हिरनी	बंदर–बंदरी	ब्राह्मण–ब्राह्मणी

2. 'आ' या 'वा' प्रत्ययांत पुल्लिंग शब्दों में 'आ' या 'वा' की जगह **इया** लगाने से वे स्त्रीलिंग बनते हैं। जैसे–

कुत्ता–कुतिया	बूढ़ा–बुढ़िया	बाछा–बछिया

3. व्यवसायबोधक, जातिबोधक तथा उपनामवाचक शब्दों के अंतिम स्वर का लोप कर उनमें कहीं **इन** और कहीं **आइन** प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग बनाया जाता हैं। जैसे–

इन		**आइन**	
माली–मालिन	कुँजड़ा–कुँजड़िन	चौबे–चौबाइन	हलवाई–हलवाइन
धोबी–धोबिन	बाघ–बाघिन	लाला–ललाइन	बनिया–बनियाइन
तेली–तेलिन	साँप–साँपिन	पंडा–पंडाइन	मिसिर–मिसिराइन

4. कुछ उपनामवाची शब्द ऐसे भी हैं, जिनमें **आनी** प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग बनाया जाता है। जैसे–

ठाकुर–ठकुरानी	चौधरी–चौधरानी	जेठ–जेठानी	सेठ–सेठानी
पंडित–पंडितानी	देवर–देवरानी	मेहतर–मेहतरानी	खत्री–खत्रानी

5. जाति या भाव बताने वाली संज्ञाओं का पुल्लिंग से स्त्रीलिंग करने में यदि शब्द का अन्य स्वर दीर्घ है, तो उसे ह्रस्व करते हुए नी प्रत्यय का भी प्रयोग होता है। जैसे–

स्यार–स्यारनी	हिंदू–हिंदुनी	ऊँट–ऊँटनी	हाथी–हथिनी

नोट

6. कुछ शब्द स्वतंत्र रूप से स्त्री-पुरुष के जोड़े होते हैं। ये स्वतंत्र रूप से स्त्रीलिंग या पुल्लिग शब्द होते हैं। जैसे–

माँ–बाप	राजा–रानी	गाय–बैल	साहब–मेम
मर्द–औरत	भाई–बहन	वर–वधू	माता–पिता
पुत्र–कन्या	पुरुष–स्त्री	बेटी–दामाद	बेटा–पुतोहू

7. संस्कृत के 'वान्' और 'मान्' प्रत्ययांत विशेषण शब्दों में 'वान्' तथा 'मान्' को क्रमशः **वती** और **मती** कर देने से स्त्रीलिंग बन जाता है। जैसे–

बुद्धिमान्–बुद्धिमती	आयुष्मान्–आयुष्मती
पुत्रवान–पुत्रवती	बलवान–बलवती
श्रीमान्–श्रीमती	भगवान्–भगवती
भाग्यवान्–भाग्यवती	धनवान्–धनवती

8. संस्कृत के बहुत-से अकारांत विशेषण शब्दों के अंत में आ लगा देने से स्त्रीलिंग हो जाते हैं। जैसे–

तनुज–तनुजा	प्रिय–प्रिया	कांत–कांता	अबल–अबला
चंचल–चंचला	अनुज–अनुजा	प्रियतम–प्रियतमा	पंडित–पंडिता
आत्मज–आत्मजा	पूज्य–पूज्या	तनय–तनया	श्याम–श्यामा
सुत–सुता	पालित–पालिता		पीत–पीता

9. जिन पुल्लिग शब्दों के अंत में 'अक' होता है, उनमें 'अक' के स्थान पर **इका** कर देने से वे शब्द स्त्रीलिंग बन जाते हैं। जैसे–

सेवक–सेविका	बालक–बालिका	भक्षक–भक्षिका	नायक–नायिका
पालक–पालिका	संरक्षक–संरक्षिका	लेखक–लेखिका	पाठक–पाठिका

10. संस्कृत की अकारांत संज्ञाएँ पुल्लिग रूप में आकारांत कर देने और स्त्रीलिंग रूप में ईकारांत कर देने से पुल्लिग-स्त्रीलिंग होती हैं। जैसे–

शब्द	**पुल्लिग रूप**	**स्त्रीलिंग रूप**
कर्तृ	कर्ता	कर्त्री
धातृ	धाता	धात्री
दातृ	दाता	दात्री
कवयितृ	कवयिता	कवयित्री
नेतृ	नेता	नेत्री

हिंदी कृदंत-तद्धित-शब्दों से स्त्रीप्रत्यय

11. कृदंत-तद्धित-प्रत्ययांत पुल्लिग शब्दों को स्त्रीलिंग बनाने के लिए 'ई', 'इन', 'नी' इन तीन स्त्रीप्रत्ययों का ही अधिक प्रयोग होता है। 'आनी' और 'आइन' का प्रयोग संज्ञा-शब्दों को ही पुल्लिग से स्त्रीलिंग बनाने में अधिक होता है, तद्धितांत और कृदंत पुल्लिग को स्त्रीलिंग बनाने में बहुत ही कम। जैसे–

स्त्रीप्रत्यय	**धातु या शब्द**	**कृत्-तद्धित-प्रत्यय**	**कृदंत-तद्धितांत-रूप**	**स्त्रीप्रत्यय-रूप**
ई–	घटना	आ (कृत्)	घट	घटी
	फेरना	आ (कृत्)	फेरा	फेरी
	सुहाना	आवना (कृत्)	सुहावना	सुहावनी

स्त्रीप्रत्यय	धातु या शब्द	कृत्-तद्धित-प्रत्यय	कृदंत-तद्धितांत-रूप	स्त्रीप्रत्यय-रूप
	चुकाना	औता (कृत्)	चुकौता	चुकौती
	ढलना	वाँ (कृत्)	ढलवाँ	ढलवीं
	आधा	एला (कृत्)	अधेला	अधेली
	बिल्ली	औटा (कृत्)	बिलौटा	बिलोटी
	चाम	ओटा (कृत्)	चमोटा	चमोटी
	लंग	ओट (कृत्)	लँगोट	लँगोटी
ई–	चोर	टा (तद्धित)	चोट्टा	चोट्टी
	चाम	ड़ा (तद्धित)	चमड़ा	चमड़ी
	टोपी	वाला (तद्धित)	टोपीवाला	टोपीवाली
	एक	हरा (तद्धित)	एकहरा	एकहरी
इन–	पीना	अक्कड़ (कृत्)	पियक्कड़	पियक्कड़िन
	तैरना	आक (कृत्)	तैराक	तैराकिन
	लड़ना	ऐत (कृत्)	लड़ैत	लड़ैतिन
	हँसना	ओड़ (कृत्)	हँसोड़	हँसोड़िन
	जानना	हार (कृत्)	जाननहार	जाननहारिन
	सोना	आर (तद्धित)	सुनार	सुनारिन
	लोहा	आर (तद्धित)	लोहार	लोहारिन
	खेल	आड़ी (तद्धित)	खिलाड़ी	खिलाड़िन
	हत्या	आरा (तद्धित)	हत्यारा	हत्यारिन
	माछ	उआ (तद्धित)	मछुआ	मछुइन
	साँप	एरा (तद्धित)	सँपेरा	सँपेरिन
	गाँजा	एड़ी (तद्धित)	गँजेड़ी	गँजेड़िन
नी–	घटना	अ (कृत्)	घट	घटनी
	भागना	ओड़ा (कृत्)	भगोड़ा	भगोड़नी
	चूड़ी	हारा (कृत्)	चूड़िहारा	चुड़िहारनी
आइन–	बूझना	अक्कड़ (कृत्)	बुझक्कड़	बुझक्कड़ाइन
	धुनना	इया (कृत्)	धुनिया	धुनियाइन

नोट

लिंगकोश

पुल्लिग शब्द (Masculine)

अ– अरमान, अनार, अदरख, अपराध, अनाज, अनुसार, अनुसरण, अबरख, अबीर, अन्वय, अमृत, अपरिग्रह, अपहरण, अनुदान, अनुमोदन, अनुसंधान, अपयश, अक्षत, अणु, अकाल, अक्षर, अनुच्छेद, अखरोट।

आ– आलस्य, आचार, आईना, आचरण, आखेट, आभार, आलू, आवेश, आविर्भाव, आश्रम, आश्वासन, आसन, आषाढ़, आस्वादन, आहार, आसव, आशीर्वाद, आकाश, आयोग, आटा,

नोट

आमंत्रण, आक्रमण, आरोप, आयात, आयोजन, आरोपण, आर्त्तनाद, आलोक, आवागमन, आविष्कार।

अं, अँ, आँ– अंधड़ अंगूर, अंक, अंबार, अंकुश, अंगार, अंतरीप, अंतरिक्ष, अंतर्धान, अंतस्तल, अंबुज, अंश, अंजन, अंचल, अंकन, अंगुल, अंकगणित, अंत:पुर, अंत:करण, अँधेरा, अंधेर, अंबर, अंशु, आँसू।

ओ, औ– ओठ, ओल, ओला, औजार, औसत।

इ, ई– इजलास, इंद्रासन, इकतारा, इलाका, इजहार, इनाम, इलाज, इस्तीफा, इस्पात, इस्तेमाल, इंतजार, इंसाफ, इलजाम, इत्र, ईंधन।

उ, ऊ– उद्धार, उतार, उपवास, ऊफान, उबटन, उबाल, उलटफेर, उपादान, उपकरण, उत्पादन, उत्कर्ष, उच्छेदन, उत्तरदायित्व, उत्तरीय, उत्ताप, उत्पीड़न, उत्साह, उत्सर्ग, उदय, उद्गार, उद्घाटन, उद्दीपन, उद्धरण, उद्बोधन, उद्यम, उद्वेग, उन्माद, उन्मूलन, उपकार, उपक्रम, उपग्रह, उपचार, उपनयन, उपसर्ग, उपहास, उपाख्यान, उपालंभ, उल्लंघन, उल्कापात, उल्लास, उल्लू, उल्लेख, ऊख, ऊन, ऊखल, ऊधम।

क– कंठ, कपूर, कर्म, कंबल, कलंक, कपाट, कछार, कटहल, कफन, कटोरा, कड़ाह, कलह, कचालू, कक्ष, कच्छा, कछुआ, कटिबंध, कत्था, कदंब, कनस्तर, कफ, कबाब, कवित्त, कब्ज, करकट, करतल, कर्णफूल, करार, करेला, करौंदा, कलाप, कलेवर, कल्प, कल्याण, कल्लोल, कवच।

का– काग, काजल, काठ, कार्तिक, काँच (शीशा), कानन, कार्य, कायाकल्प।

कि, की– किन्नर, किमाम, किसलय, कीर्तन, कीचड़।

कु, कू– कुआँ, कुटीर, कुतूहल, कुमुद, कुल, कुहासा, कुशल, कुष्ठ, कूड़ा।

के, को, कौ– केवड़ा, केंकड़ा, केराव, केशर, केश, कोटर, कोल्हू, कोढ़, कोदो, कीप, कोष (श), कोहिनूर, कोष्ठ, कोट, कौतूहल, कौर, कौआ, कौशल।

ख– खंडहर, खजूर, खटका, खटमल, खद्योत, खपड़ा, खरगोश, खरबूजा, खराद, (यंत्र), खर्राटा, खलिहान, खाँचा, खाका, खान, (पठान), खान-पान, खार, खिंचाव, खीर-मोहन, खीरा, खुमार, खुदरा, खुर, खुलासा, खूँट, (छोर), खूँटा, खेमा, खेल, खेलवाड़, खोंचा, खोआ।

ग– गंजा, गँड़ासा, गंधक, गंधराज, गगन, गज, गजट, गजब, गठबंधन, गढ़, गदर, गद्य, गबन, गमन, गरुड़, गर्जन, गर्व, गर्भाशय, गलसुआ, गलियारा, गलीचा, गश, गाँजा, गार्हस्थ्य, गिरजा, गिरगिट, गड्ढा, गुणगान, गोदाम, गुनाह, गुंजार, गुलाब, गुलाम, गिलास, गूदा, गोंद, गेंद, गोत्र, गोधन, गोलोक, गौरव, ग्रह, ग्रीष्म, ग्रहण, ग्रास, गिलाफ, गिद्ध।

घ– घट, घटाटोप, घटाव, घड़ा, घड़ियाल, घन, घराना, घपला, घर्षण, घाघरा, घाघ, घाट, घाटा, घात, (चोट), घाव, घी, घुँघरू, घुटना, घुन, घुमाव, घूँघट, घूँट, घृत, घेघा, घेर, घोंघा, घोटाला, घोल।

च– चंगुल, चंडमुंड, चंदन, चंद्रमा, चंदनहार, चँदोवा, चंद्रबिंदु, चंद्रहार, चंद्रोदय, चकमा, चकला, चकवा, चकोर, चक्कर, चक्र, चक्रव्यूह, चटावन, चढ़ाव, चढ़ावा, चप्पल, चमगादड़, चमत्कार, चमर, चम्मच, चंपक, चयन, चर्खा, चरागाह, चर्स, चलचित्र, चलन, चालान, चषक, चाँटा, चाँद, चाक, चातक, चातुर्य, चाप (धनुष), चाबुक, चाम, चरण, चाकू, चाव, चिक, (बूचर), चिंतन, चित्रकूट, चित्रपट, चिरकुट, चिराग, चीता, चीत्कार, चीर, चीलर, चीवर, चुंबक, चुंबन, चुनाव, चुल्लू, चैन, चोकर, चौक, चौपाल।

छ– छंद, छछूँदर, छज्जा, छटपट, छत्ता, छत्र, छप्पर, छलछंद, छलावा, छाजन, (आच्छादन), छार, छिद्र, छिपाव, छींटा, छेद, छोआ, छोर।

ज– जख्म, जमघट, जहाज, जंजाल, जन्तु, जड़ाव, जत्था, जनपद, जनवासा, जप, जमाव, जलधर, जलपथ, जलपान, जाँता, जाकड़, जाम, जाप, जासूस, जिक्र, जिगर, जिन, जिहाद, जी, जीरा, जीव, ज्वारभाटा, जुआ, जुकाम, जुर्म, जुलाब, जुल्म, जुलूस, जूड़ा, जेठ, जेल, जौ, जैतून, जोश, ज्वर।

झ– झंझा, झंझावात, झकझोर, झकोर, झाड़, (झाड़ी), झंखाड़, झाल, (बाजा), झींगुर, झुंड, झुकाव, झुरमुट, झूमर।

ट– टंटा, टमटम, टकुआ, टाट, टापू, टिकट, टिकाव, टिफिन, टीन, टैक्स।

ठ– ठप्पा, ठर्रा, ठहराव, ठाटबाट, ठीकरा, ठूँठ, ठौर।

ड– डंक, डंठल, डंड, डंडा, डग, डब्बा, डमरू, डर, डीह, डोल।

ढ– ढंग, ढव, ढोल, ढेर, ढोंग।

त– तंतु, तंतुवाय, तंत्र, तंबाकू, तंबूरा, तकिया, तट, तत्व, तन, तनाव, तप, तपाक, तबला, तमंचा, तम, तरकश, तरबूज, तरस, तराजू, तर्ज, तर्पण, तल, तसर, तांबूल, तांडव, ताक, (आला), ताज, ताड़, तात, तानपूरा, ताप, तार, ताल, तालाब, ताश, तिनका, त्रिफला, तिल, तिलक, तिलकुट, तीतर, तीर, तीर्थ, तूत, तेजाब, तेल, तेज, तेवर, तोड़-जोड़, तोड़-फोड़, तौक, तौर, तौल, तौलिया, त्राण, त्रास, त्रिशंकु।

थ– थन, थपेड़ा, थप्पड़, थल, थाक, थूक, थोक।

द– दंगल, दंगा, दंड, दंभ, दंश, दबाव, दम, दमन, दर्जा, दर्प, दर्पण, दल, दलन, दफ्तर, दलबल, दलाल, दरबार, दस्त, दस्तखत, दस्यु, दहेज, दाँत, दालान, दाग, दाद, (चर्मरोग–ना. प्र. शब्दसागर), दानपत्र, दानव, दाम, दामन, दाय, दही, दास, दाह, दिखाया, दिन, दिवाला, दिमाग, दियारा, दिल, दीप, दीपक, दीया, दुकूल, दुःख, दुराव, दुर्ग, दुलार, दुशाला, दूतावास, दून, (घाटी, तराई), दूध, दृग, दृश्य, देशाटन, देहात, देश, दैत्य, दोष, दौर, दौरा, दौरान, द्वंद्व, द्वार, द्वीप, द्वेष।

ध– धंधा, धक्का, धड़, धन, धनुष, धर्म, धान, धाम, धैर्य, ध्यान, धनिया।

न– नगद, नक्षत्र, नख, नग, नजराना, ननिहाल, नभ, नगर, नमक, नसीब, नरक, नरमेध, नल, निकास, नाखून, निचोड़, निबाह, नियम, निर्झर, निर्वाण, निगम, निवास, निवेदन, निशान, निष्कर्ष, नीबू, नीर, नीड़, नीलम, नीलाम, नून, नूपुर, नृत्य, नेत्र, नेम, नैहर, नैवेद्य, न्याय, न्यास।

प– पंख, पंचनद, पंचरत्न, पंथ, पंछी, पकवान, पक्ष, पक्षपात, पक्षी, पग, पगहा, पट, पड़ाव, पटसन, पड़ोस, पतंग, पनघट, पतलून, पतन, पत्थर, पत्र, पथ, पथ्य, पदार्थ, पदार्पण, पनीर, पन्ना, पपीहा, पयोधि, पर्दा, परमाणु, परलोक, पराग, परिचय, परिवहन, परिणाम, परिधान, परिवर्तन, परिवर्धन, परिवार, परिहास, पर्यटन, पर्व, पलड़ा, पलास, पल्लव, पहर, पहलू, पहिया, पाक, पाखंड, पाचन, पाट, पाताल, पादप, पापड़, पाला, पिल्लू, पित्त, पीतांबर, पीपल, पुलाव, पीहर, पुखराज, पुआल, पुराण, पुर, पुरस्कार, पुल, पुलक, पुलिंदा, पुलाव, पुस्तकालय, पूजन, पूर्व, पोत, पोल, पोषण, पौरुष, पाजामा, प्याज, प्रकोप, प्रयोग, प्रणय, प्रतिद्वंद्व, प्रतिफल, प्रतिबंध, प्रतिबिंब, प्रतिशोध, प्रतिवाद, प्रतीक, प्रत्यय, प्रदेश, प्रपंच, प्रभाव, प्रमाद, प्रलाप, प्रलय, प्रसव, प्रसार, प्रस्ताव, प्रातः, प्रारंभ।

फ– फण, फरेब, फर्क, फर्ज, फर्श, फल, फसाद, फाग, फाटक, फानूस, फल, फूल, फेंटा, फेन, फेफड़ा, फेर, फेरा, फोंक।

ब– बंडल, बंदरगाह, बखान, बबूल, बखिया, बचपन, बचाव, बड़प्पन, बरतन, बरताव, बल, बलात्कार, बहलाव, बहाव, बहिष्कार, बटेर, बाँध, बाँस, बाग, बाज, बाजा, बाट, बाजार,

नोट

बादाम, बाल, बाहुल्य, बिछावन, बीज, बिल, बुखार, बूँट, बेंत, बेलन, बेला, बेसन, बोझ, बोल, ब्योरा।

भ– भंडाफोड़, भँवर, भजन, भवन, भत्ता, भरण, भस्म, भाग्य, भार, भाल, भाव, भाषण, भाष्य, भिनसार, भुजंग, भुजपाश, भुट्टा, भूचाल, भुलावा, भूकंप, भूषण, भेदभाव, भेड़िया, भोज, भोर, भौंरा, भ्रमर, भ्रमण।

म– मंच, मंजन, मंडन, मंतव्य, मंत्रिमंडल, मकबरा, मकरंद, मजमा, मजमून, मजा, मजीरा, मटर, मसूर, मठ, मतलब, मद, मद्य, मच्छर, मनसूबा, मनोवेग, मरहम, मरोड़, मवेशी, मलय, मलयगिरि, मलाल, मवाद, महसूल, महुआ, माघ, माजरा, मातम, मिजाज, मील, मुकदमा, मुरब्बा, मुकुट, मूँगा, मृग, मेघ, मेवा, मोक्ष, मोड़, मोती, मोतीचूर, मोम, मोर, मोह, मौन, म्यान।

य– यंत्र, यक्ष्मा, यति, (संन्यासी), यत्न, यम, यश, यातायात।

र– रक्त, रत्न, रबर, रमण, रहम, रहस्य, राग, रासो, रूपा, रेंड, रेत, (वीर्य), रोंगटा, रोग, रोब, रोमांच, रोष, राँगा, रिवाज, रूमाल।

ल– लंगर, लंब, लक्ष्य, लगान, लगाव, लटकन, लट्टू, लटाव, लाघव, लालच, लिहाज, लिबास, लेख, लेप, लोक, लोप, लोभ, लश्कर, लेनदेन, लौंग।

व– वजन, वज्र, वन, वनवास, वर, वरण, वर्जन, वसंत, वहिरंग, वह्नि, वाचन, वात, वाङ्मय, वार, वाष्प, विकल्प, विक्रय, विघटन, वित्त, विमर्श, विलंब, विलास, विलयन, विष, विवाद, विसर्जन, विस्फोट, विहार, वीतराग, वृत्तांत, वृत्त, वेग, वेदांत, वेश, वैभव, वैमनस्य, वैराग्य, वैष्णव, व्यंग्य, व्यंजन, व्यय, व्यवधान, व्याख्यान, व्याधात, व्याज, व्यास, व्यूह।

श– शंख, शक, शतदल, शनि, शब्दवेध, शम, शयन, शर, शल्य, शव, शरबत, शहद, शहतूत, शाप, शिखर, शिल्प, शिविर, शीर्ष, शील, शुक्र, शून्य, शूल, शैशव, शोध, शोक, शौच, शौर्य, श्रम, श्वास

ष– षड्यंत्र, षडानन, षट्कर्म, षष्ठी, षष्ठ, षोडश, षाण्मासिक।

स– संकट, संकलन, संकेत, संकोच, संखिया, संगठन, संगम, संगीन, संघटन, संचय, संचार, संयोग, संतुलन, संदूक, संदेह, संन्यास सर्पक, संबंध, संबल, संयम, संवर्द्धन, संविधान, संस्थान, संहार, सत्तू, सत्र, सत्त्व, सदन, सदावर्त, सफर, समीर, सर, सरकस, सरसिज, सरोवर, सलाम, सवैया, सहन, सहयोग, सहारा, साक्ष्य, साग, साधन, साया, सार, सारस, सिंगार, सिंदूर, सियार, सिर, सिरका, सिल्क, सींग, सीप, सुधांशु, सुमन, सुर, सुराग, सूअर, सूचीपत्र, सूत, सूत्र, सूना, सूद, सूप, सेतु, सेब, सेवन, सोच, सोन, सोना, सोफा, सोम, सोरठा, सोहर (गीत), सौख्य, सौजन्य, सौभाग्य, सौरभ, सौष्ठव, सौहार्द, स्तंभन, स्तर, स्थल, स्पंदन, स्पर्श, स्फोट, स्मारक, स्यापा, स्वत्व, स्वयंवर, स्वरूप, स्वर्ग, स्वर्ण, स्वांग, स्वाद।

ह– हटर, हुंकार, हंस, हज, हक, हठधर्म, हठयोग, हड़कंप, हमला, हरण, हरिण, हल, हवन, हवाला, हार (माला), हाल (समाचार, दशा), हाशिया, हास्य, हित, हिम, हिल्लोल, हीरा, हीला, हुक्म, हुल्लड़, हुलास, हेतु, हेरफेर, हेलमेल, हैजा, होंठ, होटल, होश, ह्रास।

स्त्रीलिंग शब्द (Feminine)

अ– अँगड़ाई, अंतड़ी, अंत्येष्टि, अकड़, अक्ल, अड़चन, अदालत, अदावत, अनबन, अचकन (ना. प्र. शब्दसागर), अप्सरा, अफवाह, अपेक्षा, अपील, अफीम, अभिधा, अभीप्सा, अवज्ञा, अहिंसा, अरहर, अवस्था।

आ– आँच, आँत, आग, आजीविका, आज्ञा, आड़, आत्मा, आत्मजा, आत्महत्या, आदत, आन, आपदा, आफत, आमद, आबहवा, आय, आयु, आराधना, आवाज, आशंका, आस्तीन, आह, आहट, आशीष, आँख।

नोट

इ, ई– इंच, इंद्रिय, इच्छा, इजाजत, इज्जत, इमारत, इला, ईंट, ईद, ईख, ईर्ष्या।

उ, ऊ– उड़ान, उत्कंठा, उथल-पुथल, उधेड़बुन, उपनिषद्, उपासना, उपेक्षा, उमंग, उम्र, उर्दू, (भाषा), उलझन, उल्का, उषा, उमस, ऊब, ऊहा।

ए, ऐ– एकता, ऐंठ, ऐंठन, ऐनक।

ओ, औ– ओट, ओस, औलाद।

क– कक्षा, कटार, कटुता, कड़क, कतरन, कतार, कथा, कद, कदर, कन्या, कब्र, कमर, कमाई, कमान, कमीज, करवट, करुणा, कवायद, कसक, कसम, कसरत, कपास, कसौटी, कस्तूरी, कापा, कालिख, कांग्रेस, काश्त, करतूत, किलक, किस्मत, किशमिश, किस्त (ऋण चुकाने का भाग), कीमत, कील, कुंजी, कुटिया, कुशल (कुशलता), कुल्हाड़ी, कूक, कृपा, कैद, कोख, कोयल, कौम, क्रिया, क्रीड़ा, क्षमा।

ख– खटपट, खटास, खटिया, खड़क, खड़ाऊँ, खनक, खपत, खबर, खरीद, खींच, खरोंच, खाँड़, खाई, खाज, खाट, खातिर, खाद, खाल, खान (खनि), खिजाँ, खिदमत, खोच, खीझ, खीर, खील, खुदाई, खुरमा, खुशामद, खैरात, खोट, खोज, खोह।

ग– गंगा, गंध, गजल, गटपट, गठिया, गड़बड़, गणना, गति, गदा, गनीमत, गफलत, गरज, गर्दन, गरिमा, गोरैया, गर्द, गर्दिश, गाँठ, गाजर, गाज (बिजली), गागर, गाथा, गाद, गिटपिट, गिरफ्त, गिरह, गिलहरी, गीता, गीतिका, गुंजाइश, गुड़िया, गुड्डी, गुफा, गुरुता, गेरु, गुलेल, गूज, गैल, गैस, गोट, गोद, गोपिका, गौ।

घ– घटा, घटिका, घास, घिन, घुड़दौड़, घुड़साल, घूस, घृणा, घोषणा।

च– चमेली, चकई, चटक (चमक-दमक), चट्टान, चपत, चपला, चर्चा, चमक, चहक, चहल-पहल, चाँदी, चाँप, चाट, चादर, चारपाई, चाल, चाह, चाहत, चालढाल, चिकित्सा, चिट, चिमनी, चिलक, चिल्लाहट, चिढ़, चिता, चिंता, चित्रकला, चिनक, चिनगारी, चिप्पी, चिलम, चील, चीख, चींटी, चीनी, चुटिया, चुड़ैल, चुनरी, चुनौती, चुहल, चुहिया, चूक, चें-चें, चेचक, चेतक, चेतना, चेष्टा, चोंच, चोट, चौपड़ चौखट।

छ– छटा, छत, छमछम, छलाँग, छवि, छाँह, छाछ, छानबीन, छाप, छाया, छाल, छींक, छींट, छीछालेदर, छूट, छूत, छेनी, छुआछूत।

ज– जंग, जंजीर, जँभाई, जगह, जटा, जड़, जनता, जमात, जलवायु, जमानत, जमावट, जमीन, जलन, जय, जरा, जरूरत, जाँच, जाँघ, जागीर, जान, जायदाद, जिज्ञासा, जिद, जिरह, जिल्द, जिल्लत, जिह्वा, जीत, जीभ, जूँ, जुगुप्सा, जूठन, जेब, जेवनार, जोंक, जोत, ज्वाला।

झ– झंकार, झंझट, झख, झिझक, झड़प, झनकार, झपक, झपट, झपास, झरझर, झकझक, झलमल, झाड़फूँक, झाड़ (झाड़ने की क्रिया), झाड़, झाँझ, झाँझर, झाँप, झाड़न, झाल, (तितास), झालर, झिड़क, झील, झूम।

ट– टकसाल, टक्कर, टपक, टहल, टाँक, टाँग, टाँय-टाँय, टाप, टाल-मटोल, टिकिया, टिप-टिप, टिप्पणी, टीक, टीपटाप, टीमटाम, टीस, टूट, टेंट, टेंटे, टेक, टेर, टोह, टोक, ट्रेन।

ठ– ठंडक, ठक-ठक, ठनक, ठमक, ठिठक, ठिलिया, ठूँठ, ठेक, ठोकर, ठेस।

ड– डग, डगर, डपट, डाक, डाट, डाँक, डाल, डींग, डीठ, डोर, डिबिया।

ढ– ढोलक।

त– तंद्रा, तकरीर, तकदीर, तकरार, तड़क-भड़क, तड़प, तबीयत, तमन्ना, तरंग, तरकीब, तरफ, तरह, तरावट, तराश, तलब, तलवार, तलाश, तशरीफ, तह, तहजीब, तहसील, तान, ताकझाँक, ताकत, तादाद, ताकीद, तातील, तारीफ, तालीम, तासीर, तिजारत, तीज, तुक, तुला, तोंद, तोबा, तोप, तोल, तोशक, त्योरी, त्रिया।

नोट

थ– थकान, थकावट, थरथर, थलिया, थाप, थाह।

द– दक्षिण, दगा, दतवन, दमक, दरखास्त, दरगाह, दरार, दलदल, दलील, दस्तक, दहाड़, दारू, दहशत, दावत, दिनचर्या, दिव्या, दीक्षा, दीठ्, दीद, दीमक, दीवार, दुआ, दुकान, दुविधा, दुत्कार, दुम, दूरबीन, दुनिया, दुर्दशा, दूर, दूब, देखभाल, देखरेख, देन, देह।

ध– धड़क, धड़कन, धरपकड़, धमक, धरा, धरोहर, धाक, धातु, धाय, धार, धारणा, धुंध, धुन, धूम, धूप (सूर्य-प्रकाश), धूप-छाँह, धौंक, धौंस, ध्वजा।

न– नकल, नस (स्नायु), नकाव, नकेल, नजर, नहर, नजाकत, नजात, नफरत, नफासत, नसीहत, नब्ज, नमाज, नाँद, नाक, निगाह, निद्रा, निराशा, निशा, निष्ठा, नींद, नीयत, नींव, नुमाइश, नोक, नोकझोंक, नौबत, नालिश, नेत्री।

प– पंचायत, पंगत, पकड़, पखावज, पछाड़, पतवार, पटपट, पतझड़, पताका, पत्तल, पनाह, परख, पसंद, परवाह, परत, परात, परिक्रमा, परिषद्, परीक्षा, पलटन, पहचान, पहुँच, पायल, पाँत, पिपासा, पिस्तौल, पुलिस, पुश्त, पुड़िया, पुकार, पूछताछ, पूँछ, पेंसिल, पेंशन, पेचिश, पोशाक, पैदावार, पौध, प्रक्रिया, प्रतिज्ञा, प्रतिभा, प्रतीक्षा, प्रभा।

फ– फजीहत, फटकार, फटकन, फतह, फरियाद, फसल, फाँक, फाँस, फिक्र, फुरसत, फुलिया, फुहार, फूँक, फूट, फीस, फौज।

ब– बंदूक, बकवास, बयार, बख्शीश, बगल, बचत, बदबू, बदौलत, बधाई, बनावट, बरात, बर्दाश्त, बर्फ, बला, बहार, बाँह, बातचीत, बागडोर, बाबत, बरसात, बारिश, बारूद, बाला, बाढ़, बालिका, बिछलन, बुँदिया, बुनावट, बुलबुल, बुलाहट, बूँद, बूझ, बेर (दफा या बार), बैठक, बोतल, बोलचाल, बौखलाहट, बौछार।

भ– भगदड़, भड़क, भनक, भभक, भरमार, भभूत, भर्त्सना, भाँग, भाप, भार्या, भिक्षा, भीख, भीड़, भुजा, भूख, भेंट, भेड़, भैंस, भौंह।

म– मंजिल, मँझधार, मंत्रणा, मंशा, मचक, मचान, मजाल, मज्जा, मखमल, मटक, मणि, मसनद, ममता, मरम्मत, मर्यादा, मलमल, मशाल, मशीन, मस्जिद, महक, मसल, महफिल, महिमा, माँग, माता, मात्रा, माया, माप, माला, मिठास, मिर्च, मिलावट, मीनार, मुद्रा, मुराद, मुलाकात, मुठभेड़, मुसकान, मुसीबत, मुस्कराहट, मुहब्बत, मुद्दत, मुहर, मूँग, मूँछ, मूर्खता, मेखला, मेहनत, मैना, मैल, मौज, मौत, मृत्यु।

य– यंत्रणा, यमुना, यति (छंद में ठहराव का स्थान), याचना, यादगार, यातना, यात्रा, याद, यामा, योजना।

र– रंगत, रकम, रक्षा, रंग, रज (धूलि उभयलिंग), रगड़, रचना, रज्जु, रसद, रफ्तार, रसना, रस्म, रसा (धरती), राका, राख, रामायण, राय, राल, रास, राह, राहत, रियासत, रियायत, रिपोर्ट, रिश्वत, रिमझिम, रीझ, रीढ़, रुकावट, रुनझुन, रूह, रेखा, रेंड़ी, रेणु, रेत (बालू), रेल, रोक, रोकड़, रोर, रौनक, रोकटोक।

ल– लंका, लकीर, लगन, लगाम, लटक, लताड़, लचर, लचक, लज्जा, लट, लड़ाई, लत, लता, लपक, लपट, ललक, ललकार, लहर, लात, लाग, लार, लाज, लालमिर्च, लागत, लानत, लालटेन, लालसा, लाश, लाह, लिप्सा, लियाकत, लीक, लीख, लू, लूट, लोटपोट, लोच, लौ।

व– वकालत, वसीयत, वांछा, वायु, विचारणा, विजय, विडंबना, विदाई, वंद्या, विधवा, विनय, वीप्सा, वेश्या, व्यथा, व्याख्या, विदुषी।

श– शंका, शपथ, शक्कर, शरण, शक्ल, शर्म, शतरंज, शर्त, शराफत, शबनम, शराब, शरारत, शलाका, शमशीर, शहादत, शान, शाखा, शाम, शामत, शिखा, शिकायत, शिरा, शृंखला, शौकत, श्रद्धा।

स– संतान (औलाद), संपदा, संसद्, सँभाल, संवेदना, संस्कृत (भाषा), संस्था, सजा, सजधज, सजावट, सटक, सड़क, सत्ता, सनक, सनद, सभ्यता, समझ, समस्या, सरसों, सरकार, सराय, सलामत, सलतनत, ससुराल, साँझ, साँस, साजिश, सिफारिश, सीक, सीध, सीड़, सीमा, सुगंध, सुध, सुधा, सुरंग, सुलह, सुविधा, सुबह, सूजन, सूर्या (सूर्याणी), सूझ, सूरत, सेज, सेंध, सेना, सेवा, सेहत, सौगंध (कसम), सौगात, सौंफ, स्थापना।

ह– हकीकत, हजामत, हड़प, हड़ताल, हड़बड़, हत्या, हद, हरकत, हवा, हलचल, हाँक, हाजत, हाय, हाट, हालत, हार (पराजय), हाल (हिलना, चक्के पर लोहे का घेरा), हाला, हिंसा, हिकमत, हिचक, हिदायत, हिफाजत, हिमायत, हिम्मत, हींग, हूक, हूर, हूल, हेला, हैसियत, होड़।

1.4 वचन

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के जिस रूप से संख्या का बोध हो, उसे 'वचन' कहते हैं। दूसरे शब्दों में, **शब्दों के संख्याबोधक विकारी रूप का नाम 'वचन' है।** 'वचन' का शाब्दिक अर्थ है–'संख्यावचन'। संख्यावचन को ही संक्षेप में 'वचन' कहते हैं। 'वचन' का अर्थ 'कहना' भी है।

वचन के प्रकार

अंग्रेजी की तरह हिंदी में भी वचन के दो प्रकार हैं–1. एकवचन, और 2. बहुवचन।

1. ***विकारी शब्द में जिस रूप से एक पदार्थ या व्यक्ति का बोध होता है, उसे एकवचन कहते हैं।*** जैसे–नदी, लड़का, घोड़ा, बच्चा इत्यादि।
2. ***विकारी शब्द के जिस रूप से अधिक पदार्थों अथवा व्यक्तियों का बोध होता है, उसे बहुवचन कहते हैं,*** जैसे–नदियाँ, लड़के, घोड़े, बच्चे इत्यादि।

वचन के रूपांतर

वचन के कारण सभी शब्दों–संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया–के रूप विकृत होते हैं। किंतु, यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के रूप मूलतः संज्ञाओं पर ही आश्रित हैं। इसलिए 'वचन' में संज्ञा-शब्दों का रूपांतर होता है।

वचन के अधीन संज्ञा के रूप दो तरह से परिवर्तित होते हैं–(क) विभक्तिरहित और (ख) विभक्तिसहित।

विभक्तिरहित संज्ञाओं के बहुवचन बनाने के नियम

1. पुल्लिग संज्ञा के आकारांत को एकारांत कर देने से बहुवचन बनता है। जैसे–

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लड़का	लड़के	घोड़ा	घोड़े
गधा	गधे	कपड़ा	कपड़े
पहिया	पहिये	बच्चा	बच्चे

अपवाद–किंतु कुछ ऐसी भी पुल्लिग संज्ञाएँ हैं, जिनके रूप दोनों वचनों में एक-से रहते हैं। ये कुछ शब्द संबंधवाचक, संस्कृत के अकारांत और नकारांत हैं। जैसे–मामा, नाना, बाबा, दादा, कर्ता, दाता, पिता (तीनों 'कर्तृ' आदि ऋकारांत); योद्धा, युवा, आत्मा (युवन्-आत्मन् नकारांत); देवता जामाता इत्यादि। उदाहरण–

एकवचन–हरि तुम्हारे **मामा** हैं।	बहुवचन–प्रेम और हरि तुम्हारे मामा हैं।
एकवचन–मैं तुम्हारा **नाना** हूँ।	बहुवचन–श्याम और हरि के नाना आए हैं।
एकवचन–राम एक **योद्धा** है।	बहुवचन–लड़ाई में बड़े-बड़े योद्धा खेत आए।
एकवचन–किशोर एक **दाता** है।	बहुवचन–स्कूल के अनेक दाता हैं।

नोट

2. पुल्लिग आकारांत के सिवा शेष मात्राओं से अंत होनेवाले शब्दों के रूप दोनों वचनों में एक-से रहते हैं। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
बालक पढ़ता है।	बालक पढ़ते हैं।	पति है।	पति हैं।
हाथी आता है।	हाथी आते हैं।	दयालु आया।	दयालु आए।
साधु आया है।	साधु आये हैं।	उल्लू बैठा है।	उल्लू बैठे हैं।

3. आकारांत स्त्रीलिंग एकवचन संज्ञा-शब्दों के अंत में 'एँ' लगाने से बहुवचन बनता है। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
शाखा	शाखाएँ	कामना	कामनाएँ
कथा	कथाएँ	वार्ता	वार्ताएँ
लता	लताएँ	अध्यापिका	अध्यापिकाएँ

4. आकारांत स्त्रीलिंग शब्दों का बहुवचन संज्ञा के अंतिम 'अ' को 'एँ' कर देने से बनता है। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
गाय	गायें	रात	रातें
बात	बातें	सड़क	सड़कें
बहन	बहनें	आदत	आदतें

5. इकारांत या ईकारांत स्त्रीलिंग संज्ञाओं में अंत्य 'ई' को ह्रस्व कर अंतिम वर्ण के बाद 'याँ' जोड़ने, अर्थात् अंतिम 'इ' या 'ई' को 'इयाँ' कर देने से बहुवचन बनता है। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
तिथि	तिथियाँ	नीति	नीतियाँ
रीति	रीतियाँ	नारी	नारियाँ

6. जिन स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'या' आता है, उनमें 'या' के ऊपर चंद्रबिंदु लगाने से बहुवचन बनता है। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
डिबिया	डिबियाँ
चिड़िया	चिड़ियाँ
गुड़िया	गुड़ियाँ

7. अ-आ-इ-ई के अलावा अन्य मात्राओं से अंत होनेवाली स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'एँ' जोड़कर बहुवचन बनाया जाता है। अंतिम स्वर 'ऊ' हुआ, तो उसे ह्रस्व कर 'एँ' जोड़ते हैं। जैसे–बहू–बहुएँ, वस्तु–वस्तुएँ।
8. संज्ञा के पुल्लिग अथवा स्त्रीलिंग रूपों में बहुवचन का बोध प्रायः 'गण', 'वर्ग', 'जन', 'लोग', 'वृंद' इत्यादि लगाकर कराया जाता है। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
पाठक	पाठकगण
स्त्री	स्त्रीजन
नारी	नारिवृंद
अधिकारी	अधिकारीवर्ग
आप	आपलोग

विभक्तिसहित संज्ञाओं के बहुवचन बनाने के नियम

विभक्तियों से युक्त होने पर शब्दों के बहुवचन का रूप बनाने में लिंग के कारण कोई परिवर्तन या व्यवधान नहीं होता। इसके कुछ सामान्य नियम निम्नलिखित हैं–

1. अकारांत, आकारांत (संस्कृत-शब्दों को छोड़कर) तथा एकारांत संज्ञाओं में अंतिम 'अ', 'आ' या 'ए' के स्थान पर बहुवचन बनाने में 'ओं' कर दिया जाता है। जैसे–

एकवचन	बहुवचन	विभक्तिचिह्न के साथ प्रयोग
लड़का	लड़कों	लड़कों ने कहा।
घर	घरों	घरों का घेरा।
गधा	गधों	गधों की तरह।
घोड़ा	घोड़ों	घोड़ों पर चढ़ो।
चोर	चोरों	चोरों को पकड़ो।

2. संस्कृत की आकारांत तथा संस्कृत-हिंदी की सभी उकारांत, ऊकारांत, अकारांत, औकारांत संज्ञाओं को बहुवचन का रूप देने के लिए अंत में 'ओं' जोड़ना पड़ता है। ऊकारांत शब्दों में 'ओं' जोड़ने के पूर्व 'ऊ' को 'उ' कर दिया जाता है। जैसे–

एकवचन	बहुवचन	विभक्तिचिह्न के साथ प्रयोग
लता	लताओं	लताओं को देखो।
साधु	साधुओं	यह साधुओं का समाज है।
वधू	वधुओं	वधुओं से पूछो।
घर	घरों	घरों में जाओ।
जौ	जौओं	जौओं को काटो।

3. सभी इकारांत और ईकारांत संज्ञाओं का बहुवचन बनाने के लिए अंत में 'यों' जोड़ा जाता है। 'इकारांत' शब्दों में 'यों' जोड़ने के पहले 'ई' का 'इ' कर दिया जाता है। जैसे–

एकवचन	बहुवचन	विभक्तिचिह्न के साथ प्रयोग
मुनि	मुनियों	मुनियों की यज्ञशाला।
गली	गलियों	गलियों में गए।
नदी	नदियों	नदियों का प्रवाह।
साड़ी	साड़ियों	साड़ियों के दाम दीजिए।
श्रीमती	श्रीमतियों	श्रीमतियों का मिलन हुआ।

वचन-संबंधी विशेष निर्देश

1. 'प्रत्येक' तथा 'हरएक' का प्रयोग सदा एकवचन में होता है। जैसे–
   प्रत्येक व्यक्ति यही कहेगा; हरएक कुआँ मीठे जल का नहीं होता।
2. दूसरी भाषाओं के तत्सम या तद्भव शब्दों का प्रयोग हिंदी व्याकरण के अनुसार होना चाहिए। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के 'फुट' (foot) का बहुवचन 'फीट' (feet) होता है, किंतु हिंदी में इसका प्रयोग इस प्रकार होगा–दो फुट लंबी दीवार है; न कि 'दो फीट लंबी दीवार है।' फारसी से आये 'मकान' या 'कागज' का बहुवचन हिंदी में फारसी के ही अनुसार 'मकानात' या 'कागजात' नहीं होगा। फारसी से आये 'वकील' शब्द का बहुवचन 'वकला' हिंदी में नहीं चलेगा। हमलोग हिंदी में लिखेंगे, 'वकीलों की राय लीजिए।' इसी प्रकार, अंग्रेजी के 'स्कूल' शब्द का बहुवचन अंग्रेजी की ही तरह 'स्कूल्स' बनाना अनुचित है। हिंदी में 'स्कूल' का बहुवचन 'स्कूलों' होगा।

नोट

3. भाववाचक और गुणवाचक संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन में होता है। जैसे–मैं उनकी **सज्जनता** पर मुग्ध हूँ। लेकिन, जहाँ संख्या या प्रकार का बोध हो, वहाँ गुणवाचक और भाववाचक संज्ञाएँ बहुवचन में भी प्रयुक्त हो सकती हैं। जैसे–इस ग्रंथ की अनेक **विशेषताएँ** या **खूबियाँ** हैं; मैं उनकी अनेक **विवशताओं** को जानता हूँ।
4. प्राण, लोग, दर्शन, आँसू, ओठ, दाम, अक्षत इत्यादि शब्दों का प्रयोग हिंदी में बहुवचन में होता है। जैसे–आपके ओठ खुले कि प्राण तृप्त हुए, आपलोग आये, आशीर्वाद के अक्षत बरसे, दर्शन हुए।
5. द्रव्यवाचक संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन में होता है। जैसे–उनके पास बहुत सोना है; उनका बहुत-सा धन बरबाद हुआ; न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। किंतु, यदि द्रव्य के भिन्न-भिन्न प्रकारों का बोध हो, तो द्रव्यवाचक संज्ञा बहुवचन में प्रयुक्त होगी। जैसे–यहाँ बहुत तरह के **लोहे** मिलते हैं। चमेली, गुलाब, तिल इत्यादि के **तेल** अच्छे होते हैं।

1.5 कारक

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ उनका (संज्ञा या सर्वनाम का) संबंध सूचित हो, उसे (उस रूप को) 'कारक' कहते हैं। अथवा ***संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उनका (संज्ञा या सर्वनाम का) क्रिया से संबंध सूचित हो, उसे (उस रूप को) 'कारक' कहते हैं।*** इन दो 'परिभाषाओं' का अर्थ यह हुआ कि संज्ञा या सर्वनाम के आगे जब 'ने', 'को', 'से' आदि विभक्तियाँ लगती हैं, तब उनका रूप ही 'कारक' कहलाता है, तभी वे वाक्य के अन्य शब्दों से संबंध रखने योग्य 'पद' होते हैं और 'पद' की अवस्था में ही वे वाक्य के दूसरे शब्दों से या क्रिया से कोई लगाव रख पाते हैं। 'ने', 'को', 'से' आदि विभिन्न विभक्तियाँ विभिन्न कारकों की हैं। इनके लगने पर ही कोई शब्द 'कारकपद' बन पाता है और वाक्य में आने योग्य होता है। 'कारकपद' या 'क्रियापद' बने बिना कोई शब्द वाक्य में बैठने योग्य नहीं होता। जैसे–''रामचंद्रजी ने खारे जल के समुद्र पर बंदरों से पुल बँधवा दिया।'' इस वाक्य में 'रामचंद्रजी ने', 'समुद्र पर', 'बंदरों से' और 'पुल' संज्ञाओं के रूपांतर हैं, जिनके द्वारा इन संज्ञाओं का संबंध 'बँधवा दिया' क्रिया के साथ सूचित होता है।

कारक के भेद

हिंदी में कारक आठ हैं और कारकों के बोध के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो प्रत्यय (चिह्न) लगाये जाते हैं, उन्हें व्याकरण में 'विभक्तियाँ' कहते हैं। कुछ लोग इन्हें परसर्ग भी कहते हैं। विभक्ति से बने शब्दरूप को 'विभक्त्यंत शब्द' या 'पद' कहते हैं। हिंदी कारकों की विभक्तियों के 'चिह्न' इस प्रकार हैं–

कारक	विभक्तियाँ
कर्ता (Nominative)	०, ने
कर्म (Objective)	०, को
करण (Instrumental)	से
संप्रदान (Dative)	को, के लिए
अपादान (Ablative)	से
संबंध (Genitive)	का, के की; रा, रे, री
अधिकरण (Locative)	में, पर
संबोधन (Addressive)	०, हे, अजी, अहो, अरे इत्यादि।

कुछ लोग 'विभक्ति' के स्थान पर 'परसर्ग' लिखते हैं। लगता है, 'उपसर्ग' शब्द के अनुकरण पर 'परसर्ग' गढ़ लिया गया है, क्योंकि उपसर्ग का पूर्वप्रयोग होता है और विभक्ति का परप्रयोग। यदि उपसर्ग का नाम पूर्वसर्ग होता, तो विभक्ति का नाम भी भ्रांति से परसर्ग कोई रख सकता था। पं. किशोरीदास वाजपेयी का यह कहना ठीक है कि 'विभक्ति' शब्द हमें परंपरा से प्राप्त है, सुप्रसिद्ध है। उसकी जगह 'परसर्ग' चलाना किस काम का? क्या लाभ?

विभक्तियों की प्रायोगिक विशेषताएँ

प्रयोग की दृष्टि से हिंदी कारक की विभक्तियों की कुछ अपनी विशेषताएँ हैं। इनका व्यवहार करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए–

1. सामान्यत: विभक्तियाँ स्वतंत्र हैं। इनका अस्तित्व स्वतंत्र है। चूँकि इनका काम शब्दों का संबंध दिखाना है, इसलिए इनका अर्थ नहीं होता है। जैसे–ने, से आदि।
2. हिंदी की विभक्तियाँ विशेष रूप से सर्वनामों के साथ प्रयुक्त होने पर प्राय: विकार उत्पन्न कर उनसे मिल जाती हैं। जैसे–मेरा, हमारा, उसे, उन्हें।
3. विभक्तियाँ प्राय: संज्ञाओं या सर्वनामों के साथ आती हैं। जैसे–मोहन की दुकान से यह चीज आयी है।

आगे इन पर विचार किया गया है।

विभक्तियों का प्रयोग

हिंदी व्याकरण में विभक्तियों के प्रयोग की विधि निश्चित है। हिंदी में दो तरह की विभक्तियाँ हैं–(1) विश्लिष्ट और (2) संश्लिष्ट। संज्ञाओं के साथ आने वाली विभक्तियाँ विश्लिष्ट होती हैं, अर्थात् अलग रहती हैं। जैसे–राम ने, वृक्ष पर, लड़कों को, लड़कियों के लिए। सर्वनामों के साथ विभक्तियाँ संश्लिष्ट या मिली होती हैं। जैसे–उसका, किस पर, तुमको, तुम्हें, तेरा, तुम्हारा, उन्हें। यहाँ यह ध्यान रखना है कि तुम्हें-इन्हें में 'को' और तेरा-तुम्हारा में 'का' विभक्ति चिह्न संश्लिष्ट है। अत:, 'के लिए' जैसे दो शब्दों की विभक्ति में पहला शब्द संश्लिष्ट होगा और दूसरा विश्लिष्ट जैसे–तू+रे लिए=तेरे लिए; तुम+रे लिए=तुम्हारे लिए; मैं+रे लिए=मेरे लिए।

यहाँ प्रत्येक कारक और उसकी विभक्ति के प्रयोग का परिचय उदाहरण सहित दिया जाता है।

कर्ताकारक

वाक्य में जो शब्द काम करने वाले के अर्थ में आता है, उसे 'कर्ता' कहते हैं। जैसे–'मोहन खाता है।' इस वाक्य में खाने का काम 'मोहन' करता है। अत:, 'कर्ता' मोहन है। इसकी दो विभक्तियाँ हैं–ने और ०। संस्कृत का कर्ता ही हिंदी का कर्ताकारक है। वाक्य में कर्ता का प्रयोग दो रूपों में होता है–पहला वह, जिसमें 'ने' विभक्ति नहीं लगती, अर्थात् जिसमें क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के अनुसार होते हैं। इसे 'अप्रत्यय कर्ता कारक' कहते हैं। इसे 'प्रधान कर्ता कारक' भी कहा जाता है। उदाहरणार्थ, 'मोहन खाता है।' यहाँ 'खाता है' क्रिया है, जो कर्ता 'मोहन' के लिंग वचन के अनुसार है। इसके लिए विपरीत जहाँ क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के अनुसार न होकर कर्म के अनुसार होते हैं, वहाँ 'ने' विभक्ति लगती है। इसे व्याकरण में 'सप्रत्यय कर्ता कारक' कहते हैं। इसे 'अप्रधान कर्ता कारक' भी कहा जाता है। उदाहरणार्थ, 'श्याम ने मिठाई खाई।' इस वाक्य में क्रिया 'खाई' कर्म 'मिठाई' के अनुसार आयी है।

कर्ता के 'ने' चिह्न का प्रयोग

कर्ता कारक की विभक्ति 'ने' है। बिना विभक्ति के भी कर्ता कारक का प्रयोग होता है। 'अप्रत्यय कर्ता कारक' में 'ने' का प्रयोग न होने के कारण वाक्य रचना में कोई खास कठिनाई नहीं होती। 'ने' का प्रयोग अधिकतर 'पश्चिमी हिंदी' में होता है। बनारस से पंजाब तक इसके प्रयोग में लोगों को विशेष कठिनाई नहीं होती; क्योंकि इस 'ने' विभक्ति की सृष्टि उधर ही हुई है। हिंदी भाषा की इस विभक्ति से अहिंदीभाषी घबराते हैं। लेकिन, थोड़ी सावधानी रखी जाए और इसकी व्युत्पत्ति को ध्यान में रखा जाए, तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि ''इसका स्वरूप तथा प्रयोग जैसा संस्कृत में है, वैसा हिंदी में भी है, हिंदी में वैशिष्ट्य नहीं आया।''

खड़ी बोली हिंदी में 'ने' चिह्न कर्ता कारक में संज्ञा-शब्दों की एक विश्लिष्ट विभक्ति है, जिसकी स्थिति बड़ी नपी-तुली और स्पष्ट है। किंतु, हिंदी लिखने में इसके प्रयोग की भूलें प्राय: हो जाया करती हैं। 'ने' का प्रयोग केवल हिंदी और उर्दू में होता है। अहिंदीभाषियों को 'ने' के प्रयोग में कठिनाई होती है। यहाँ देखना है कि हिंदी भाषा में 'ने' का प्रयोग कहाँ होता है और कहाँ नहीं होता।

नोट

'ने' का प्रयोग कहाँ होता है?

1. 'ने' का प्रयोग कर्ता के साथ तभी होता है, जब क्रिया सकर्मक तथा सामान्यभूत, आसन्नभूत, पूर्णभूत, हेतुहेतुमद्‌भूत और संदिग्ध भूतकालों की और कर्तृवाच्य की हो।

   सामान्यभूत–राम ने रोटी खायी। आसन्नभूत–राम ने रोटी खायी है।

   पूर्णभूत–राम ने रोटी खायी थी। संदिग्धभूत–राम ने रोटी खायी होगी।

   हेतुहेतुमद्‌भूत–राम ने पुस्तक पढ़ी होती, तो उत्तर ठीक होता।

तात्पर्य यह कि **केवल अपूर्णभूत को छोड़ शेष पाँच भूतकालों में 'ने' का प्रयोग होता है।**

2. जब संयुक्त क्रिया के दोनों खंड सकर्मक हों, तो अपूर्णभूत को छोड़ शेष सभी भूतकालों में कर्ता के आगे 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे–

   श्याम ने उत्तर **कह दिया।** किशोर ने **खा लिया।**

इन उदाहरणों में काले टाइप वाली संयुक्त क्रियाओं के दोनों खंड सकर्मक हैं।

3. सामान्यत: अकर्मक क्रिया में 'ने' विभक्ति नहीं लगती, किंतु कुछ ऐसी अकर्मक क्रियाएँ हैं–जैसे–**नहाना, छींकना, थूकना, खाँसना–**जिनमें 'ने' चिह्न का प्रयोग अपवादस्वरूप होता है। इन क्रियाओं के बाद कर्म नहीं आता। जैसे–

   उसने थूका। राम ने छींका।

   उसने खाँसा। उसने नहाया।

4. जब अकर्मक क्रिया सकर्मक बन जाए तब 'ने' का प्रयोग होता है, अन्यथा नहीं। जैसे–

   उसने टेढ़ी चाल चली। उसने लड़ाई लड़ी।

5. प्रेरणार्थक क्रियाओं के साथ, अपूर्णभूत को छोड़ शेष सभी भूतकालों में 'ने' का प्रयोग होता है। जैसे–

   मैंने उसे पढ़ाया। उसने एक रुपया दिलवाया।

'ने' का प्रयोग कहाँ नहीं होता?

1. सकर्मक क्रियाओं के कर्ता के साथ भविष्यत्‌काल में 'ने' का प्रयोग बिलकुल नहीं होता।
2. **बकना, बोलना, भूलना–**ये क्रियाएँ यद्यपि सकर्मक हैं, तथापि अपवादस्वरूप सामान्य, आसन्न, पूर्ण और संदिग्ध भूतकालों में कर्ता के 'ने' चिह्न का व्यवहार नहीं होता। यथा–वह बका; मैं बोला; वह भूला; मैं भूला! हाँ, 'बोलना' क्रिया में कहीं-कहीं 'ने' आता है। जैसे–उसने बोलियाँ बोलीं।

   'वह बोलियाँ बोला'–ऐसा भी लिखा या कहा जा सकता है।

3. यदि संयुक्त क्रिया का अंतिम खंड अकर्मक हो, तो उसमें 'ने' का प्रयोग नहीं होता। जैसे–

   मैं **खा चुका** हूँगा। वह पुस्तक **ले आया।** उसे रेडियो **ले जाना** है।

4. जिन वाक्यों में **लगना, जाना, सकना** तथा **चुकना** सहायक क्रियाएँ आती हैं उनमें 'ने' को प्रयोग नहीं होता। जैसे–

   वह खाना चुका। मैं पानी पीने लगा। उसे पटना जाना है।

कर्मकारक

वाक्य में क्रिया का फल जिस शब्द पर पड़ता है, उसे कर्म कारक कहते हैं। इसकी विभक्ति 'को' है।

कर्मकारक का प्रत्यय चिह्न 'को' है। बिना प्रत्यय के या अप्रत्यय कर्म के कारक का भी प्रयोग होता है। इसके नियम हैं–

1. बुलाना, सुलाना, कोसना, पुकारना, जगाना, भगाना इत्यादि क्रियाओं के कर्मों के साथ 'को' विभक्ति लगती है। जैसे–

मैंने हरि को बुलाया।	माँ ने बच्चे को सुलाया।
शीला ने सावित्री को जी भर कोसा।	पिता ने पुत्र को पुकारा।
हमने उसे (उसको) खूब सबेरे जगाया।	लोगों ने शोरगुल करके डाकुओं को भगाया।

2. 'मारना' क्रिया का अर्थ जब 'पीटना' होता है, तब कर्म के साथ विभक्ति लगती है, पर यदि उसका अर्थ 'शिकार करना' होता है, तो विभक्ति नहीं लगती, अर्थात् कर्म अप्रत्यय रहता है। जैसे–

लोगों ने चोर को मारा।	पर–शिकारी ने बाघ मारा।
हरि ने बैल को मारा।	पर–मछुए ने मछली मारी।

3. बहुधा कर्ता में विशेष कर्तृत्वशक्ति जताने के लिए कर्म सप्रत्यय रखा जाता है। जैसे–मैंने यह तालाब खुदवाया है, मैंने इस तालाब को खुदवाया है। दोनों वाक्यों में अर्थ का अंतर ध्यान देने योग्य है। पहले वाक्य के कर्म से कर्ता में साधारण कर्तृत्वशक्ति का और दूसरे वाक्य में कर्म से कर्ता में विशेष कर्तृत्वशक्ति का बोध होता है। इस तरह के अन्य वाक्य हैं–बाघ बकरी को खा गया, हरि ने ही पेड़ को काटा है, लड़के ने फलों को तोड़ लिया इत्यादि। जहाँ कर्ता में विशेष कर्तृत्वशक्ति का बोध कराने की आवश्यकता न हो, वहाँ सभी स्थानों पर कर्म को सप्रत्यय नहीं रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त, जब कर्म निर्जीव वस्तु हो, तब 'को' का प्रयोग नहीं होना चाहिए। जैसे–'राम ने रोटी को खाया' की अपेक्षा 'राम ने रोटी खायी ज्यादा अच्छा है। मैं कॉलेज को जा रहा हूँ; मैं आम को खा रहा हूँ; मैं कोट को पहन रहा हूँ–इन उदाहरणों में 'को' का प्रयोग भद्दा है। प्राय: चेतन पदार्थों के साथ 'को' चिह्न का प्रयोग होता है और अचेतन के साथ नहीं। पर, यह अंतर वाक्य-प्रयोग पर निर्भर करता है।
4. कर्म सप्रत्यय रहने पर क्रिया सदा पुल्लिंग होगी, किंतु अप्रत्यय रहने पर कर्म के अनुसार। जैसे–राम ने रोटी को खाया (सप्रत्यय), राम ने रोटी खायी (अप्रत्यय)।
5. यदि विशेषण संज्ञा के रूप में प्रयुक्त हों, तो कर्म में 'को' अवश्य लगता है। जैसे–बड़ों को पहले आदर दो, छोटों को प्यार करो।

करण कारक

वाक्य में जिस शब्द से क्रिया के संबंध का बोध हो, उसे करण कारक कहते हैं।

करण कारक के सबसे अधिक प्रत्ययचिह्न हैं। 'ने' भी करण कारक का ऐसा चिह्न है, जो करण कारक के रूप में संस्कृत में आये कर्ता के लिए 'एन' के रूप में, कर्मवाच्य और भाववाच्य में आता है। किंतु, हिंदी की प्रकृति 'ने' को सप्रत्यय कर्ता कारक का ही चिह्न मानती है। हिंदी में करण कारक के अन्य चिह्न हैं–से, द्वारा, के द्वारा, के जरिए, के साथ, के बिना इत्यादि। इन चिह्नों में अधिकतर प्रचलित 'से', 'द्वारा', 'के द्वारा' 'के जरिये' इत्यादि ही हैं। 'के साथ', के बिना' आदि साधनात्मक योग-वियोग जताने वाले अव्ययों के कारण, साधनात्मक योग बताने वाले 'के द्वारा' की ही तरह के करण कारक के चिह्न हैं। 'करण' का अर्थ है 'साधन'। अत:, 'से' चिह्न वहीं करण कारक का चिह्न है जहाँ यह 'साधन' के अर्थ में प्रयुक्त हो। जैसे–मुझसे यह काम न सधेगा। यहाँ 'मुझसे' का अर्थ है 'मेरे द्वारा', 'मुझ साधनभूत के द्वारा' या 'मुझ-जैसे साधन के द्वारा'। अत: 'साधन' को इंगित करने के कारण यहाँ 'मुझसे' का 'से' करण का विभक्ति चिह्न है। अपादान का भी विभक्ति चिह्न 'से' है। 'अपादान' का अर्थ है 'अलगाव की प्राप्ति'। अत:, अपादान का 'से' चिह्न अलगाव के संकेत का प्रतीक है, जबकि करण का, अपादान के विपरीत, साधना का, साधनभूत लगाव का। 'पेड़ से फल गिरा', 'मैं घर से चला' आदि वाक्यों में 'से' प्रत्यय 'पेड़' को या घर को 'साधन' नहीं सिद्ध करता, बल्कि इन दोनों से बिलगाव सिद्ध करता है। अत:, इन दोनों वाक्यों में 'घर' और 'पेड़' के आगे प्रयुक्त 'से' विभक्ति चिह्न अपादान कारक का है और इन दोनों शब्दों में लगाकर इन्हें अपादान कारक का 'पद' बनाता है।

नोट

करण कारक का क्षेत्र अन्य सभी कारकों से विस्तृत है। इस करण में अन्य समस्त कारकों से छूटे हुए प्रत्यय या वे पद जो अन्य किसी कारक में आने से बच गए हों, आ जाते हैं। अत:, इसकी कुछ सामान्य पहचान और नियम जान लेना आवश्यक है–

1. 'से' करण और अपादान दोनों विभक्तियों का चिह्न है, किंतु साधनभूत का प्रत्यय होने पर करण माना जायेगा, जबकि अलगाव का प्रत्यय होने पर अपादान जैसे–

वह कुल्हाड़ी से वृक्ष काटता है। मुझे अपनी कमाई से खाना मिलता है। साधुओं की संगति से बुद्धि सुधरती है।	–करण
पेड़ से फल गिरा। घर से लौटा हुआ लड़का। छत से उतरी हुई लता।	–अपादान

2. 'ने' सप्रत्यय कर्ता कारक का चिह्न है। किंतु, 'से', 'के द्वारा' और 'के जरिये' हिंदी में प्रधानत: करण कारक के ही प्रत्यय माने जाते हैं : क्योंकि ये सारे प्रत्यय 'साधन' अर्थ की ओर इंगित करते हैं। जैसे–

मुझसे यह काम न सधेगा।	तीर से बाघ मार दिया गया।
उसके द्वारा यह कथा सुनी थी।	मेरे द्वारा मकान ढहाया गया था।
आपके जरिये ही घर का पता चला।	

3. भूख, प्यास, जाड़ा, आँख, कान, पाँव इत्यादि शब्द यदि एकवचन, करण कारक में सप्रत्यय रहते हैं, तो एकवचन होते हैं और अप्रत्यय रहते हैं, तो बहुवचन। जैसे–

वह भूख से बेचैन है;	वह भूखों बेचैन है।
लड़का प्यास से मर रहा है;	लड़का प्यासों मर रहा है।
स्त्री जाड़े से काँप रही है;	स्त्री जाड़ों काँप रही है।
मैंने अपनी आँख से यह घटना देखी;	मैंने अपनी आँखों यह घटना देखी।
कान से सुनी बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए;	कानों सुनी बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए।
लड़का अब अपने पाँव से चलता है;	लड़का अब अपने पाँवों चलता है।

संप्रदान कारक

जिसके लिए कुछ किया जाए या जिसको कुछ दिया जाए, इसका बोध कराने वाले शब्द के रूप को संप्रदान कारक कहते हैं।

1. कर्म और संप्रदान का एक ही विभक्ति प्रत्यय है 'को', पर दोनों के अर्थों में अंतर है। संप्रदान का 'को', 'के लिए' अव्यय के स्थान पर या उसके अर्थ में प्रयुक्त होता है, जबकि कर्म के 'को' का 'के लिए' अर्थ से कोई संबंध नहीं है। नीचे लिखे वाक्यों पर ध्यान दीजिए।

कर्म–हरि मोहन को मारता है।	संप्रदान–हरि मोहन को रुपये देता है।
कर्म–उसके लड़के को बुलाया।	संप्रदान–उसने लड़के को मिठाइयाँ दीं।
कर्म–माँ ने बच्चे को खेलते देखा।	संप्रदान–माँ ने बच्चे को खिलौने खरीदे।

2. साधारणत: जिसे कुछ दिया जाता है या जिसके लिए कोई काम किया जाता है, वह पद संप्रदान कारक का होता है। जैसे–

भूखों को अन्न देना चाहिए और प्यासों को जल। गुरु ही शिष्य को ज्ञान देता है।

नोट

3. 'के हित', 'के वास्ते', 'के निमित्त' आदि प्रत्यय वाले अव्यय भी संप्रदान कारक के प्रत्यय हैं। जैसे–

   राम के हित लक्ष्मण वन गये थे।

   तुलसी के वास्ते ही जैसे राम ने अवतार लिया।

   मेरे निमित्त ही ईश्वर की कोई कृपा नहीं।

अपादान कारक

संज्ञा के जिस रूप से किसी वस्तु के अलग होने का भाव प्रकट होता है, उसे अपादान कारक कहते हैं।

जिस शब्द में अपादान कारक की विभक्ति लगती है, उससे किसी दूसरी वस्तु के पृथक् होने का बोध होता है। जैसे–

हिमालय से गंगा निकलती है।	वह घर से बाहर आया।
मोहन ने घड़े से पानी ढाला।	बिल्ली छत से कूद पड़ी।
लड़का पेड़ से गिरा।	चूहा बिल से बाहर निकला।

करण और अपादान के 'से' प्रत्यय में अर्थ का अंतर करण कारक के प्रसंग में बताया जा चुका है।

संबंध कारक

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से किसी अन्य शब्द के साथ संबंध या लगाव प्रतीत हो, उसे संबंध कारक कहते हैं।

1. संबंध कारक का विभक्ति चिह्न 'का' है। वचन और लिंग के अनुसार इसकी विकृति 'के' और 'की' है। इस कारक से अधिकार कर्तृत्व, कार्य-कारण, मोल-भाव, परिमाण इत्यादि का बोध होता है। जैसे–

   अधिकार–राम की किताब, श्याम का घर।

   कर्तृत्व–प्रेमचंद के उपन्यास, भारतेंदु के नाटक।

   कार्य-कारण–चाँदी की थाली, सोने का गहना।

   मोल-भाव–एक रुपए का चावल, पाँच रुपए का घी।

   परिमाण–चार भर का हार, सौ मील की दूरी, पाँच हाथ की लाठी।

द्रष्टव्य–बहुधा संबंध कारक की विभक्ति के स्थान में 'वाला' प्रत्यय भी लगता है। जैसे–रामवाली किताब, श्यामवाला घर, प्रेमचंदवाले उपन्यास, चाँदीवाली थाली इत्यादि।

2. संबंध कारक की विभक्तियों द्वारा कुछ मुहावरेदार प्रयोग भी होते हैं। जैसे–

   (अ) दिन के दिन, महीने के महीने, होली की होली, दीवाली की दीवाली, रात की रात, दोपहर के दोपहर इत्यादि।

   (आ) कान का कच्चा, बात का पक्का, आँख का अंधा, गाँठ का पूरा, बात का धनी, दिल का सच्चा इत्यादि।

   (इ) वह अब आने का नहीं, मैं अब जाने का नहीं, वह टिकने का नहीं इत्यादि।

3. दूसरे कारकों के अर्थ में भी संबंध कारक की विभक्ति लगती है। जैसे–जन्म का भिखारी=जन्म से भिखारी (करण), हिमालय का चढ़ना=हिमालय पर चढ़ना (अधिकरण)

4. संबंध, अधिकार और देने के अर्थ में बहुधा संबंध कारक की विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

   हरि को बाल-बच्चा नहीं है। राम के बहन हुई है। राजा के आँखें नहीं होतीं, केवल कान होते हैं। रावण ने विभीषण के लात मारी। ब्राह्मण को दक्षिणा दो।

5. सर्वनाम की स्थिति में संबंध कारक का प्रत्यय रा-रे-री और ना-ने-नी हो जाता है। जैसे–

   मेरा लड़का, मेरी लड़की, तुम्हारा घर, तुम्हारी पगड़ी, अपना भरोसा, अपनी रोजी।

नोट

अधिकरण कारक

क्रिया या आधार को सूचित करने वाली संज्ञा या सर्वनाम के स्वरूप को अधिकरण कारक कहते हैं।

1. कभी-कभी 'में' के अर्थ में 'पर' और 'पर' के अर्थ में 'में' का प्रयोग होता है। जैसे–

   तुम्हारे घर पर चार आदमी हैं=घर में। दूकान पर कोई नहीं था=दूकान में। नाव जल में तैरती है=जल पर।

2. कभी-कभी अधिकरण कारक की विभक्तियों का लोप भी हो जाता है। जैसे–

   इन **दिनों** वह **पटने** है। वह **संध्या समय गंगा-किनारे** जाता है।

   वह **द्वार-द्वार** भीख माँगता चलता है। लड़के **दरवाजे-दरवाजे** घूम रहे हैं।

   जिस समय वह आया था, **उस समय** मैं नहीं था। **उस जगह** एक सभा होने जा रही है।

3. किनारे, आसरे और दिनों जैसे पद स्वयं सप्रत्यय अधिकरण कारक के हैं और यहाँ, वहाँ, समय आदि पदों का अर्थ सप्रत्यय अधिकरण कारक का है। अत:, इन पदों की स्थिति में अधिकरण कारक का प्रत्यय नहीं लगता। इसके उदाहरण दिये जा चुके हैं।

संबोधन कारक

संज्ञा के जिस रूप से किसी के पुकारने या संकेत करने का भाव पाया जाता है, उसे संबोधन कारक कहते हैं। जैसे–हे भगवान्! मेरी रक्षा कीजिए। इस वाक्य में 'हे भगवान्' से पुकारने का बोध होता है। संबोधन कारक की कोई विभक्ति नहीं होती है। इसे प्रकट करने के लिए 'हे', 'अरे', 'रे' आदि शब्दों का प्रयोग होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. वाक्य में जिस शब्द से क्रिया के संबंध का बोध हो, उसे कहते हैं–

   (क) करण कारक (ख) कर्ता कारक (ग) संबंध कारक (घ) अपादान कारक

6. हिंदी में कारक .... हैं।

   (क) छह (ख) पाँच (ग) आठ (घ) दस

7. 'से' विभक्ति चिह्न है–

   (क) अपादान कारक का (ख) संबंध कारक का (ग) दोनों का (घ) इनमें से कोई नहीं

8. हिंदी में दो प्रकार की विभक्तियाँ हैं–विश्लिष्ट और ....।

   (क) संश्लिष्ट (ख) विशिष्ट (ग) अवशिष्ट (घ) इनमें से कोई नहीं

1.6 पद परिचय

शब्द और पद–वाक्य से अलग रहने वाले शब्दों को 'शब्द' कहते हैं, किंतु जब किसी वाक्य में पिरो दिये जाते हैं, तब 'पद' कहलाते हैं। जब वाक्य के अंतर्गत शब्दों में विभक्तियाँ लगती हैं, तब वे 'पद' बन जाते हैं। 'पद' अर्थ संकेतित करता है। 'शब्द' सार्थक और निरर्थक दोनों हो सकते हैं।

'पद-परिचय' किसे कहते हैं?

'पद-परिचय' का अर्थ होता है पदों का अन्वय, अर्थात् विश्लेषण। हिंदी व्याकरण में इसके विभिन्न नाम दिये गये हैं; यथा–'पदान्वय', 'पदनिर्देश', 'पदनिर्णय', 'पद-विन्यास', 'पदच्छेद' इत्यादि। ये सभी 'पद-परिचय' के पर्यायवाची शब्द हैं। 'पद-परिचय' में वाक्यों में प्रयुक्त सार्थक शब्दों अथवा पदों की व्याकरणसम्मत विशेषताएँ बतायी जाती हैं। दूसरे शब्दों में, इसे हम यों कह सकते हैं कि ***वाक्य के प्रत्येक पद को अलग-अलग कर***

उसका स्वरूप और दूसरे पद से संबंध बताना 'पद-परिचय' कहलाता है। यहाँ एक तरह से सारे व्याकरण का साररूप रख देना पड़ता है। इससे छात्रों के समस्त व्याकरणिक ज्ञान की परीक्षा हो जाती है। प्रमुख पदों के अन्वय का सामान्य परिचय इस प्रकार है–

टास्क हिंदी में कारक कितने प्रकार के हैं?

संज्ञा का पद-परिचय

संज्ञापदों का अन्वय करते समय संज्ञा, उसका भेद, लिंग, वचन, कारक और अन्य पदों का परिचय देते हुए अन्य पदों से उसका संबंध भी दिखाना चाहिए।

उदाहरण–राम कहता है कि मैं मोहन की पुस्तकें पढ़ सकता हूँ।

इसमें 'राम', 'मोहन' और 'पुस्तकें' तीन संज्ञापद हैं। इनका पदान्वय इस प्रकार होगा–

राम–संज्ञा, व्यक्तिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, कर्ता कारक, 'कहता है' क्रिया का कर्ता।

मोहन–संज्ञा, व्यक्तिवाचक, पुल्लिग, एकवचन, संबंध कारक, इसका संबंध 'पुस्तकें' से है।

पुस्तकें–संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, बहुवचन, कर्म कारक, 'पढ़ सकता हूँ' क्रिया का कर्म।

1.7 सारांश (Summary)

- 'संज्ञा' उस विकारी शब्द को कहते हैं, जिससे किसी विशेष वस्तु, भाव और जीव के नाम का बोध हो। वस्तु के अंतर्गत प्राणी, पदार्थ और धर्म आते हैं। इन्हीं के आधार पर संज्ञा के भेद किये गये हैं।
- हिंदी व्याकरण में संज्ञा के मुख्यत: पाँच भेद हैं–(1) व्यक्तिवाचक, (2) जातिवाचक, (3) भाववाचक, (4) समूहवाचक और (5) द्रव्यवाचक। पं. गुरु के अनुसार, ''समूहवाचक का समावेश व्यक्तिवाचक तथा जातिवाचक में और द्रव्यवाचक का समावेश जातिवाचक में हो जाता है।''
- संज्ञा विकारी शब्द है। विकार शब्दरूपों को परिवर्तित अथवा रूपांतरित करता है। संज्ञा के रूप लिंग, वचन और कारक चिह्नों (परसर्ग) के कारण बदलते हैं।
- शब्द की जाति को लिंग कहते हैं। संज्ञा के जिस रूप से व्यक्ति या वस्तु की नर या मादा जाति का बोध हो, उसे व्याकरण में 'लिंग' कहते हैं। 'लिंग' संस्कृत भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ होता है 'चिह्न' या 'निशान'।
- संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के जिस रूप से संख्या का बोध हो, उसे 'वचन' कहते हैं। 'वचन' का शाब्दिक अर्थ है–'संख्यावचन'।
- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ उनका (संज्ञा या सर्वनाम का) संबंध सूचित हो, उसे (उस रूप को) 'कारक' कहते हैं। हिंदी में कारक आठ हैं और कारकों के बोध के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो प्रत्यय (चिह्न) लगाये जाते हैं, उन्हें व्याकरण में 'विभक्तियाँ' कहते हैं।
- शब्द और पद–वाक्य से अलग रहने वाले शब्दों को 'शब्द' कहते हैं, किंतु जब किसी वाक्य में पिरो दिये जाते हैं, तब 'पद' कहलाते हैं। 'शब्द' सार्थक और निरर्थक दोनों हो सकते हैं।

नोट

1.8 शब्दकोश (Keywords)

इश्तहार – विज्ञापन

विनियम – आदान-प्रदान

आकलन – मूल्यांकन

1.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. संज्ञा के कितने भेद हैं? उल्लेख कीजिए।
2. द्रव्यवाचक संज्ञा को उदाहरण सहित लिखिए।
3. कारक कितने प्रकार के होते हैं? लिखिए।
4. पद-परिचय किसे कहते हैं? संज्ञा का पद-परिचय दीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. द्रव्यवाचक	2. कारक चिह्नों (परसर्ग)	3. प्रत्यय	4. समूहवाचक संज्ञा
5. (ग)	6. (क)	7. (ख)	8. (क)।

1.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण एवं रचना–डॉ. *वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. हिंदी व्याकरण–*बृजकिशोर प्रसाद सिंह, नमन प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–डॉ. *मीनाक्षी अग्रवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन।*

नोट

इकाई–2 : सर्वनाम की परिभाषा एवं भेद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
2.1 सर्वनाम के भेद
2.1.1 पुरुषवाचक सर्वनाम
2.1.2 निजवाचक सर्वनाम
2.1.3 निश्चयवाचक सर्वनाम
2.1.4 अनिश्चयवाचक सर्वनाम
2.1.5 संबंधवाचक सर्वनाम
2.1.6 प्रश्नवाचक सर्वनाम
2.2 सर्वनाम के रूपांतर (लिंग, वचन और कारक)
2.3 सर्वनाम की कारक-रचना (रूप-रचना)
2.4 सर्वनाम का पद-परिचय
2.5 सारांश (Summary)
2.6 शब्दकोश (Keywords)
2.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
2.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सर्वनाम के भेद जानने में।
- सर्वनाम के रूपांतर जानने में।
- सर्वनाम का पद-परिचय जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'सर्वनाम' उस विकारी शब्द को कहते हैं, जो पूर्वापरसंबंध से किसी भी संज्ञा के बदले आता है (–पं० कामताप्रसाद गुरु)। जैसे–मैं, तुम, वह, यह इत्यादि। सर्व (सब) नामों (संज्ञाओं) के बदले जो शब्द आते हैं, उन्हें 'सर्वनाम' कहते हैं। संज्ञा की अपेक्षा सर्वनाम की विलक्षणता यह है कि संज्ञा से जहाँ उसी वस्तु का बोध होता है, जिसका वह (संज्ञा) नाम है, वहाँ सर्वनाम में पूर्वापरसंबंध के अनुसार किसी भी वस्तु का बोध होता है। 'लड़का' कहने से केवल लड़के का बोध होता है, घर, सड़क आदि का बोध नहीं होता; किंतु 'वह' कहने से पूर्वापरसंबंध के अनुसार ही किसी वस्तु का बोध होता है।

नोट

2.1 सर्वनाम के भेद

हिंदी में कुल ग्यारह सर्वनाम हैं–मैं, तू, आप, यह, वह, जो, सो, कोई, कुछ, कौन, क्या। प्रयोग के अनुसार सर्वनाम के छह भेद हैं, जो इस प्रकार हैं–

सर्वनाम

↓

पुरुषवाचक | निजवाचक | निश्चयवाचक | अनिश्चयवाचक | संबंधवाचक | प्रश्नवाचक

पुरुषवाचक ↓

उत्तमपुरुष | मध्यमपुरुष | अन्यपुरुष

2.1.1 पुरुषवाचक सर्वनाम

'पुरुषवाचक सर्वनाम' पुरुषों (स्त्री या पुरुष) के नाम के बदले आते हैं। उत्तमपुरुष में लेखक या वक्ता आता है, मध्यमपुरुष में पाठक या श्रोता और अन्यपुरुष में लेखक और श्रोता को छोड़ अन्य लोग आते हैं। इसके तीन भेद हैं–

उत्तमपुरुष–मैं, हम।

मध्यमपुरुष–तू, तुम, आप।

अन्यपुरुष–वह, वे, यह, ये।

नोट्स सर्व (सब) नामों (संज्ञाओं) के बदले जो शब्द आते हैं, उन्हें सर्वनाम कहते हैं।

2.1.2 निजवाचक सर्वनाम

'निजवाचक सर्वनाम' का रूप 'आप' है। लेकिन, पुरुषवाचक के अन्यपुरुष वाले 'आप' से इसका प्रयोग बिलकुल अलग है। यह कर्ता का बोधक है, पर स्वयं कर्ता का काम नहीं करता। पुरुषवाचक 'आप' बहुवचन में आदर के लिए प्रयुक्त होता है। जैसे–आप मेरे सिर-आँखों पर हैं; आप क्या राय देते हैं? किंतु, निजवाचक 'आप' एक ही तरह दोनों वचनों में आता है और तीनों पुरुषों में इसका प्रयोग किया जा सकता है। **निजवाचक सर्वनाम 'आप' का प्रयोग निम्नलिखित अर्थों में होता है–**

(क) निजवाचक 'आप' का प्रयोग किसी संज्ञा या सर्वनाम के अवधारण (निश्चय) के लिए होता है। जैसे–मैं **आप** वहीं से आया हूँ; मैं **आप** वही कार्य कर रहा हूँ।

(ख) निजवाचक 'आप' का प्रयोग दूसरे व्यक्ति के निराकरण के लिए भी होता है। जैसे–उन्होंने मुझे रहने को कहा और **आप** चलते बने; वह औरों को नहीं, **अपने** को सुधार रहा है।

(ग) सर्वसाधारण के अर्थ में भी 'आप' का प्रयोग होता है। जैसे–**आप** भला तो जग भला; **अपने** से बड़ों का आदर करना उचित है।

(घ) अवधारण के अर्थ में कभी-कभी 'आप' के साथ 'ही' जोड़ा जाता है। जैसे–मैं **आप ही** चला आता था; यह काम **आप ही** हो गया; मैं यह काम **आप ही** कर लूँगा।

नोट

2.1.3 निश्चयवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम से वक्ता के पास या दूर की किसी वस्तु के निश्चय का बोध होता है, उसे 'निश्चयवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे–यह, वह। उदाहरणार्थ–पास की वस्तु के लिए–**यह** कोई नया काम नहीं है; दूर की वस्तु के लिए–रोटी मत खाओ, क्योंकि **वह** जली है।

2.1.4 अनिश्चयवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम से किसी निश्चित वस्तु का बोध न हो, उसे 'अनिश्चयवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे–कोई, कुछ। उदाहरणार्थ–**कोई**–ऐसा न हो कि **कोई** आ जाए; **कुछ**–उसने **कुछ** नहीं खाया।

2.1.5 संबंधवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम से वाक्य में किसी दूसरे सर्वनाम से संबंध स्थापित किया जाए, उसे 'संबंधवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे–**जो**, **सो**। उदाहरणार्थ–वह कौन है, जो पड़ा रो रहा है; वह जो न करे, सो थोड़ा।

2.1.6 प्रश्नवाचक सर्वनाम

प्रश्न करने के लिए जिन सर्वनामों का प्रयोग होता है, उन्हें 'प्रश्नवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे–कौन, क्या। उदाहरणार्थ–**कौन** आता है? तुम **क्या** खा रहे हो?

ध्यान रखना चाहिए कि 'कौन' का प्रयोग चेतन जीवों के लिए और 'क्या' का प्रयोग जड़ पदार्थों के लिए होता है।

संयुक्त सर्वनाम

रूस के हिंदी वैयाकरण डॉ० दीमशित्स ने एक और प्रकार के सर्वनाम का उल्लेख किया है और उसे 'संयुक्त सर्वनाम' कहा है। उन्हीं के शब्दों में, ''संयुक्त सर्वनाम, पृथक् श्रेणी के सर्वनाम हैं। सर्वनाम के सब भेदों से इनकी भिन्नता इसलिए है, क्योंकि उनमें एक शब्द नहीं, बल्कि एक से अधिक शब्द होते हैं। संयुक्त सर्वनाम स्वतंत्र रूप से या संज्ञा-शब्दों के साथ भी प्रयुक्त होता है।'' कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–जो कोई, सब कोई, हर कोई, और कोई, कोई और, जो कुछ, सब कुछ, और कुछ, कुछ और, कोई एक, एक कोई, कुछ एक, कुछ भी, कोई-न-कोई, कुछ-न-कुछ, कुछ-कुछ, कोई-कोई इत्यादि।

क्या आप जानते हैं हिंदी में कुल ग्यारह सर्वनाम हैं– मैं, तू, आप, यह, वह, जो, सो, कोई, कुछ, कौन, क्या।

2.2 सर्वनाम के रूपांतर (लिंग, वचन और कारक)

सर्वनाम का रूपांतर पुरुष, वचन और कारक की दृष्टि से होता है। इनमें लिंगभेद के कारण रूपांतर नहीं होता। जैसे–

वह खाता है।

वह खाती है।

संज्ञाओं के समान सर्वनाम के भी दो वचन होते हैं–एकवचन और बहुवचन। पुरुषवाचक और निश्चयवाचक सर्वनाम को छोड़ शेष सर्वनाम विभक्तिरहित बहुवचन में एकवचन के समान रहते हैं।

सर्वनाम में केवल सात कारक होते हैं। संबोधन कारक नहीं होता।

नोट

कारकों की विभक्तियाँ लगने से सर्वनामों के रूप में विकृति आ जाती है। जैसे–
मैं–मुझको, मुझे, मुझसे, मेरा; **तुम**–तुम्हें, तुम्हारा; **हम**–हमें, हमारा; **वह**–उसने, उसको, उसे, उससे, उसमें, उन्होंने, उनको; **यह**–इसने, इसे, इससे, इन्होंने, इनको, इन्हें, इनसे; **कौन**–किसने, किसको, किसे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. संज्ञाओं के समान सर्वनाम के भी दो वचन होते हैं– ....।
2. निज सर्वनाम का रूप .... है।
3. उत्तमपुरुष में लेखक या .... आता है।
4. मध्यपुरुष में पाठक या .... आते हैं।

2.3 सर्वनाम की कारक-रचना (रूप-रचना)

मैं (उत्तमपुरुष)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	मैं, मैंने	हम, हमने
कर्म	मुझे, मुझको	हमें, हमको
करण	मुझसे	हमसे
संप्रदान	मुझे, मेरे लिए	हमें, हमारे लिए
अपादान	मुझसे	हमसे
संबंध	मेरा, मेरे, मेरी	हमारा, हमारे, हमारी
अधिकरण	मुझमें, मुझपर	हममें, हमपर

तू (मध्यमपुरुष)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	तू, तूने	तुम, तुमने, तुमलोगों ने
कर्म	तुझको, तुझे	तुम्हें, तुमलोगों को
करण	तुझसे, तेरे द्वारा	तुमसे, तुम्हारे से, तुमलोगों से
सम्प्रदान	तुझको, तेरे लिए, तुझे	तुम्हें, तुम्हारे लिए, तुमलोगों के लिए
अपादान	तुझसे	तुमसे, तुमलोगों से
संबंध	तेरा, तेरी, तेरे	तुम्हारा-री, तुमलोगों का-की
अधिकरण	तुझमें, तुझपर	तुममें, तुमलोगों में-पर

वह (अन्यपुरुष)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	वह, उसने	वे, उन्होंने
कर्म	उसे, उसको	उन्हें, उनको
करण	उससे, उसके द्वारा	उनसे, उनके द्वारा

नोट

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
संप्रदान	उसको, उसे, उसके लिए	उनको, उन्हें, उनके लिए
अपादान	उससे	उनसे
संबंध	उसका, उसकी, उसके	उनका, उनकी, उनके
अधिकरण	उसमें, उसपर	उनमें, उनपर

आप (आदरसूचक)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	आपने	आपलोगों ने
कर्म	आपको	आपलोगों को
करण	आपसे	आपलोगों से
संप्रदान	आपको, के लिए	आपलोगों को, के लिए
अपादान	आपसे	आपलोगों से
सम्बन्ध	आपका, की, के	आपलोगों का, की, के
अधिकरण	आपमें, पर	आपलोगों में, पर

यह (निकटवर्ती)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	यह, इसने	ये, इन्होंने
कर्म	इसको, इसे	ये, इनको, इन्हें
करण	इससे	इनसे
संप्रदान	इसे, इसको	इन्हें, इनको
अपादान	इससे	इनसे
संबंध	इसका, की, के	इनका, की, के
अधिकरण	इसमें, इसपर	इनमें, इनपर

कोई (अनिश्चयवाचक)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	कोई, किसने	किन्हीं ने
कर्म	किसी को	किन्हीं को
करण	किसी से	किन्हीं से
संप्रदान	किसी को, किसी के लिए	किन्हीं को, किन्हीं के लिए
अपादान	किसी से	किन्हीं से
संबंध	किसी का, किसी की, किसी के	किन्हीं का, किन्हीं की, किन्हीं के
अधिकरण	किसी में, किसी पर	किन्हीं में, किन्हीं पर

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. सर्वनाम में केवल ························ कारक होते हैं।

   (क) सात (ख) आठ (ग) चार (घ) दो

6. 'संयुक्त सर्वनाम' ························ श्रेणी के सर्वनाम हैं।

   (क) द्वितीय (ख) पृथक् (ग) प्रथक (घ) इनमें से कोई नहीं

7. सर्वनाम का रूपांतर पुरुष, वचन और ························ से होता है।

   (क) कारक की दृष्टि (ख) संज्ञा की दृष्टि (ग) वचन की दृष्टि (घ) इनमें से कोई नहीं

8. कारकों की विभक्तियाँ लगने से सर्वनामों के रूप में ························ आ जाती है।

   (क) सुंदरता (ख) विकृति

   (ग) दोनों (घ) दोनों में से कोई नहीं

2.4 सर्वनाम का पद-परिचय

सर्वनाम का पद-परिचय करते समय सर्वनाम, सर्वनाम का भेद, पुरुष, लिंग, वचन, कारक और अन्य पदों से उसका संबंध बताना पड़ता है।

उदाहरण–वह अपना काम करता है।

इस वाक्य में, 'वह' और 'अपना' सर्वनाम है। इनका पद-परिचय होगा–

वह–पुरुषवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, पुल्लिग, एकवचन, कर्ताकारक, 'करता है' क्रिया का कर्ता।

अपना–निजवाचक सर्वनाम, अन्यपुरुष, पुल्लिग, एकवचन, संबंधकारक, 'काम' संज्ञा का विशेषण।

टास्क प्रश्नवाचक सर्वनाम की परिभाषा बताइए।

2.5 सारांश (Summary)

- सर्व (सब) नामों (संज्ञाओं) के बदले जो शब्द आते हैं, उन्हें 'सर्वनाम' कहते हैं। संज्ञा की अपेक्षा सर्वनाम की विलक्षणता यह है कि संज्ञा से जहाँ उसी वस्तु का बोध होता है, जिसका वह (संज्ञा) नाम है, वहाँ सर्वनाम में पूर्वापरसंबंध के अनुसार किसी भी वस्तु का बोध होता है।
- प्रयोग के अनुसार सर्वनाम के छह भेद हैं, जो इस प्रकार हैं–

  1. पुरुषवाचक 2. निजवाचक 3. निश्चयवाचक 4. अनिश्चयवाचक 5. संबंधवाचक 6. प्रश्नवाचक।
- सर्वनाम का रूपांतर पुरुष, वचन और कारक की दृष्टि से होता है। इनमें लिंगभेद के कारण रूपांतर नहीं होता।
- संज्ञाओं के समान सर्वनाम के भी दो वचन होते हैं–एकवचन और बहुवचन। पुरुषवाचक और निश्चयवाचक सर्वनाम को छोड़ शेष सर्वनाम विभक्ति रहित बहुवचन में एकवचन के समान रहते हैं।
- सर्वनाम में केवल सात कारक होते हैं। संबोधन कारक नहीं होता। कारकों की विभक्तियाँ लगने से सर्वनामों के रूप में विकृति आ जाती है।

नोट

2.6 शब्दकोश (Keywords)

पृथक् – अलग

संयुक्त – मिला हुआ

प्रयुक्त – प्रयोग किया हुआ

2.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. सर्वनाम के कितने भेद हैं? उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
2. निश्चयवाचक और अनिश्चयवाचक सर्वनाम में अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. लिंग, वचन और कारक की परिभाषा सहित एक-एक उदाहरण दीजिए।
4. सर्वनाम का पद-परिचय दीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. एकवचन और बहुवचन	2. आप	3. वक्ता	4. श्रोता
5. (क)	6. (ख)	7. (क)	8. (ख)।

2.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. सरल हिंदी व्याकरण और रचना–*वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. परिष्कृत हिंदी व्याकरण–*बद्रीनाथ कपूर, प्रभात प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*

नोट

इकाई–3 : विशेषण की परिभाषा एवं भेद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
3.1 विशेषण के भेद
    3.1.1 सार्वनामिक विशेषण
    3.1.2 गुणवाचक विशेषण
    3.1.3 संख्यावाचक विशेषण
3.2 प्रविशेषण
3.3 रूप-रचना
3.4 विशेषण का पद-परिचय
3.5 सारांश (Summary)
3.6 शब्दकोश (Keywords)
3.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
3.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- विशेषण के भेद जानने में।
- प्रविशेषण को जानने में।
- विशेषण का पद-परिचय जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

जो संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताए, उसे 'विशेषण' कहते हैं। जिसकी विशेषता बताई जाए, वह 'विशेष्य' कहलाता है। दूसरे शब्दों में विशेषण एक ऐसा विकारी शब्द है, जो हर हालत में संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताता है।

इसका अर्थ यह है कि विशेषणरहित संज्ञा से जिस वस्तु का बोध होता है, विशेषण लगने पर उसका अर्थ सीमित हो जाता है। जैसे, 'घोड़ा' संज्ञा से घोड़ा-जाति के सभी प्राणियों का बोध होता है, पर 'काला घोड़ा' कहने से केवल काले घोड़े का बोध होता है, सभी तरह के घोड़ों का नहीं। यहाँ 'काला' विशेषण से 'घोड़ा' संज्ञा की व्याप्ति मर्यादित (सीमित) हो गयी है। कुछ वैयाकरणों ने विशेषण को संज्ञा का एक उपभेद माना है; क्योंकि विशेषण भी वस्तु का परोक्ष नाम है। लेकिन, ऐसा मानना ठीक नहीं; क्योंकि विशेषण का उपयोग संज्ञा के बिना नहीं हो सकता।

3.1 विशेषण के भेद

नोट

गुण, संख्या और परिमाण के आधार पर विशेषण के भेदों का वर्गीकरण इस प्रकार है–

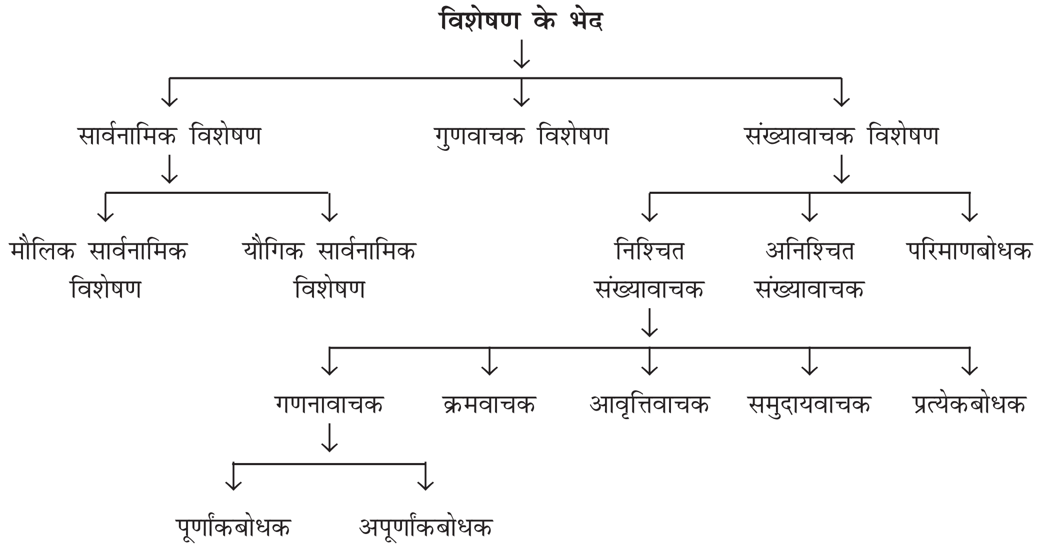

नोट्स जो संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताए उसे 'विशेषण' कहते हैं।

3.1.1 सार्वनामिक विशेषण

पुरुषवाचक और निजवाचक सर्वनाम (मैं, तू, वह) के सिवा अन्य सर्वनाम जब किसी संज्ञा के पहले आते हैं, तब वे 'सार्वनामिक विशेषण' कहलाते हैं। जैसे–वह नौकर नहीं आया; यह घोड़ा अच्छा है। यहाँ 'नौकर' और 'घोड़ा' संज्ञाओं के पहले विशेषण के रूप में 'वह' और 'यह' सर्वनाम आए हैं। अत:, ये सार्वनामिक विशेषण हैं। व्युत्पत्ति के अनुसार सार्वनामिक विशेषण के भी दो भेद हैं–(1) **मौलिक सार्वनामिक विशेषण**–जो बिना रूपांतर के संज्ञा के पहले आता है। जैसे–**यह** घर; **वह** लड़का; **कोई** नौकर इत्यादि। (2) **यौगिक सार्वनामिक विशेषण**–जो मूल सर्वनामों में प्रत्यय लगाने से बनते हैं। जैसे–**ऐसा** आदमी; **कैसा** घर; **जैसा** देश इत्यादि।

3.1.2 गुणवाचक विशेषण

जिस शब्द से संज्ञा का गुण, दशा, स्वभाव आदि लक्षित हो, उसे 'गुणवाचक विशेषण' कहते हैं। विशेषणों में इनकी संख्या सबसे अधिक है। इनके कुछ मुख्य रूप इस प्रकार हैं–

काल–नया, पुराना, ताजा, भूत, वर्तमान, भविष्य, प्राचीन, अगला, पिछला, मौसमी, आगामी, टिकाऊ।

स्थान–उजाड़, चौरस, भीतरी, बाहरी, ऊपरी, सतही, पूरबी, पछियाँ, दायाँ, बायाँ, स्थानीय, देशीय, क्षेत्रीय, असमी, पंजाबी, अमेरिकी, भारतीय।

आकार–गोल, चौकोर, सुडौल, समान, पीला, सुंदर, नुकीला, लंबा, चौड़ा, सीधा, तिरछा।

रंग–लाल, पीला, नीला, हरा, सफेद, काला, बैंगनी, सुनहरा, चमकीला, धुँधला, फीका।

दशा–दुबला, पतला, मोटा, भारी, पिघला, गाढ़ा, गीला, सूखा, घना, गरीब, उद्यमी, पालतू, रोगी।

नोट

गुण–भला, बुरा, उचित, अनुचित, सच्चा, झूठा, पापी, दानी, न्यायी, दुष्ट, सीधा, शांत।

द्रष्टव्य–गुणवाचक विशेषणों में 'सा' सादृश्यवाचक पद जोड़कर गुणों को कम भी किया जाता है। जैसे–बड़ा-सा, ऊँची-सी, पीला-सा, छोटी-सी।

3.1.3 संख्यावाचक विशेषण

जिन शब्दों से संज्ञा या सर्वनाम की संख्या लक्षित होती हो, उसे 'संख्यावाचक विशेषण' कहते हैं। जैसे–**चार** घोड़े, **तीस** दिन,, **कुछ** लोग, **सब** लड़के इत्यादि। यहाँ चार, तीस, कुछ और सब–संख्यावाचक विशेषण हैं।

संख्यावाचक विशेषण के तीन मुख्य भेद हैं–**(1) निश्चित संख्यावाचक, (2) अनिश्चित संख्यावाचक, (3) परिमाणबोधक।** पहले प्रकार के विशेषण से वस्तु की निश्चित संख्या का बोध होता है। जैसे–**एक** लड़का, **पचीस** रुपये आदि। दूसरी तरह के विशेषण में वस्तु की संख्या अनिश्चित रहती है। जैसे–**कुछ** लोग, **सब** लोग।

प्रयोग के अनुसार निश्चित संख्यावाचक विशेषण के निम्नांकित प्रकार हैं–

(क) गणनावाचक विशेषण–एक, दो, तीन।

(ख) क्रमवाचक विशेषण–पहला, दूसरा, तीसरा।

(ग) आवृत्तिवाचक विशेषण–दूना, तिगुना, चौगुना।

(घ) समुदायवाचक विशेषण–दोनों, तीनों, चारों।

(ङ) प्रत्येकबोधक विशेषण–प्रत्येक, हर-एक, दो-दो, सवा-सवा।

गणनावाचक संख्यावाचक विशेषण के भी दो भेद हैं–(1) पूर्णांकबोधक विशेषण। जैसे–एक, दो, चार, सौ, हजार। (2) अपूर्णांकबोधक विशेषण। जैसे–पाव, आध, पौन, सवा। पूर्णांकबोधक विशेषण शब्दों में लिखे जाते हैं या अंकों में। **बड़ी-बड़ी निश्चित संख्याएँ अंकों में और छोटी-छोटी तथा बड़ी-बड़ी अनिश्चित संख्याएँ शब्दों में लिखनी चाहिए।**

क्या आप जानते हैं जिसकी विशेषता बताई जाए, वह 'विशेष्य' कहलाता है।

परिमाणबोधक विशेषण

संख्यावाचक विशेषण का एक मुख्य भेद परिमाणबोधक है। **यह किसी वस्तु की नाप या तौल का बोध कराता है।** जैसे–**सेर** भर दूध, **तोला** भर सोना, **थोड़ा** पानी, **कुछ** पानी, **सब** धन, **और** घी लाओ इत्यादि। यहाँ भी निश्चय और अनिश्चय के आधार पर परिमाणबोधक विशेषण के दो भेद किये गये हैं–

1. **निश्चित परिमाणबोधक विशेषण–दो सेर** घी, **दस हाथ** जगह, **चार गज** मलमल।
2. **अनिश्चित परिमाणबोधक विशेषण–बहुत** दूध, **सब** धन, **पूरा** आनंद इत्यादि।

3.2 प्रविशेषण

हिंदी में कुछ विशेषणों के भी विशेषण होते हैं, इन्हें 'प्रविशेषण' कहते हैं; जैसे–'राम बहुत तेज विद्यार्थी है।' इसमें 'तेज' विशेषण है और उसका भी विशेषण है 'बहुत'।

निम्नलिखित वाक्यों में मोटे-काले अक्षरों में छपे शब्द प्रविशेषण हैं–

क्षत्रिय **बड़े** साहसी होते हैं।

नोट

अर्चना **अत्यंत** सुंदर है।

कश्मीरी सेब **सिंदूरी** लाल होता है।

पं. कामताप्रसाद गुरु ने इसे 'अंतर्विशेषण' कहा है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. हिंदी में कुछ विशेषणों के भी विशेषण होते हैं, इन्हें .... कहते हैं।
2. जिस शब्द से संज्ञा के गुण, दशा, स्वभाव आदि का बोध हो, उसे .... कहते हैं।
3. जिन शब्दों से संज्ञा या सर्वनाम की संख्या का बोध हो, उसे .... कहते हैं।
4. संख्यावाचक विशेषण का एक मुख्य भेद .... है।

3.3 रूप-रचना

विशेष्य और विशेषण में संबंध

वाक्य में विशेषण का प्रयोग दो प्रकार से होता है–कभी विशेषण विशेष्य के पहले प्रयुक्त होता है और कभी विशेष्य के बाद। अत:, प्रयोग की दृष्टि से विशेषण के दो भेद हैं–विशेष्य-विशेषण और विधेय-विशेषण।

जो विशेष्य के पूर्व आये वह **विशेष्य-विशेषण** होता है; जैसे–

सतीश **चंचल** बालक है।

प्रभा **सुशील** कन्या है।

इन वाक्यों में 'चंचल' और 'सुशील' क्रमश: बालक और कन्या के विशेषण हैं। अत:, ये दोनों विशेष्य-विशेषण हैं।

जो विशेषण-विशेष्य और क्रिया के बीच आये, उसे **विधेय-विशेषण** कहते हैं; जैसे–

मेरा कुत्ता **काला** है।

मेरा लड़का **आलसी** है।

इनमें 'काला' और 'आलसी' विशेषण हैं, जो क्रमश: 'कुत्ता' और 'लड़का' के बाद प्रयुक्त हुए हैं। ये दोनों विधेय-विशेषण हैं।

यहाँ ध्यान देने की अन्य बातें इस प्रकार हैं–

(क) विशेषण के लिंग, वचन आदि विशेष्य के लिंग, वचन आदि के अनुरूप होते हैं, चाहे विशेषण विशेष्य के पहले आये या पीछे। जैसे–अच्छे लड़के पढ़ते हैं। राधा भली लड़की है।

(ख) यदि एक ही विशेषण के अनेक विशेष्य हों, तो विशेषण के लिंग और वचन समीप वाले विशेष्य के लिंग, वचन के अनुसार होंगे। जैसे–नये पुरुष और नारियाँ, नयी धोती और कुरता।

विशेषणों की रचना

विशेषण के रूप निम्नलिखित स्थितियों में परिवर्तित होते हैं–

1. रूप-रचना की दृष्टि से विशेषण विकारी और अविकारी दोनों होते हैं। अविकारी विशेषणों के रूपों में परिवर्तन नहीं होते। ये अपने मूल रूप में बने रहते हैं। जैसे–लाल, सुंदर, चंचल, गोल, भारी, सुडौल इत्यादि।

नोट

2. कुछ विशेषण संज्ञाओं में प्रत्यय लगाकर बनते हैं। जैसे–

प्रत्यय	**संज्ञा**	**विशेषण**
इक	धर्म	धार्मिक
ईय	जाति	जातीय
वान	धन	धनवान
ई	दान	दानी
ईला	चमक	चमकीला
मान्	श्री	श्रीमान्

3. दो या अधिक शब्दों के मेल से भी विशेषण बनते हैं। जैसे–चलता-फिरता, टेढ़ा-मेढ़ा आदि।
4. आकारांत विशेषण लिंग, वचन और कारक के अनुसार बदलकर 'ए' या 'ई' रूप बन जाते हैं। जैसे–

पुल्लिंग	**स्त्रीलिंग**
एकवचन–काला, बड़ा, ऐसा	काली, बड़ी, ऐसी
बहुवचन–काले, बड़े, ऐसे	काली, बड़ी, ऐसी

5. सार्वनामिक विशेषण भी वचन और कारक के अनुसार उसी तरह रूपांतरित होते हैं जिस तरह सर्वनाम। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
वह बालक	वे बालक
उस लड़के का	उन लड़कों का

6. जब संज्ञा का लोप रहता है और विशेषण संज्ञा का काम देता है, तब उसका रूपांतर विशेषण के ढंग से नहीं, संज्ञा के ढंग से होता है। सामान्यत: विशेषण के साथ परसर्ग नहीं लगता, विशेष्य के साथ लगता है, किंतु संज्ञा बन जाने पर विशेषण पद के साथ परसर्ग लगता है। जैसे–

   बड़ों की बात माननी चाहिए।

   वीरों ने सब कुछ कर दिखाया।

   उसने सुंदरी से पूछा।

   विद्वानों का आदर करना चाहिए।

तुलनात्मक विशेषण

दो या दो से अधिक वस्तुओं या भावों के गुण, मान आदि के परस्पर मिलान का विशेषण 'तुलनात्मक विशेषण' कहलाता है। हिंदी व्याकरण में इस विषय पर बहुत कम विचार हुआ है; क्योंकि हिंदी में विशेषणों की तुलना उस ढंग से नहीं होती, जिस तरह अंग्रेजी में होती है। अंग्रेजी व्याकरण में 'डिग्री' (Degree) के अंतर्गत तुलना की तीन स्थितियाँ हैं–Positive, Comparative और Superlative.

इनके शब्दरूप इस प्रकार हैं–

Positive	*Comparative*	*Superlative*
Good	Better	Best
Big	Bigger	Biggest
Large	larger	Largest
Ugly	Uglier	Ugliest

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अंग्रेजी में विशेषणों की तुलना करते समय शब्दों के रूप बदल जाते हैं। हिंदी की स्थिति अंग्रेजी से भिन्न है। हिंदी में तुलना करने पर विशेषणों के रूप ज्यों-के-त्यों रहते हैं, उनमें विकार या परिवर्तन नहीं होता। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

श्याम मोहन से अधिक ईमानदार है।

दिलीप की पुस्तक प्रदीप से कीमती है।

अनूप अपने वर्ग में सबसे तेज विद्यार्थी है।

इन वाक्यों में 'ईमानदार', 'कीमती' और 'तेज' विशेषण हैं। दो व्यक्तियों की तुलना से इन शब्दों के रूप नहीं बदले। हिंदी में 'से', 'अपेक्षा', 'सामने', 'बनिस्बत', 'सबमें', 'सबसे' लगाकर विशेषणों की तुलना की जाती है। कुछ उदाहरण और लें–

वह राम की **बनिस्बत** अच्छा है।

सुशील की **अपेक्षा** गणेश अधिक शिष्ट है।

यह **सबसे** अच्छी पुस्तक है।

किंतु, संस्कृत में विशेषणों में 'तर' और 'तम' प्रत्यय लगाकर भी 'तुलना' की जाती है। संस्कृत में अंग्रेजी की ही तरह विशेषण के रूप बदलते हैं। जैसे–श्रेष्ठ, श्रेष्ठतर और श्रेष्ठतम। हिंदी में शब्दों के इन तीन रूपों को तीन अवस्थाओं में रखा गया है–(1) मूलावस्था (Positive), (2) उत्तरावस्था (Comparative) और (3) उत्तमावस्था (Superlative)। इस दृष्टि से विशेषणों के रूप इस प्रकार होते हैं–

मूलावस्था	**उत्तरावस्था**	**उत्तमावस्था**
कोमल	कोमलतर	कोमलतम
प्रिय	प्रियतर	प्रियतम
लघु	लघुतर	लघुतम
निम्न	निम्नतर	निम्नतम
बृहत्	बृहत्तर	बृहत्तम
निकृष्ट	निकृष्टतर	निकृष्टतम
सुंदर	सुंदरतर	सुंदरतम
महत्	महत्तर	महत्तम
उच्च	उच्चतर	उच्चतम
अधिक	अधिकतर	अधिकतम

मूलावस्था–इसमें विशेषण अन्य किसी विशेषण से तुलित न होकर सीधे व्यक्त होता है। दूसरे शब्दों में, इस अवस्था में किसी विशेषण के गुण या दोष की तुलना दूसरी वस्तु से नहीं की जाती। जैसे–सुंदर, मधुर, महत्, वीर।

ऊपर दिये गये सीमित शब्दों के रूप केवल संस्कृतनिष्ठ हिंदी में चलते हैं। हिंदी की प्रकृति संस्कृत से भिन्न होने के कारण सामान्यत: 'तर' के स्थान पर 'से' और 'में' का और 'तम' के स्थान पर 'सबसे' और 'सबमें' जैसे शब्दों का प्रयोग अधिक होता है। इतना ही नहीं, 'से अधिक', 'से ज्यादा', 'से भी अधिक', 'से कम', 'से भी कम', 'से कुछ कम', 'से बढ़कर', 'से कहीं' जैसे प्रत्यय-पदों का भी प्रयोग होता है। जैसे–

से अधिक–हरि श्याम से अधिक बड़ा है।

से भी अधिक–हरि श्याम से भी अधिक बड़ा है।

से कहीं–वह तुमसे कहीं अच्छा है।

से बढ़कर–वह तुमसे बढ़कर है।

नोट

टास्क तुलनात्मक विशेषण से आप क्या समझते हैं?

उत्तरावस्था–इसमें विशेषण दो वस्तुओं की तुलना में होता है और उनमें किसी एक वस्तु के गुण या दोष अधिक बताये जाते हैं। जैसे–घोषबाबू घनश्याम से **अधिक** समझदार हैं।

उत्तमावस्था–इसमें विशेषण द्वारा किसी वस्तु को सबसे अधिक गुणशाली या दोषी बताया जाता है। जैसे–हमारे कॉलेज में नरेंद्र **सबसे अच्छा** खिलाड़ी है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. रूप-रचना की दृष्टि से विशेषण विकारी और .... दोनों होते हैं।
   (क) अविकारी (ख) विशेष्य
   (ग) दोनों (घ) दोनों में से कोई नहीं
6. पूर्णांक बोधक विशेषण शब्दों में लिखे जाते हैं या .... में।
   (क) अंकों में (ख) विशेषणों (ग) प्रविशेषण में (घ) इनमें से कोई नहीं
7. कुछ .... ने विशेषण को संज्ञा का एक उपभेद माना है।
   (क) विद्वानों (ख) वैयाकरणों (ग) आचार्यों (घ) कवियों
8. जो विशेष्य के पूर्व आए वह .... होता है।
   (क) विशेष्य-विशेषण (ख) विधेय-विशेषण (ग) विशेषण (घ) आधार-विशेषण

3.4 विशेषण का पद-परिचय

विशेषण के पद-परिचय में संज्ञा और सर्वनाम की तरह लिंग, वचन, कारक और विशेष्य बताना चाहिए।

उदाहरण–यह तुम्हें बापू के अमूल्य गुणों की थोड़ी-बहुत जानकारी अवश्य कराएगा।

इस वाक्य में **अमूल्य** और **थोड़ी-बहुत** विशेषण हैं। इसका पद-परिचय इस प्रकार होगा–

अमूल्य–विशेषण, गुणवाचक, पुल्लिंग, बहुवचन, अन्यपुरुष, संबंधवाचक, 'गुणों' इसका विशेष्य।

थोड़ी-बहुत–विशेषण, अनिश्चित संख्यावाचक, स्त्रीलिंग, कर्मवाचक, 'जानकारी' इसका विशेष्य।

3.5 सारांश (Summary)

- जो संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताए, उसे 'विशेषण' कहते हैं। जिसकी विशेषता बताई जाए, वह 'विशेष्य' कहलाता है।
- गुण, संख्या और परिमाण के आधार पर विशेषण के भेदों का वर्गीकरण इस प्रकार है–
  1. सार्वनामिक विशेषण 2. गुणवाचक विशेषण 3. संख्यावाचक विशेषण।
- हिंदी में कुछ विशेषणों के भी विशेषण होते हैं, इन्हें 'प्रविशेषण' कहते हैं; जैसे–'राम बहुत तेज विद्यार्थी है।' इसमें 'तेज' विशेषण है और उसका भी विशेषण है 'बहुत'।
- वाक्य में विशेषण का प्रयोग दो प्रकार से होता है–कभी विशेषण विशेष्य के पहले प्रयुक्त होता है और कभी विशेष्य के बाद। अतः, प्रयोग की दृष्टि से विशेषण के दो भेद हैं–विशेष्य-विशेषण और विधेय-विशेषण। जो विशेष्य के पूर्व आये वह **विशेष्य-विशेषण** होता है।

- जो विशेषण-विशेष्य और क्रिया के बीच आये, उसे **विधेय-विशेषण** कहते हैं।
- दो या दो से अधिक वस्तुओं या भावों के गुण, मान आदि के परस्पर मिलान का विशेषण 'तुलनात्मक विशेषण' कहलाता है।

3.6 शब्दकोश (Keywords)

संस्कृतनिष्ठ – संस्कृत से युक्त

सामान्यतः – सामान्य रूप से

अविकारी – जिसमें कोई विकार न हो

3.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. संख्यावाचक विशेषण को उदाहरण सहित समझाए।
2. प्रविशेषण से क्या तात्पर्य है? उदाहरणसहित बताइए।
3. विशेष्य और विशेषण में अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. विशेषण का पद-परिचय दीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. प्रविशेषण	2. गुणवाचक विशेषण	3. संख्यावाचक विशेषण	4. परिमाणबोधक
5. (क)	6. (क)	7. (ख)	8. (क)।

3.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*
2. मुग्धबोध हिंदी व्याकरण–*कृष्ण नारायण प्रसाद मागध।*
3. हिंदी व्याकरण की अभ्यास पुस्तिका–*जी.पी. शर्मा, ओरिएंट ब्लैक स्वान।*

नोट

इकाई–4 : क्रिया की परिभाषा एवं भेद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
4.1 धातु
4.2 धातु के भेद
4.2.1 यौगिक धातु की रचना
4.2.2 सकर्मक क्रिया
4.2.3 अकर्मक क्रिया
4.2.4 संयुक्त क्रिया
4.3 वाच्य
4.4 काल
4.5 क्रिया के पक्ष (रूप)
4.6 क्रिया का पद-परिचय
4.7 सारांश (Summary)
4.8 शब्दकोश (Keywords)
4.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
4.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- धातु के भेद जानने में।
- क्रिया के रूप जानने में।
- क्रिया का पद-परिचय जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

जिस शब्द से किसी काम का करना या होना समझा जाए, उसे 'क्रिया' कहते हैं। जैसे–पढ़ना, खाना, पीना, जाना इत्यादि। क्रिया विकारी शब्द है, जिसके रूप लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार बदलते हैं। यह हिंदी की अपनी विशेषता है।

4.1 धातु

क्रिया का मूल 'धातु' है। 'धातु' क्रियापद के उस अंश को कहते हैं, जो किसी क्रिया के प्रायः सभी रूपों में पाया जाता है। तात्पर्य यह है कि जिन मूल अक्षरों से क्रियाएँ बनती हैं, उन्हें 'धातु' कहते हैं। उदाहरणार्थ,

नोट

'पढ़ना' क्रिया को लें। इसमें 'ना' प्रत्यय है, जो मूल धातु 'पढ़' में लगा है। इस प्रकार, 'पढ़ना' क्रिया की धातु 'पढ़' है। इसी प्रकार, 'खाना' क्रिया 'खा' धातु में 'ना' प्रत्यय लगाने से बनी है। हिंदी में क्रिया का सामान्य रूप मूलधातु में 'ना' जोड़कर बनाया जाता है। जैसे–चल + ना = चलना, देख + ना = देखना। इन सामान्य रूपों में 'ना' हटाकर धातु का रूप ज्ञात किया जा सकता है। धातु की यह एक मोटी पहचान है।

हिंदी में क्रियाएँ धातुओं के अलावा संज्ञा और विशेषण से भी बनती है; जैसे–

काम + आना = कमाना, चिकना + आना = चिकनाना, दुहरा + आना = दुहराना।

4.2 धातु के भेद

व्युत्पत्ति अथवा शब्द-निर्माण की दृष्टि से धातु दो प्रकार की होती है–(1) **मूल धातु**, और (2) **यौगिक धातु।** मूल धातु स्वतंत्र होती है। यह किसी दूसरे शब्द पर आश्रित नहीं होती। जैसे–खा, देख, पी इत्यादि। यौगिक धातु किसी प्रत्यय के योग से बनती है। जैसे–'खाना' से खिला, 'पढ़ना' से पढ़ा। इस प्रकार धातुएँ अनंत हैं–कुछ एकाक्षरी, दो अक्षरी, तीन अक्षरी और चार अक्षरी धातुएँ होती हैं।

नोट्स जिन मूल अक्षरों से क्रियाएँ बनती हैं, उन्हें 'धातु' कहते हैं।

4.2.1 यौगिक धातु की रचना

यौगिक धातु तीन प्रकार से बनती है–(1) धातु में प्रत्यय लगाने से अकर्मक से सकर्मक और प्रेरणार्थक धातुएँ बनती हैं; (2) कई धातुओं को संयुक्त करने से संयुक्त धातु बनती है; (3) संज्ञा या विशेषण से नामधातु बनती है।

प्रेरणार्थक क्रिया (धातु)–जिन क्रियाओं से इस बात का बोध हो कि कर्ता स्वयं कार्य न कर किसी दूसरे को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, वे 'प्रेरणार्थक क्रियाएँ' (Causative Verb) ***कहलाती हैं।*** जैसे–काटना से कटवाना, करना से कराना। एक अन्य उदाहरण इस प्रकार है–मोहन मुझसे किताब लिखाता है। इस वाक्य में मोहन (कर्ता) स्वयं किताब न लिखकर 'मुझे' दूसरे व्यक्ति को लिखने की प्रेरणा देता है।

प्रेरणार्थक क्रियाओं के दो रूप हैं। जैसे–'गिरना' से 'गिराना' और 'गिरवाना'। दोनों क्रियाएँ एक के बाद दूसरी प्रेरणा में हैं। याद रखें, अकर्मक क्रिया प्रेरणार्थक होने पर सकर्मक (कर्म लेने वाली) हो जाती है। जैसे–

राज **लजाता** है।

वह **राम को** लजवाता है।

प्रेरणार्थक क्रियाएँ सकर्मक और अकर्मक दोनों क्रियाओं से बनती हैं। ऐसी क्रियाएँ हर स्थिति में सकर्मक ही रहती हैं। जैसे–मैंने उसे हँसाया; मैंने उससे किताब लिखवाई। पहले में कर्ता अन्य (कर्म) को हँसाता है और दूसरे में कर्ता दूसरे को किताब लिखने को प्रेरित करता है। इस प्रकार हिंदी में प्रेरणार्थक क्रियाओं के दो रूप चलते हैं। प्रथम में 'ना' का और द्वितीय में 'वाना' का प्रयोग होता है–हँसाना–हँसवाना।

मूल	**द्वितीय-तृतीय (प्रेरणा)**
उठना	उठाना, उठवाना
उड़ना	उड़ाना, उड़वाना
चलना	चलाना, चलवाना
देना	दिलाना, दिलवाना
जीना	जिलाना, जिलवाना

नोट

मूल	द्वितीय-तृतीय (प्रेरणा)
लिखना	लिखाना, लिखवाना
जगना	जगाना, जगवाना
सोना	सुलाना, सुलवाना
पीना	पिलाना, पिलवाना
देना	दिलाना, दिलवाना

यौगिक क्रिया–***दो या दो से अधिक धातुओं और दूसरे शब्दों के संयोग से या धातुओं में प्रत्यय लगाने से जो क्रिया बनती है, उसे 'यौगिक क्रिया' कहा जाता है।*** जैसे–चलना-चलाना, हँसना-हँसाना, चलना-चल देना।

नामधातु (Nominal Verb)–***जो धातु संज्ञा या विशेषण से बनती है, उसे 'नामधातु' कहते हैं।*** देखें–

संज्ञा से	–	हाथ	–	हथियाना।
,,	–	बात	–	बतियाना।
विशेषण से	–	चिकना	–	चिकनाना।
,,	–	गरम	–	गरमाना।

रचना की दृष्टि से क्रिया के भेद–ऊपर व्युत्पत्ति की दृष्टि से क्रिया के भेद किये गये। रचना की दृष्टि से क्रिया के सामान्यत: दो भेद हैं–(1) **सकर्मक**, और (2) **अकर्मक।**

4.2.2 सकर्मक क्रिया

'सकर्मक क्रिया' उसे कहते हैं, जिसका कर्म हो या जिसके साथ कर्म की संभावना हो, अर्थात् जिस क्रिया के व्यापार का संचालन तो कर्ता से हो, पर जिसका फल या प्रभाव किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु, अर्थात् कर्म पर पड़े। उदाहरणार्थ–श्याम आम खाता है। इस वाक्य में 'श्याम' कर्ता है, 'खाने' के साथ उसका कर्तृरूप से संबंध है। प्रश्न होता है, क्या खाता है? उत्तर है, 'आम'। इस तरह 'आम' का सीधा 'खाने' से संबंध है। अत: 'आम' कर्मकारक है। यहाँ श्याम के खाने का फल 'आम' पर, अर्थात् कर्म पर पड़ता है। इसलिए, 'खाना' क्रिया सकर्मक है। कभी-कभी सकर्मक क्रिया का कर्म छिपा रहता है। जैसे–वह गाता है; वह पढ़ता है। यहाँ 'गीत' और 'पुस्तक' जैसे कर्म छिपे हैं।

क्या आप जानते हैं क्रिया का मूल 'धातु' है।

4.2.3 अकर्मक क्रिया

जिन क्रियाओं का व्यापार और फल कर्ता पर हो, वे 'अकर्मक' कहलाती हैं। अकर्मक क्रियाओं का 'कर्म' नहीं होता, क्रिया का व्यापार और फल दूसरे पर न पड़कर कर्ता पर पड़ता है। उदाहरण के लिए–श्याम सोता है। इसमें 'सोना' क्रिया अकर्मक है। 'श्याम' कर्ता है, 'सोने' की क्रिया उसी के द्वारा पूरी होती है। अत:, सोने का फल भी उसी पर पड़ता है। इसलिए, 'सोना' क्रिया अकर्मक है।

सकर्मक और अकर्मक क्रियाओं की पहचान

सकर्मक और अकर्मक क्रियाओं की पहचान, 'क्या', 'किसे' या 'किसको' आदि प्रश्न करने से होती है। यदि कुछ उत्तर मिले, तो समझना चाहिए कि क्रिया सकर्मक है और यदि न मिले तो अकर्मक होगी। उदाहरणार्थ, मारना, पढ़ना, खाना–इन क्रियाओं में 'क्या' 'किसे' लगाकर प्रश्न किए जाएँ तो इनके उत्तर इस प्रकार होंगे–

नोट

प्रश्न–किसे मारा? **उत्तर**–किशोर को मारा। **प्रश्न**–क्या खाया? **उत्तर**–खाना खाया। **प्रश्न**–क्या पढ़ता है। **उत्तर**–किताब पढ़ता है।	इन सब उदाहरणों में क्रियाएँ सकर्मक हैं।

कुछ क्रियाएँ अकर्मक और सकर्मक दोनों होती हैं और प्रसंग अथवा अर्थ के अनुसार इनके भेद का निर्णय किया जाता है। जैसे–

अकर्मक	**सकर्मक**
उसका सिर **खुजलाता** है।	वह अपना सिर **खुजलाता** है।
बूँद-बूँद से घड़ा **भरता** है।	मैं घड़ा **भरता** हूँ।
तुम्हारा जी **ललचाता** है।	ये चीजें तुम्हारा जी **ललचाती** हैं।
जी **घबराता** है।	विपदा मुझे **घबराती** है।
वह **लजा** रही है।	वह तुम्हें **लजा** रही है।

द्रष्टव्य–*जिन धातुओं का प्रयोग अकर्मक और सकर्मक दोनों रूपों में होता है, उन्हें उभयविध धातु कहते हैं।*

क्रिया के भेद इस प्रकार हैं–

द्विकर्मक क्रिया

कुछ क्रियाएँ एक कर्म वाली और दो कर्म वाली होती हैं। जैसे–राम ने रोटी खायी। इस वाक्य में कर्म एक ही है–'रोटी'। किंतु 'मैं लड़के को वेद पढ़ाता हूँ' में दो कर्म हैं–'लड़के को' और 'वेद'।

4.2.4 संयुक्त क्रिया

जो क्रिया दो या दो से अधिक धातुओं के मेल से बनती है, उसे संयुक्त क्रिया कहते हैं। जैसे–घनश्याम रो चुका, किशोर रोने लगा, वह घर पहुँच गया। इन वाक्यों में 'रो चुका', 'रोने लगा' और 'पहुँच गया' संयुक्त क्रियाएँ हैं। विधि और आज्ञा को छोड़कर सभी क्रियापद दो या अधिक क्रियाओं के योग से बनते हैं, किंतु संयुक्त क्रियाएँ इनसे भिन्न हैं, क्योंकि जहाँ एक ओर साधारण क्रियापद 'हो', 'रो', 'सो', 'खा' इत्यादि धातुओं से बनते हैं, वहाँ दूसरी ओर संयुक्त क्रियाएँ 'होना', 'आना', 'जाना', 'रहना', 'रखना', 'उठाना', 'लेना', 'पाना', 'पड़ना', 'डालना', 'सकना', 'चुकना', 'लगना', 'करना', 'भेजना', 'चाहना' इत्यादि क्रियाओं के योग से बनती हैं।

इसके अतिरिक्त, सकर्मक तथा अकर्मक दोनों प्रकार की संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं। जैसे–

अकर्मक क्रिया से–लेट जाना, गिर पड़ना।

सकर्मक क्रिया से–बेच लेना, काम करना, बुला लेना, मार देना।

संयुक्त क्रिया की एक विशेषता यह है कि उसकी पहली क्रिया प्रायः प्रधान होती है और दूसरी उसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न करती है। जैसे–मैं पढ़ सकता हूँ। इसमें 'सकना' क्रिया 'पढ़ना' क्रिया के अर्थ में विशेषता उत्पन्न करती है। हिंदी में संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग अधिक होता है।

संयुक्त क्रिया के भेद

अर्थ के अनुसार संयुक्त क्रिया के 11 मुख्य भेद हैं–

1. **आरम्भबोधक**–***जिस संयुक्त क्रिया से क्रिया के आरम्भ होने का बोध होता है, उसे 'आरम्भबोधक संयुक्त क्रिया' कहते हैं।*** जैसे–वह पढ़ने लगा, पानी बरसने लगा, राम खेलने लगा।

नोट

2. **समाप्तिबोधक**–***जिस संयुक्त क्रिया से मुख्य क्रिया की पूर्णता, व्यापार की समाप्ति का बोध हो, वह 'समाप्तिबोधक संयुक्त क्रिया' है।*** जैसे–वह खा चुका है; वह पढ़ चुका है। धातु के आगे 'चुकना' जोड़ने से समाप्तिबोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं।
3. **अवकाशबोधक**–***जिससे क्रिया को निष्पन्न करने के लिए अवकाश का बोध हो, वह 'अवकाशबोधक संयुक्त क्रिया' है।*** जैसे–वह मुश्किल से सोने पाया; जाने न पाया।
4. **अनुमतिबोधक**–***जिससे कार्य करने की अनुमति दिए जाने का बोध हो, वह 'अनुमतिबोधक संयुक्त क्रिया' है।*** जैसे–मुझे जाने दो; मुझे बोलने दो। यह क्रिया 'देना' धातु के योग से बनती है।
5. **नित्यताबोधक**–***जिससे कार्य की नित्यता, उसके बंद न होने का भाव प्रकट हो, वह 'नित्यताबोधक संयुक्त क्रिया' है।*** जैसे–हवा चल रही है; पेड़ बढ़ता गया; तोता पढ़ता रहा। मुख्य क्रिया के आगे 'जाना' या 'रहना' जोड़ने से नित्यताबोधक संयुक्त क्रिया बनती है।
6. **आवश्यकताबोधक**–***जिससे कार्य की आवश्यकता या कर्तव्य का बोध हो, वह 'आवश्यकताबोधक संयुक्त क्रिया' है।*** जैसे–यह काम मुझे करना पड़ता है; तुम्हें यह काम करना चाहिए। साधारण क्रिया के साथ 'पड़ना', 'होना' या 'चाहिए' क्रियाओं को जोड़ने से आवश्यकताबोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं।
7. **निश्चयबोधक**–***जिस संयुक्त क्रिया से मुख्य क्रिया के व्यापार की निश्चयता का बोध हो, उसे 'निश्चयबोधक संयुक्त क्रिया' कहते हैं।*** जैसे–वह बीच ही में बोल उठा; उसने कहा–मैं मार बैठूँगा, वह गिर पड़ा; अब दे ही डालो। इस प्रकार की क्रियाओं में पूर्णता और नित्यता का भाव वर्तमान है।
8. **इच्छाबोधक**–***इससे क्रिया के करने की इच्छा प्रकट होती है।*** जैसे–वह घर आना चाहता है; मैं खाना चाहता हूँ। क्रिया के साधारण रूप में 'चाहना' क्रिया जोड़ने से इच्छाबोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं।
9. **अभ्यासबोधक**–***इससे क्रिया के करने के अभ्यास का बोध होता है।*** सामान्य भूतकाल की क्रिया में 'करना' क्रिया लगाने से अभ्यासबोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं। जैसे–यह पढ़ा करता है; तुम लिखा करते हो; मैं खेला करता हूँ।
10. **शक्तिबोधक**–***इससे कार्य करने की शक्ति का बोध होता है।*** जैसे–मैं चल सकता हूँ, वह बोल सकता है। इसमें 'सकना' क्रिया जोड़ी जाती है।
11. **पुनरूक्त संयुक्त क्रिया**–***जब दो समानार्थक अथवा समान ध्वनि वाली क्रियाओं का संयोग होता है, तब उन्हें 'पुनरुक्त संयुक्त क्रिया' कहते हैं।*** जैसे–वह पढ़ा-लिखा करता है; वह यहाँ प्राय: आया-जाया करता है; पड़ोसियों से बराबर मिलते-जुलते रहो।

सहायक क्रिया

सहायक क्रियाएँ मुख्य क्रिया के रूप में अर्थ को स्पष्ट और पूरा करने में सहायक होती हैं। कभी एक क्रिया और कभी एक से अधिक क्रियाएँ सहायक होती हैं। हिंदी में इन क्रियाओं का व्यापक प्रयोग होता है। इनके हेर-फेर से क्रिया का काल बदल जाता है। जैसे–

वह खाता है। मैंने पढ़ा था।

तुम जगे हुए थे। वे सुन रहे थे।

इनमें खाना, पढ़ना, जगना और सुनना मुख्य क्रियाएँ हैं; क्योंकि यहाँ क्रियाओं के अर्थ की प्रधानता है। शेष क्रियाएँ जैसे–है, था, हुए थे, रहे थे–सहायक क्रियाएँ हैं। ये मुख्य अर्थ को स्पष्ट और पूरा करती हैं।

नामबोधक क्रिया

संज्ञा अथवा विशेषण के साथ क्रिया जोड़ने से जो संयुक्त क्रिया बनती है, उसे 'नामबोधक क्रिया' कहते हैं। जैसे–

संज्ञा+क्रिया—भस्म करना। विशेषण+क्रिया—दुखी होना, निराश होना।

द्रष्टव्य—नामबोधक क्रियाएँ संयुक्त क्रियाएँ नहीं हैं। संयुक्त क्रियाएँ दो क्रियाओं के योग से बनती हैं और नामबोधक क्रियाएँ संज्ञा अथवा विशेषण के मेल से बनती हैं। दोनों में यही अंतर है।

पूर्वकालिक क्रिया

परिभाषा—***जब कर्ता एक क्रिया समाप्त कर उसी क्षण दूसरी क्रिया में प्रवृत्त होता है तब पहली क्रिया 'पूर्वकालिक' कहलाती है।*** जैसे—उसने नहाकर भोजन किया। इसमें 'नहाकर' पूर्वकालिक क्रिया है; क्योंकि इससे 'नहाने' की क्रिया की समाप्ति के साथ ही भोजन करने की क्रिया का बोध होता है।

क्रियार्थक संज्ञा

जब क्रिया संज्ञा की तरह व्यवहार में आए, तब वह 'क्रियार्थक संज्ञा' कहलाती है। जैसे—**टहलना** स्वास्थ्य के लिए अच्छा है; देश के लिए **मरना** कहीं अच्छा है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. जिन क्रियाओं का व्यापार और फल कर्ता पर हो, वे .... कहलाती हैं।
2. जो धातु संज्ञा या विशेषण से बनती है, उसे .... कहते हैं।
3. जिस शब्द से किसी कार्य का करना या होना पाया जाए, उसे .... कहते हैं।
4. रचना की दृष्टि से क्रिया के दो भेद हैं—अकर्मक और ....।

4.3 वाच्य

क्रिया के उस परिवर्तन को 'वाच्य' कहते हैं, जिसके द्वारा इस बात का बोध होता है कि वाक्य के अंतर्गत कर्ता, कर्म अथवा भाव—इनमें से किसकी प्रधानता है; इनमें किसके अनुसार क्रिया के पुरुष, वचन आदि आए हैं। इस परिभाषा के अनुसार वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन चाहे तो कर्ता के अनुसार होंगे अथवा कर्म के अनुसार अथवा भाव के अनुसार।

वाच्य के प्रयोग

वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन तथा पुरुष का अध्ययन 'प्रयोग' कहलाता है। ऐसा देखा जाता है कि वाक्य की क्रिया का लिंग, वचन एवं पुरुष कभी कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होता है, तो कभी कर्म के लिंग-वचन-पुरुष के अनुसार, लेकिन कभी-कभी वाक्य की क्रिया कर्ता तथा कर्म के अनुसार न होकर एकवचन, पुल्लिग तथा अन्यपुरुष होती है; ये ही प्रयोग है। अत: 'प्रयोग' तीन प्रकार के होते हैं—(क) कर्तरि प्रयोग, (ख) कर्मणि प्रयोग, (ग) भावे प्रयोग।

(क) **कर्तरि प्रयोग**—जब वाक्य के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष की क्रिया के अनुसार हों तब कर्तरि प्रयोग होता है; जैसे—मोहन अच्छी पुस्तकें पढ़ता है।

(ख) **कर्मणि प्रयोग**—जब वाक्य की क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार हों तब कर्मणि प्रयोग होता है; जैसे—सीता ने पत्र लिखा।

(ग) **भावे प्रयोग**—जब वाक्य की क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता अथवा कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार न होकर एकवचन, पुल्लिग तथा अन्य पुरुष हों तब भावे प्रयोग होता है; जैसे—मुझसे चला नहीं जाता।

नोट

वाच्य के भेद

उपर्युक्त प्रयोगों के अनुसार वाच्य के तीन भेद हैं–(1) कर्तृवाच्य, (2) कर्मवाच्य और (3) भाववाच्य।

कर्तृवाच्य–क्रिया के उस रूपांतर को कर्तृवाच्य कहते हैं, जिससे वाक्य में कर्ता की प्रधानता का बोध हो। जैसे–लड़का खाता है, मैंने पुस्तक पढ़ी।

कर्मवाच्य–क्रिया के उस रूपांतर को कर्मवाच्य कहते हैं, जिससे वाक्य में कर्म की प्रधानता का बोध हो। जैसे–पुस्तक पढ़ी जाती है; आम खाया जाता है।

यहाँ क्रियाएँ कर्ता के अनुसार रूपांतरित न होकर कर्म के अनुसार परिवर्तित हुई हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि अंग्रेजी की तरह हिंदी में कर्ता के रहते हुए कर्मवाच्य का प्रयोग नहीं होता; जैसे–'मैं पानी पीता हूँ' के स्थान पर 'मुझसे पानी पीया जाता है' लिखना गलत होगा। हाँ, निषेध के अर्थ में यह लिखा जा सकता है–मुझसे पत्र लिखा नहीं जाता; उससे पढ़ा नहीं जाता।

भाववाच्य–क्रिया के उस रूपांतर को भाववाच्य कहते हैं, जिससे वाक्य में क्रिया अथवा भाव की प्रधानता का बोध हो। जैसे–

राम से टहला भी नहीं जाता।

मुझसे बैठा नहीं जाता।

धूप में चला नहीं जाता।

इन वाक्यों में कर्ता और कर्म के स्थान पर क्रियाएँ ही अधिक प्रधान हो गयी हैं।

टिप्पणी–यहाँ यह द्रष्टव्य है कि कर्तृवाच्य में क्रिया सकर्मक और अकर्मक दोनों हो सकती है, किंतु कर्मवाच्य में केवल सकर्मक और भाववाच्य में अकर्मक होती है।

4.4 काल

क्रिया के उस रूपान्तर को 'काल' कहते हैं, जिससे उसके कार्य-व्यापार का समय और उसकी पूर्ण अथवा अपूर्ण अवस्था का बोध हो।

काल के तीन भेद हैं–(1) वर्तमानकाल, (2) भूतकाल, और (3) भविष्यत्काल

वर्तमानकाल

क्रियाओं के व्यापार की निरंतरता को 'वर्तमानकाल' कहते हैं। इसमें क्रिया का आरंभ हो चुका होता है। जैसे–वह खाता है। यहाँ 'खाने' का कार्यव्यापार चल रहा है, समाप्त नहीं हुआ।

वर्तमानकाल के भेद–वर्तमानकाल के पाँच भेद हैं–(1) सामान्य वर्तमान, (2) तात्कालिक वर्तमान, (3) पूर्ण वर्तमान, (4) संदिग्ध वर्तमान, (5) संभाव्य वर्तमान।

1. **सामान्य वर्तमान**–***क्रिया का वह रूप जिससे क्रिया का वर्तमानकाल में होना पाया जाए, 'सामान्य वर्तमान' कहलाता है।*** जैसे–वह आता है; वह देखता है।
2. **तात्कालिक वर्तमान**–***इससे यह पता चलता है कि क्रिया वर्तमानकाल में हो रही है।*** जैसे–मैं पढ़ रहा हूँ; वह जा रहा है।
3. **पूर्ण वर्तमान**–***इससे वर्तमानकाल में कार्य की पूर्ण सिद्धि का बोध होता है।*** जैसे–वह आया है; लड़के ने पुस्तक पढ़ी है।
4. **सन्दिग्ध वर्तमान**–***जिससे क्रिया के होने में संदेह प्रकट हो, पर उसकी वर्तमानता में संदेह न हो।*** जैसे–राम खाता होगा; वह पढ़ता होगा।

नोट

5. **सम्भाव्य वर्तमान**–***इससे वर्तमानकाल में काम के पूरा होने की सम्भावना रहती है।*** जैसे–वह आया हो; वह लौटा हो।

भूतकाल

भूतकाल–जिस क्रिया से कार्य की समाप्ति का बोध हो, उसे भूतकाल की क्रिया कहते हैं। जैसे–लड़का आया था; वह खा चुका था; मैंने गाया।

भूतकाल के छः भेद हैं–

1. सामान्यभूत, 2. आसन्नभूत, 3. पूर्णभूत, 4. अपूर्णभूत, 5. संदिग्धभूत, 6. हेतुहेतुमद्‌भूत।

1. **सामान्यभूत**–***जिससे भूतकाल की क्रिया के विशेष समय का ज्ञान न हो।*** जैसे–मोहन आया; सीता गयी।
2. **आसन्नभूत**–***इससे क्रिया की समाप्ति निकट भूत में या तत्काल ही सूचित होती है।*** जैसे–मैंने आम खाया है। मैं चला हूँ।
3. **पूर्णभूत**–***क्रिया के उस रूप को पूर्ण भूत कहते हैं, जिससे क्रिया की समाप्ति के समय का स्पष्ट बोध होता है कि क्रिया को समाप्त हुए काफी समय बीता है।*** जैसे–उसने मुरारि को मारा था; वह आया था।
4. **अपूर्णभूत**–***इससे यह ज्ञात होता है कि क्रिया भूतकाल में हो रही थी, किंतु उसकी समाप्ति का पता नहीं चलता।*** जैसे–सुरेश गीत गा रहा था; गीता सो रही थी।
5. **संदिग्धभूत**–***इसमें यह संदेह बना रहता है कि भूतकाल में कार्य पूरा हुआ या नहीं।*** जैसे–तुमने गाया होगा; तू गाया होगा।
6. **हेतुहेतुमद्‌भूत**–***इससे यह पता चलता है कि क्रिया भूतकाल में होनेवाली थी, पर किसी कारण न हो सकी।*** जैसे–मैं आता; तू जाता; वह खाता।

भविष्यत्‌काल

भविष्यत्‌काल–भविष्य में होने वाली क्रिया को भविष्यत्‌काल की क्रिया कहते हैं। जैसे–वह कल घर जाएगा।

भविष्यत्‌काल के तीन भेद हैं–

1. सामान्य भविष्य, 2. संभाव्य भविष्य, और 3. हेतुहेतुमद्‌भविष्य।

1. **सामान्य भविष्य**–***इससे यह प्रकट होता है कि क्रिया सामान्यतः भविष्य में होगी।*** जैसे–मैं पढ़ूँगा; वह जाएगा।
2. **संभाव्य भविष्य**–***जिससे भविष्य में किसी कार्य के होने की संभावना हो।*** जैसे–संभव है, रमेश कल आए।
3. **हेतुहेतुमद्‌भविष्य**–***इसमें एक क्रिया का होना दूसरी क्रिया के होने पर निर्भर करता है।*** जैसे–वह आए तो मैं जाऊँ; वह कमाये तो खाए।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. भविष्य में होने वाली क्रिया को कहते हैं–
   (क) भविष्यत्काल की क्रिया (ख) भूतकाल की क्रिया
   (ग) वर्तमानकाल की क्रिया (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. जिस क्रिया से कार्य की समाप्ति का बोध हो उसे कहते हैं–
   (क) वर्तमानकाल की क्रिया (ख) भूतकाल की क्रिया
   (ग) भविष्यत्काल की क्रिया (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. क्रिया का मूल है–
   (क) धातु (ख) कर्म
   (ग) काल (घ) इनमें से कोई नहीं
8. जब क्रिया संज्ञा की तरह व्यवहार में आए, तो वह .... कहलाती है।
   (क) क्रियार्थक संज्ञा (ख) नामबोधक क्रिया
   (ग) सहायक क्रिया (घ) पूर्वकालिक क्रिया।

4.5 क्रिया के पक्ष (रूप)

सभी कालों और वाच्यों में क्रिया के विविध और व्यापक रूप हैं। यहाँ उनका विस्तार अपेक्षित नहीं। किंतु नमूने के तौर पर नीचे 'देखना' क्रिया से कर्मवाच्य के कुछ रूप तीनों कालों में दिये जा रहे हैं। विद्यार्थी इसी के आधार पर शेष रूप बनाने का अभ्यास करें–

पुरुष	लिंग	सामान्य वर्तमान	सामान्य भूत	सामान्य भविष्यत्
1. उत्तम मैं	पुं० स्त्री०	देखा जाता हूँ देखी जाती हूँ	देखा गया देखी गयी	देखा जाऊँगा देखी जाऊँगी
2. मध्यम तू	पुं० स्त्री०	देखा जाता है देखी जाती है	देखा गया देखी गयी	देखा जायेगा देखी जायेगी
3. अन्य वह	पुं० स्त्री०	देखा जाता है देखी जाती है	देखा गया देखी गयी	देखा जायेगा देखी जायेगी
1. उत्तम हम	पुं० स्त्री०	देखे जाते हैं देखी जाती हैं	देखे गये देखी गयीं	देखे जायेंगे देखी जायेंगी
2. मध्यम तुम	पुं० स्त्री०	देखे जाते हो देखी जाती हो	देखे गये देखी गयी	देखे जाओगे देखी जाओगी
3. अन्य वे	पुं० स्त्री०	देखे जाते हैं देखी जाती हैं	देखे गये देखी गयीं	देखे जायेंगे देखी जायेंगी

काल के अन्य भेदों के कुछ रूप (उदाहरण) नीचे दिए जा रहे हैं–

संदिग्ध वर्तमान–देखा जाता होगा, देखी जाती होगी, देखे जाते होंगे।

संभाव्य वर्तमान–देखा जाता हो, देखी जाती हो, देखे जाते हों।

आसन्नभूत–देखा गया है, देखी गयी हैं, देखे गये हैं।

पूर्णभूत–देखा गया था, देखी गयी थीं, देखे गये थे।

संभाव्यभूत–देखा गया हो, देखी गयी हों, देखे गये हों।

संदिग्धभूत–देखा गया होगा, देखी गयीं होंगी, देखे गये होंगे।

संभाव्य भविष्यत्–देखा जाऊँगा, देखी जाऊँगी, देखे जायेंगे।

टास्क नामबोधक क्रिया से आप क्या समझते हैं?

4.6 क्रिया का पद-परिचय

क्रिया के पद-परिचय में क्रिया का प्रकार, वाच्य, पुरुष, लिंग, वचन, काल और वह शब्द जिससे क्रिया का संबंध है, इतनी बातें बतानी चाहिए।

उदाहरण–मैं जाता हूँ।

इसमें 'जाता हूँ' क्रिया है। इसका पदान्वय होगा–

जाता हूँ–अकर्मक क्रिया, कर्तृवाच्य, सामान्य वर्तमान, उत्तमपुरुष, पुल्लिंग, एकवचन, 'मैं' इसका कर्ता।

4.7 सारांश (Summary)

- जिस शब्द से किसी काम का करना या होना समझा जाए, उसे 'क्रिया' कहते हैं। क्रिया विकारी शब्द है, जिसके रूप लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार बदलते हैं।
- क्रिया का मूल 'धातु' है। 'धातु' क्रियापद के उस अंश को कहते हैं, जो किसी क्रिया के प्रायः सभी रूपों में पाया जाता है।
- व्युत्पत्ति अथवा शब्द-निर्माण की दृष्टि से धातु दो प्रकार की होती है–(1) मूल धातु, और (2) यौगिक धातु। मूल धातु स्वतंत्र होती है। यह किसी दूसरे शब्द पर आश्रित नहीं होती। यौगिक धातु किसी प्रत्यय के योग से बनती है।
- क्रिया के उस परिवर्तन को 'वाच्य' कहते हैं, जिसके द्वारा इस बात का बोध होता है कि वाक्य के अंतर्गत कर्ता, कर्म अथवा भाव–इनमें से किसकी प्रधानता है; इनमें किसके अनुसार क्रिया के पुरुष, वचन आदि आए हैं।
- क्रिया के उस रूपान्तर को 'काल' कहते हैं, जिससे उसके कार्य-व्यापार का समय और उसकी पूर्ण अथवा अपूर्ण अवस्था का बोध हो। काल के तीन भेद हैं–(1) वर्तमानकाल, (2) भूतकाल, और (3) भविष्यत्काल
- वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन तथा पुरुष का अध्ययन 'प्रयोग' कहलाता है। ऐसा देखा जाता है कि वाक्य की क्रिया का लिंग, वचन एवं पुरुष कभी कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होता है, तो कभी कर्म के लिंग-वचन-पुरुष के अनुसार, लेकिन कभी-कभी वाक्य की क्रिया कर्ता तथा कर्म के अनुसार

नोट

न होकर एकवचन, पुल्लिग तथा अन्यपुरुष होती है; ये ही प्रयोग है। 'प्रयोग' तीन प्रकार के होते हैं–(क) कर्तरि प्रयोग, (ख) कर्मणि प्रयोग, (ग) भावे प्रयोग।

4.8 शब्दकोश (Keywords)

काल – समय

निष्पन्न – भलीभाँति पूरा किया हुआ

भूतकाल – बीता हुआ समय

4.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. सकर्मक और अकर्मक क्रिया में क्या अंतर है? स्पष्ट कीजिए।
2. क्रिया के रूपों का वर्णन कीजिए।
3. संयुक्त क्रिया के कितने भेद हैं? उल्लेख कीजिए।
4. वाच्य के तीन भेदों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. अकर्मक	2. नामधातु	3. क्रिया	4. सकर्मक
5. (क)	6. (ख)	7. (क)	8. (क)।

4.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण एवं रचना–*डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. हिंदी व्याकरण–*बृजकिशोर प्रसाद सिंह, नमन प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन।*

नोट

इकाई–5 : क्रियाविशेषण की परिभाषा एवं भेद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
5.1 क्रियाविशेषण
5.2 क्रियाविशेषण का पद-परिचय
5.3 क्रिया के रूपांतर अथवा विकार
5.3.1 लिंग
5.3.2 वचन
5.3.3 पुरुष
5.3.4 प्रकार
5.3.5 वाच्य
5.3.6 काल
5.4 सारांश (Summary)
5.5 शब्दकोश (Keywords)
5.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
5.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- क्रियाविशेषण का पद-परिचय जानने में।
- क्रिया के विकार जानने में।
- लिंग, वचन, काल आदि जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

जिस शब्द से क्रिया, विशेषण तथा दूसरे क्रियाविशेषण की विशेषता प्रकट होती है, उसे क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–एकदम ठंडी हवा बहुत तेज चल रही थी। यहाँ 'तेज' क्रिया की विशेषता प्रकट कर रहा है। 'तेज' की विशेषता प्रकट हो रही है 'बहुत' से। 'ठंडी' विशेषता की विशेषता प्रकट हो रही है 'एकदम' से। अत: 'तेज', 'बहुत' और 'एकदम' क्रियाविशेषण हुए।

5.1 क्रियाविशेषण

क्रियाविशेषण अविकारी होते हैं, अर्थात् इनके रूप, लिंग, वचन, पुरुष और वाक्य के कारण कभी नहीं बदलते। दूसरे शब्दों में, क्रिया, विशेषण, अव्यय (Under-linable) शब्द होते हैं।

नोट

क्रियाविशेषण के मुख्य चार भेद हैं : (1) कालवाचक, (2) स्थानवाचक, (3) परिमाणवाचक, (4) रीतिवाचक।

1. कालवाचक

जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के समय तथा अवधि का बोध हो उसे 'कालवाचक' क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–अब, कब, जब, तब, आज, कल, परसों, अभी-कभी, लगी, फिर, निरंतर, लगातार, सायं, प्रातः, दिनभर, रातभर, प्रतिदिन, प्रतिमास, प्रतिवर्ष, पहले, पीछे, घड़ी-घड़ी, अब तक, कभी-कभी, कब तक, नित्य, बहुधा, आजन्म, अहर्मिश, आमरण, आजीवन इत्यादि।

2. स्थानवाचक

जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के स्थान अथवा दिशा का बोध हो, उसे स्थानवाचक क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–इधर-उधर, जिधर-किधर, ऊपर-नीचे, यहाँ-वहाँ, आगे-पीछे, बाह्य, सर्वज्ञ, साथ, पास, दूर, सामने, निकट, आर-पार इत्यादि।

3. परिमाणवाचक

जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के परिमाण का बोध हो उसे परिमाणवाचक क्रियाविशेषण कहते हैं। इसके पाँच भेद हैं :

(*i*) **अधिकताबोधक :** भारी, बड़ा, बहुत, खूब, निरा, अति, सर्वथा, अत्यंत, बिलकुल, हल्का, अतिक्रमण, बहुतायत।

(*ii*) **न्यूनताबोधक :** कुछ थोड़ा, तनिक, लगभग, जरा, टुक, किंचित, प्रायः आदि।

(*iii*) **पर्याप्तवाचक :** ठीक, काफी, यथेष्ठ, पर्याप्त, केवल, बस, इति, बराबर, अस्तु आदि।

(*iv*) **तुलनावाचक :** इतना, उतना, जितना, कितना, अधिक और बढ़कर, ज्यादा, अपेक्षा आदि।

(*v*) **श्रेणीवाचक :** थोड़ा, तिल-तिल, यथाक्रम, क्रमवार, क्रम-क्रम से, एक-एक करके, बारी-बारी से आदि।

नोट्स जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के समय तथा अवधि का बोध हो, उसे कालवाचक क्रियाविशेषण कहते हैं।

4. रीतिवाचक

जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के करने अथवा होने की रीति का बोध हो, उसे रीतिवाचक विशेषण कहते हैं। रीतिवाचक क्रियाविशेषण प्रायः नीचे लिखे अर्थों में आते हैं–

क्रिया बनाने के नियम–धीरे-धीरे, जल्दी-जल्दी, ध्यानपूर्वक, एकाएक, सरमा, सुखपूर्वक, रोता हुआ, हँसता हुआ, धड़ाधड़, झटपट, आपही-आप।

(*i*) **निश्चयसूचक–**ठीक, गलत, आवश्यक, सचमुच, वास्तव में।

(*ii*) **अनिश्चयसूचक–**शायद, संभवतः, कदाचित।

(*iii*) **स्वीकृतिसूचक–**जी हाँ, हाँ जी, बेशक।

(*iv*) **निषेधसूचक–**न, नहीं, मत।

(*v*) **हेतु–**इसलिए, अतएव।

रूप की दृष्टि से क्रियाविशेषण के तीन भेद हैं–

(क) **मूल क्रियाविशेषण**–जो क्रियाविशेषण किसी दूसरे शब्द या प्रत्यय के मेल से नहीं बनता है। उसे मूल क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–ठीक, दूर, निकट आदि।

(ख) **यौगिक क्रियाविशेषण**–जो क्रियाविशेषण प्रत्यय या दूसरे शब्दों के योग से बनता है, उसे यौगिक क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–मन से, भूल से, यहाँ तक, सुखपूर्वक आदि।

(ग) **स्थानीय क्रियाविशेषण**–बिना 'रूपांतर' के किसी विशेष स्थान में आने वाले विशेषण को स्थानीय क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–

संज्ञा–वह अपना 'सिर' पढ़ेगा। तू 'खाक' कमाएगा।

सर्वनाम–बाबू साहब 'वह चले' आ रहे हैं। वे लोग 'तुझे' क्या कहेंगे।

विशेषण–उसने 'खूब' गाया। तुम सुंदर लिखते हो।

पूर्वकालिका कृदंत–चोर 'उठ' भागा। वह दीवार फाँदकर निकल भागा।

प्रयोग की दृष्टि से क्रियाविशेषण के तीन भेद हैं–

1. **साधारण क्रियाविशेषण**–वाक्य में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होने वाले क्रियाविशेषण को साधारण क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–वह 'कम' बोलता है। लड़का इधर आया।
2. **संयोजक क्रियाविशेषण**–जिस क्रियाविशेषण का संबंध किसी उपवाक्य से रहता है उसे संयोजन क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–जब प्रतिष्ठा ही हाथ से निकल गयी, तब रहा क्या।
3. **अनुबद्ध क्रियाविशेषण**–अवधारण के लिए जिस क्रियाविशेषण का किसी भी शब्द-भेद के साथ प्रयोग किया जाता है, उसे अनुबद्ध क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे–मैंने यह 'सुना तक' न था।

क्या आप जानते हैं क्रियाविशेषण अविकारी होते हैं।

विशेष–

1. परिमाणवाचक या प्रकारवाचक क्रियाविशेषण जिस विशेषण की विशेषता प्रकट करता है उसके विशेष्य के अनुसार उसमें विकास होता है। जैसे–जो जितने धनी होते हैं, उनकी लालसा उतनी ही बड़ी होती है। शरीर उसके जैसा बढ़ा हुआ था, शक्ति भी उसमें वैसी ही थी।
2. अकर्मक क्रियाओं के कर्तरि प्रयोग में आकारांत क्रियाविशेषण का कर्ता के लिंग और वचन के अनुसार विकास होता है। जैसे–दीवार पानी से इतनी भीग गयी थी कि अचानक गिर पड़ी।
3. सकर्मक क्रिया के कर्तरि और कर्मणि प्रयोगों में क्रियाविशेषण का रूपांतर कर्म के लिंग और वचन के अनुसार होता है। जैसे–उसने छड़ी सीधी की।
4. सकर्मक क्रिया के अकर्मक की तरह प्रयुक्त होने पर क्रियाविशेषण कर्ता के अनुसार न होकर सदा अविकृत अर्थात् पुल्लिग और एकवचन में रहता है। जैसे–पूनम अच्छा गाती है। वह इतनी बकती है, पर आप चूँ तक नहीं करते।

क्रियाविशेषण बनाने के नियम–

कुछ क्रियाविशेषण मूल क्रियाविशेषण हैं, जो दूसरे शब्दों में प्रत्यय लगाने से नहीं बनते। जैसे–दूर, फिर, नहीं इत्यादि। किंतु प्राय: क्रियाविशेषण यौगिक हैं जो दूसरे शब्दों में प्रत्यय लगाने से बनते हैं।

1. **संज्ञा से**–क्षणमात्र, क्षणभर, प्रेमपूर्वक, ध्यानपूर्वक, क्रमश:, दिनभर, रातभर, महीने तक, वर्षों।

नोट

2. **क्रिया से**–सोते-जागते, आते-जाते, उठते-बैठते, खड़े-खड़े, चाहे।
3. **सर्वनाम से**–अब, कब, तब, इधर, उधर, यहाँ-वहाँ, कितना, जितना, यों, यूँ, क्यों, कभी, वही, जब, अभी, तब, तभी इत्यादि।
4. **विशेषण से**–धीरे, चुपके, पहले, दूसरे, तीसरे, जैसे, कैसे, ऐसे, वैसे इत्यादि।
5. **अव्ययों के मेल से**–ऊपर को, फट से, यहाँ तक, वहाँ तक।
6. **शब्दों की द्विरुक्ति से**–दिन-दिन, साफ-साफ, धीरे-धीरे, तड़ा-तड़, धड़ा-धड़, जहाँ-तहाँ, हाथों-हाथ, एकाएक, घर-घर, द्वार-द्वार, कानों।
7. **भिन्न-भिन्न शब्दों के मेल से**–जैसे–शाम-सवेरे, यथासंभव, दिन-रात, जवानी, बुढ़ापा, आजकल, हर-घड़ी, यथाशक्ति, आठ पहर, घर-बाहर, 6 माह, देश-विदेश, जब तक, अंधाधुंध।

5.2 क्रियाविशेषण का पद-परिचय

क्रियाविशेषणों का पद-परिचय देते हुए निम्नलिखित बातों का वर्णन आवश्यक होता है।

1. क्रियाविशेषणों का भेद
2. जिस क्रिया की वह विशेषता प्रकट करे इत्यादि।

उदाहरण–

कल जब मैं चुपचाप घर को जा रहा था कि इतने में भागते हुए एक लड़के ने मुझे पत्र दिया जिसे पढ़ते ही मैं प्रसन्न हुआ।

कल–क्रियाविशेषण, कालवाचक, 'जा रहा था' का विशेषण।

चुपचाप–क्रियाविशेषण, प्रकारवाचक 'जा रहा था' का विशेषण।

भागता हुआ–क्रियाविशेषण, प्रकारवाचक 'जा रहा था' का विशेषण।

बहुत–क्रियाविशेषण, परिमाणवाचक, 'प्रसन्न हुआ' का विशेषण।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. जिस क्रियाविशेषण से क्रिया के परिमाण का बोध हो, उसे .... क्रिया विशेषण कहते हैं।
2. प्रयोग की दृष्टि से .... के तीन भेद हैं।
3. क्रियाविशेषण .... होते हैं।
4. क्रियाविशेषण के मुख्य .... भेद हैं।

5.3 क्रिया के रूपांतर अथवा विकार

क्रियापद के निर्माण में काल, पक्ष और वृत्ति सर्वप्रथम विचारणीय है और उसके बाद लिंग, वचन, पुरुष वाच्य इत्यादि। उदाहरण के लिए–

(*i*) **काल और पक्ष**–पढ़, पढ़ता, पढ़ा, पढ़ेगा, है, हो, हूँ या होगा।

(*ii*) **वृत्ति**–पढ़, पढ़ना, पढ़ो, पढ़िए, पढ़िएगा, पढ़े, पढ़ें, पढ़ूँ।

क्रियाओं में विकार के उपर्युक्त कारण होने के अतिरिक्त अन्य कारण भी हैं जो निम्नलिखित हैं–

(*i*) लिंग; (*ii*) वचन; (*iii*) पुरुष; (*iv*) प्रकार; (*v*) वाच्य और; (*vi*) काल।

नोट

5.3.1 लिंग (Gender)

संज्ञाओं के समान क्रिया के दो लिंग होते हैं–पुल्लिग और स्त्रीलिंग।

पुल्लिग–अविनाश देखता है।

स्त्रीलिंग–माला देखती है।

5.3.2 वचन (Number)

संज्ञाओं के समान क्रिया के भी दो वचन होते हैं–एकवचन और बहुवचन।

एकवचन–चूहा दौड़ता है।

बहुवचन–चूहे दौड़ते हैं।

5.3.3 पुरुष (Person)

क्रिया के तीन पुरुष होते हैं–उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष।

उत्तम पुरुष (First Person)–मैं खेलता हूँ, हम खेलते हैं।

मध्यम पुरुष (Second Person)–तू खेलता है, तुम खेलते हो।

अन्य पुरुष (Third Person)–वह खेलता है, वे खेलते हैं।

विशेष–क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष सभी कर्ता के अनुसार होते हैं, कभी कर्म के अनुसार और कभी इन दोनों में से किसी के भी अनुसार नहीं होते हैं। इस प्रकार प्रयोग की दृष्टि से क्रिया के तीन प्रकार हुए–

1. **कर्तृप्रयोग**–जिनमें क्रिया के लिंग वचन और पुरुष कर्ता के अनुसार होते हैं।
2. **कर्मप्रयोग**–जिसमें क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के अनुसार होते हैं।
3. **भावप्रयोग**–जिसमें क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता, कर्म में से किसी के अनुसार नहीं होते हैं।

5.3.4 प्रकार (Mood)

क्रिया के उस रूप का नाम 'प्रकार' है जिससे उसके विधान की रीति का बोध होता है। हिंदी भाषा में क्रिया के विधान की तीन रीतियाँ अथवा प्रकार हैं–

1. **निश्चयार्थ**–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के होने का निश्चय होता है उसे निश्चयार्थ कहते हैं। इसी को साधारण प्रकार भी कहते हैं। जैसे–नीचे लिखी क्रियाएँ इस रूप के अंतर्गत हैं।

   सामान्य वर्तमान–मनोहर लिखता है।

   अपूर्ण वर्तमान–मनोहर लिखता था।

   अपूर्णभूत–मनोहर लिख रहा था।

   सामान्य भविष्यत्–मनोहर लिखेगा।

2. **संभावनार्थ**–क्रिया के जिस रूप से किसी क्रिया के होने की संभावना, अनुमान, इच्छा, अनिश्चय, कर्तव्य अथवा संदेह प्रकट हो। जैसे–नीचे लिखी क्रियाएँ इस रूप के अंतर्गत हैं।

   (क) **संदिग्ध वर्तमान**–मनोहर लिखता है।

   (ख) **संदिग्ध भूत**–मनोहर लिखे।

   (ग) **सामान्य भविष्यत्**–मनोहर लिखता होगा।

   (घ) **संभावना**–वीर आता ही होगा।

   (ङ) **अनुमान**–आशा है कि वह आ गया होगा।

नोट

(च) **इच्छा**–तुम्हारा कार्य सफल हो।

(छ) **अनिश्चय**–यदि मेरी माता आ जाए।

(ज) **कर्तव्य**–देश की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है।

(झ) **संदेह**–बालक पढ़ रहा होगा।

3. **प्रवर्तनार्थक**–क्रिया के जिस रूप से किसी काम में प्रवृत्ति का बोध हो उसे प्रवर्तनार्थक अथवा विध्यर्थक प्रकार कहते हैं। आज्ञा, प्रार्थना, अनुमति, प्रश्न, उपदेश और आदर प्रकट करने वाले क्रिया के सभी रूप इसी प्रकार के अंतर्गत हैं। जैसे–

(*i*) **आज्ञा**–लड़कों! अपना पाठ पढ़ो।

(*ii*) **प्रार्थना**–प्रभो! मुझे असत्य मार्ग से बचाओ।

(*iii*) **अनुमति**–बेटा! अब सो लो फिर पढ़ लेना।

(*iv*) **उपदेश**–किसी को गाली मत दो, कभी असत्य मत बोलो।

(*v*) **आदर**–अपनी कृपा का हाथ सदा हम पर रखिएगा।

5.3.5 वाच्य (Voice)

बोलते समय वाक्य का प्रयोग तीन प्रकार से किया जाता है। इसका वर्णन निम्नलिखित है–

1. **कर्तृवाच्य** (Active Voice)
2. **कर्मवाच्य** (Passive Voice)
3. **भाववाच्य** (Impersonal Voice)

वाच्य संबंधी प्रयोग करते समय छात्र-छात्राओं को निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

1. कर्मवाच्य या भाववाच्य में कर्ता के बाद 'से' का प्रयोग होता है। ऐसे वाक्य प्राय: नकारात्मक होते हैं; सकारात्मक नहीं। वे कर्ता की असमर्थता के भाव को प्रकट करते हैं। अत: 'मुझसे कपड़े नहीं धोए जाते' और 'मुझसे चला नहीं जाता' वाक्य तो ठीक है, लेकिन 'मुझसे कपड़े धोए जाते हैं' और 'मुझसे चला जाता है' वाक्यों में भाववाच्य का प्रयोग ठीक नहीं है।
2. कर्मवाच्य में सामान्यत: क्रिया के करने वाले व्यक्ति का संकेत आवश्यक नहीं होता है; जैसे–

   (*i*) बंगाल में चावल खाया जाता है।

   (*ii*) यहाँ हिंदी बोली जाती है।
3. भाववाच्य केवल अकर्मक क्रियाओं में ही संभव है, क्योंकि इसमें कर्म की स्थिति नहीं होती। भाववाच्य में क्रिया सदैव एक वचन, अन्य पुरुष, पुल्लिग, आकारांत रूप में रहती है। जैसे–उससे चला नहीं जाता।
4. कर्मवाच्य का प्रयोग प्राय: प्रशासन, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि क्षेत्रों में होता है। 'मेरे द्वारा' जैसा प्रयोग हिंदी की प्रकृति के अनुकूल नहीं है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. बोलते समय वाक्य का प्रयोग ························ से किया जाता है।

   (क) तीन प्रकार (ख) चार प्रकार (ग) दो प्रकार (घ) छह प्रकार।
6. क्रिया के जिस रूप से क्रिया के होने का निश्चय होता है, उसे ························ कहते हैं।

   (क) निश्चयार्थ (ख) संभावनार्थ (ग) प्रवर्तनार्थक (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. क्रिया के जिस रूप से क्रिया के बहुत समय पहले समाप्त होने का बोध हो, उसे ················ कहते हैं।
   (क) सामान्यभूत (ख) पूर्णभूत (ग) आसन्नभूत (घ) इनमें से कोई नहीं।
8. काल के मुख्य रूप से ························ भेद होते हैं।
   (क) दो (ख) तीन (ग) चार (घ) इनमें से कोई नहीं

5.3.6 काल (Tense)

क्रिया के जिस रूप से उसके होने या करने के समय का बोध हो, उसे 'काल' कहते हैं।

काल के मुख्य भेद

1. **भूतकाल** (Past Tense)–क्रिया के जिस रूप से उसके अतीत-काल में होने का बोध हो, उसे भूतकाल कहते हैं। जैसे–शांति कुमार सोया।
2. **वर्तमानकाल** (Present Tense)–क्रिया के जिस रूप से उसके बीते हुए समय में या वर्तमान में होने का बोध हो, उसे वर्तमान काल कहते हैं।
3. **भविष्यत् काल** (Future Tense)–क्रिया के जिस रूप से उसके आने वाले समय में होने का बोध होता हो, उसे भविष्यत् काल कहते हैं। जैसे–शांति कुमार सोएगा।

1. भूतकाल (Past Tense)

भूतकाल के भेद

1. **सामान्यभूत** (Past Indefinite)–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के भूतकाल में होने का निश्चय तो हो किंतु किसी विशेष समय का निश्चय न हो। जैसे–राम गया। इस वाक्य में 'गया' क्रिया से केवल सामान्य भूत का ज्ञान होता है अर्थात् इस बात का ज्ञान नहीं होता कि जाने की क्रिया अभी-अभी समाप्त हुई थी।
2. **आसन्नभूत**–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के निकट भूत में समाप्त होने का बोध हो उसे आसन्नभूत कहते हैं। जैसे–राम गया है। इस वाक्य में 'गया है' क्रिया से यह प्रकट होता है कि राम अभी-अभी गया है।
3. **पूर्णभूत** (Past Perfect)–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के बहुत समय पहले (पूरे भूत) में समाप्त (पूर्ण) होने का बोध हो, उसे पूर्णभूत कहते हैं। जैसे–राम गया था। इस वाक्य में 'गया था' क्रिया से प्रकट होता है कि राम बहुत समय पहले चला गया था।
4. **अपूर्णभूत** (Past Continuous)–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के भूतकाल में जारी रहने या समाप्त न होने का बोध हो उसे अपूर्णभूत कहते हैं। जैसे–'राम जाता था' अथवा जा रहा था।
5. **संदिग्धभूत** (Past Imperfect)–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के भूतकाल में होने का संदेह पाया जाये, उसे संदिग्ध भूत कहते हैं। जैसे–राम गया होगा। इस वाक्य में गया होगा क्रिया से राम के भूतकाल में जाने का संदेह है।
6. **हेतुहेतुमद्भूत (Continuous Past)**–क्रिया के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि क्रिया का भूतकाल में होना तो संभव था। परंतु कारणवश हो नहीं सका, उसे हेतुहेतुमद्भूत (Conditional Past) कहते हैं। जैसे–यदि राम आ जाता तो काम अवश्य हो जाता। इस वाक्य में 'आ जाता' क्रिया से ज्ञात होता है कि काम होना तो संभव था, परंतु राम के न आने से नहीं हो सका।

नोट

2. वर्तमानकाल (Present Tense)

वर्तमान के भेद–इसके तीन भेद हैं।

1. **सामान्य वर्तमान**–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के वर्तमान समय में होने का बोध हो, उसे सामान्य वर्तमान कहते हैं। जैसे–'राम जाता है'। इस वाक्य में 'जाता है' क्रिया से यह प्रकट होता है कि राम जाने का व्यापार (कार्य) वर्तमान समय में ही कर रहा है।
2. **संदिग्ध वर्तमान**–क्रिया का वह रूप जिससे क्रिया के वर्तमान काल में होने का संदेह हो, उसे संदिग्ध वर्तमान कहते हैं। जैसे–राम जाता होगा। इस वाक्य में 'जाता होगा' क्रिया से राम के वर्तमान काल में जाने का संदेह है।
3. **अपूर्ण वर्तमान**–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के वर्तमान काल में जारी रहने अथवा समाप्त न होने का बोध हो, उसे अपूर्ण वर्तमान कहते हैं। जैसे–राम जा रहा है इस वाक्य में 'जा रहा है' क्रिया से राम के वर्तमान काल में जाने के कार्य (व्यापार) को जारी रखने का बोध होता है।

3. भविष्यत् काल (Future Tense)

भविष्यत् काल के भेद–इसके दो भेद हैं।

1. **सामान्य भविष्यत्**–क्रिया का वह रूप जिससे क्रिया के आने वाले समय में होने का बोध हो, उसे सामान्य भविष्यत् कहते हैं। जैसे–राम जायेगा। इस वाक्य में 'जाएगा' क्रिया से राम के भविष्यत् काल में जाने का बोध होता है।
2. **संभाव्य भविष्यत्**–क्रिया के जिस रूप से क्रिया के भविष्यत् काल में होने की संभावना अथवा इच्छा पाई जाये; जैसे–'राम कलकत्ता जाए'। इस वाक्य में 'जाए' क्रिया से राम के भविष्यत् काल में कलकत्ता जाने की इच्छा तथा संभावना का बोध होता है।

विशेष–प्रवर्तनार्थक (Imperative) क्रिया, जिसे विधि भी कहते हैं, इसके दो भेद हैं–(1) प्रत्यक्ष; (2) परोक्ष।

प्रत्यक्ष विधि–प्रत्यक्ष विधि के तीन भेद हैं–

1. **साधारण**–बोल, चल, भाग।
2. **आदर**–बोलिए, चलिए, भागिए।
3. **विशेषादर**–बोलिएगा, चलिएगा, भागिएगा।

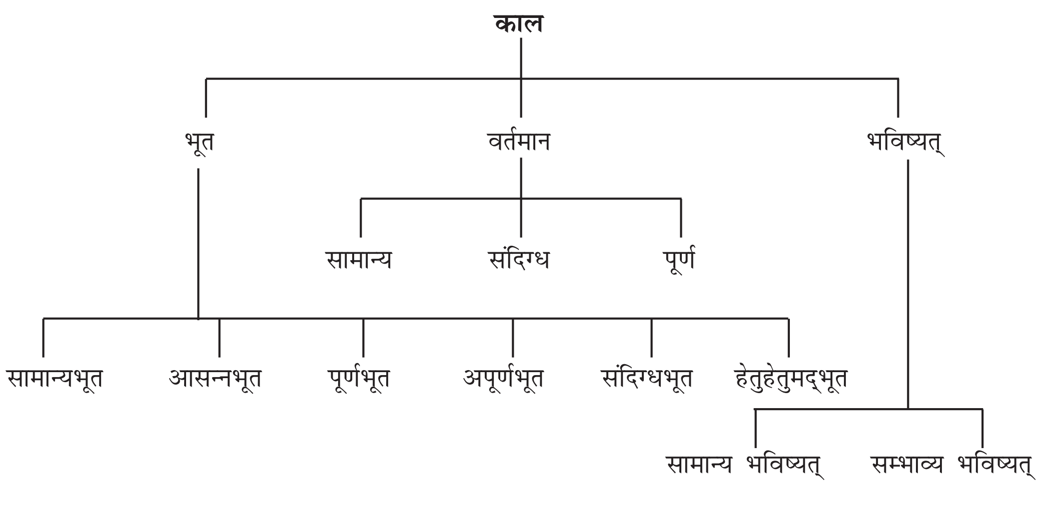

नोट

2. **परोक्ष विधि**–इसमें 'इये' के स्थान में 'इयो' प्रत्यय लगता है; जैसे–लिखियो, बोलियो, पढ़ियो। इसके लिए क्रिया का सामान्य रूप भी प्रयुक्त होता है; जैसे–पत्र अवश्य लिखना, वहाँ जाना, यहाँ आना।

टास्क वाच्य संबंधी प्रयोग करते समय छात्र-छात्राओं को किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

क्रियाओं की विशेषता

सूचना–उदाहरण के लिए एक सकर्मक और एक अकर्मक धातु की रूपावली दी जाती है।

शेष धातुओं की रूपावली इस प्रकार जाननी चाहिए।

अकर्मक 'पढ़' धातु

कर्तृवाच्य (Active Voice)

भूतकाल : (क) सामान्यभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ा	हमने पढ़ा
मध्यम पु.	तू ने पढ़ा	तुमने पढ़ा
अन्य पु.	उसने पढ़ा	उन्होंने पढ़ा

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ी	हमने पढ़ी
मध्यम पु.	तू ने पढ़ी	तुमने पढ़ी
अन्य पु.	उसने पढ़ी	उन्होंने पढ़ी

(ख) आसन्नभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ा है	हमने पढ़ा है
मध्यम पु.	तू ने पढ़ा है	तुमने पढ़ा है
अन्य पु.	उसने पढ़ा है	उन्होंने पढ़ा है

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ी है	हमने पढ़ी है
मध्यम पु.	तूने पढ़ी है	तुमने पढ़ी है
अन्य पु.	उसने पढ़ी है	उन्होंने पढ़ी है

नोट

(ग) पूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ा था	हमने पढ़ा था
मध्यम पु.	तूने पढ़ा था	तुमने पढ़ा था
अन्य पु.	उसने पढ़ा था	उन्होंने पढ़ा था

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ी थी	हमने पढ़ी थी
मध्यम पु.	तूने पढ़ी थी	तुमने पढ़ी थी
अन्य पु.	उसने पढ़ी थी	उन्होंने पढ़ी थी

(घ) अपूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ता था	हम पढ़ते थे
मध्यम पु.	तू पढ़ता था	तुम पढ़ते थे
अन्य पु.	वह पढ़ता था	वे पढ़ते थे

सूचना–पढ़ रहा था भी ठीक है।

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ती थी	हम पढ़ती थीं
मध्यम पु.	तू पढ़ती थी	तुम पढ़ती थीं
अन्य पु.	वह पढ़ती थी	वे पढ़ती थीं

(ङ) संदिग्धभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ा होगा	हमने पढ़ा होगा
मध्यम पु.	तूने पढ़ा होगा	तुमने पढ़ा होगा
अन्य पु.	उसने पढ़ा होगा	उन्होंने पढ़ा होगा

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ी होगी	हमने पढ़ी होगी
मध्यम पु.	तूने पढ़ी होगी	तुमने पढ़ी होगी
अन्य पु.	उसने पढ़ी होगी	उन्होंने पढ़ी होगी

नोट

(ङ) संदिग्धभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ा होगा	हमने पढ़ा होगा
मध्यम पु.	तूने पढ़ा होगा	तुमने पढ़ा होगा
अन्य पु.	उसने पढ़ा होगा	उन्होंने पढ़ा होगा

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैंने पढ़ी होगी	हमने पढ़ी होगी
मध्यम पु.	तूने पढ़ी होगी	तुमने पढ़ी होगी
अन्य पु.	उसने पढ़ी होगी	उन्होंने पढ़ी होगी

(च) हेतुहेतुमद्भूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ता	हम पढ़ते
मध्यम पु.	तू पढ़ता	तुम पढ़ते
अन्य पु.	वह पढ़ता	वे पढ़ते

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ती	हम पढ़तीं
मध्यम पु.	तू पढ़ती	तुम पढ़तीं
अन्य पु.	वह पढ़ती	वे पढ़तीं

वर्तमान काल

(क) सामान्य वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ता हूँ	हम पढ़ते हैं
मध्यम पु.	तू पढ़ता है	तुम पढ़ते हो
अन्य पु.	वह पढ़ता है	वे पढ़ते हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ती हूँ	हम पढ़ती हैं
मध्यम पु.	तू पढ़ती है	तुम पढ़ती हो
अन्य पु.	वह पढ़ती है	वे पढ़ती हैं

नोट

(ख) संदिग्ध वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ता हूँगा	हम पढ़ते होंगे
मध्यम पु.	तू पढ़ता होगा	तुम पढ़ते होंगे
अन्य पु.	वह पढ़ता होगा	वे पढ़ते होंगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ती हूँगी	हम पढ़ती होंगी
मध्यम पु.	तू पढ़ती होगी	तुम पढ़ती होंगी
अन्य पु.	वह पढ़ती होगी	वे पढ़ती होंगी

(ग) अपूर्ण वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ रहा हूँ	हम पढ़ रहे हैं
मध्यम पु.	तू पढ़ रहा है	तुम पढ़ रहे हो
अन्य पु.	वह पढ़ता रहा है	वे पढ़ रहे हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ रही हूँ	हम पढ़ रही हैं
मध्यम पु.	तू पढ़ रही है	तुम पढ़ रही हो
अन्य पु.	वह पढ़ रही है	वे पढ़ रही हैं

भविष्यत् काल

(क) सामान्य भविष्यत्

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ूँगा	हम पढ़ेंगे
मध्यम पु.	तू पढ़ेगा	तुम पढ़ोगे
अन्य पु.	वह पढ़ेगा	वे पढ़ेंगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं पढ़ूँगी	हम पढ़ेंगी
मध्यम पु.	तू पढ़ेगी	तुम पढ़ोगी
अन्य पु.	वह पढ़ेगी	वे पढ़ेंगी

नोट

(ख) सम्भाव्य भविष्यत्

पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं पढ़ूँ	हम पढ़ें
मध्यम पु.	तू पढ़े	तुम पढ़ो
अन्य पु.	वह पढ़े	वे पढ़ें

सूचना–प्रवर्तना प्रत्यक्ष साधारण के रूप में सामान्य भविष्यत् के समान ही होते हैं।

आदर विधि–पढ़िए।

परोक्ष विधि–पढ़ना, पढ़ियो।

पूर्वकालिक क्रिया–पढ़कर, पढ़ के।

अकर्मक 'बैठ' धातु

कर्तृवाच्य (Active Voice)

भूतकाल

(क) सामान्यभूत

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठा	हम बैठे
मध्यम पु.	तू बैठा	तुम बैठे
अन्य पु.	वह बैठा	वे बैठे

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठी	हम बैठीं
मध्यम पु.	तू बैठी	तुम बैठी
अन्य पु.	वह बैठी	वे बैठीं

(ख) आसन्नभूत

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठा हूँ	हम बैठे हैं
मध्यम पु.	तू बैठा है	तुम बैठे हो
अन्य पु.	वह बैठा है	वे बैठे हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठी हूँ	हम बैठी हैं
मध्यम पु.	तू बैठी है	तुम बैठी हो
अन्य पु.	वह बैठी है	वे बैठी हैं

नोट

(ग) पूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठा था	हम बैठे थे
मध्यम पु.	तू बैठा था	तुम बैठे थे
अन्य पु.	वह बैठा था	वे बैठे थे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठी थी	हम बैठी थीं
मध्यम पु.	तू बैठी थी	तुम बैठी थीं
अन्य पु.	वह बैठी थी	वे बैठी थीं

(घ) अपूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठता था	हम बैठते थे
मध्यम पु.	तू बैठता था	तुम बैठते थे
अन्य पु.	वह बैठता था	वे बैठते थे

सूचना–'वह बैठ रहा था' भी ठीक है।

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठती थी	हम बैठती थीं
मध्यम पु.	तू बैठती थी	तुम बैठती थीं
अन्य पु.	वह बैठती थी	वे बैठती थीं

(ङ) संदिग्धभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठा हूँगा	हम बैठे होंगे
मध्यम पु.	तू बैठा होगा	तुम बैठे होगे
अन्य पु.	वह बैठा होगा	वे बैठे होंगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठी हूँगी	हम बैठी होंगी
मध्यम पु.	तू बैठी होगी	तुम बैठी होगी
अन्य पु.	वह बैठी होगी	वे बैठी होंगी

नोट

(च) हेतुहेतुमद्भूत

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठता	हम बैठते
मध्यम पु.	तू बैठता	तुम बैठते
अन्य पु.	वह बैठता	वे बैठते

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठती	हम बैठती
मध्यम पु.	तू बैठती	तुम बैठती
अन्य पु.	वह बैठती	वे बैठती

वर्तमान काल

(क) सामान्य वर्तमान

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठता हूँ	हम बैठते हैं
मध्यम पु.	तू बैठता है	तुम बैठते हो
अन्य पु.	वह बैठता है	वे बैठते हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठती हूँ	हम बैठती हैं
मध्यम पु.	तू बैठती है	तुम बैठती हो
अन्य पु.	वह बैठती है	वे बैठती हैं

(ख) संदिग्ध वर्तमान

पुल्लिग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठता हूँगा	हम बैठे होंगे
मध्यम पु.	तू बैठता होगा	तुम बैठते होगे
अन्य पु.	वह बैठता होगा	वे बैठते होंगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु.	मैं बैठती हूँगी	हम बैठती होंगी
मध्यम पु.	तू बैठती होगी	तुम बैठती होगी
अन्य पु.	वह बैठती होगी	वे बैठती होंगी

नोट

(ग) अपूर्ण वर्तमान

पुल्लिग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठा रहा हूँ	हम बैठ रहे हैं
मध्यम पु.	तू बैठ रहा है	तुम बैठ रहे हो
अन्य पु.	वह बैठ रहा है	वे बैठ रहे हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठ रही हूँ	हम बैठ रही हैं
मध्यम पु.	तू बैठ रही है	तुम बैठ रही हो
अन्य पु.	वह बैठ रही है	वे बैठ रही हैं

भविष्यत् काल

(क) सामान्य भविष्यत्

पुल्लिग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठूँगा	हम बैठेंगे
मध्यम पु.	तू बैठेगा	तुम बैठोगे
अन्य पु.	वह बैठेगा	वे बैठें

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं बैठूँगी	हम बैठेंगी
मध्यम पु.	तू बैठेगी	तुम बैठोगी
अन्य पु.	वह बैठेगी	वे बैठेंगी

(ख) संभाव्य भविष्यत् धातु 'खेल'

पुल्लिग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं खेलूँ	हम खेलें
मध्यम पु.	तू खेले	तुम खेलो
अन्य पु.	वह खेले	वे खेलें

सूचना-प्रवर्तना प्रत्यक्ष साधारण पुरुष एकवचन में 'तू खेल' रूप बनता है। शेष सारे रूप सामान्य भविष्यत् के समान ही हैं।

आदरसूचक–आप बैठिए।

विशेष आदरसूचक–आप बैठिएगा।

परोक्ष विधि–आप बैठना अथवा बैठियो।

पूर्वकालिक क्रिया–बैठकर, बैठ के।

नोट

सकर्मक 'लिख' धातु

कर्मवाच्य (Passive)

ये रूप कर्मवाच्य के हैं। अत: कुछ विचित्र से प्रतीत होते हैं। कर्तृवाच्य में ही इनके रूप साधारणतया प्रचलित हैं; जैसे–मैंने लिखा, हमने लिखा, उसने लिखा आदि।

भूतकाल

(क) सामान्यभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा गया	हम लिखे गए
मध्यम पु.	तू लिखा गया	तुम लिखे गए
अन्य पु.	वह लिखा गया	वे लिखे गए

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी गई	हम लिखी गईं
मध्यम पु.	तू लिखी गई	तुम लिखी गईं
अन्य पु.	वह लिखी गई	वे लिखी गईं

(ख) आसन्नभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा गया हूँ	हम लिखे गए हैं
मध्यम पु.	तू लिखा गया है	तुम लिखे गए हो
अन्य पु.	वह लिखा गया है	वे लिखे गए हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी गई हूँ	हम लिखी गईं हैं
मध्यम पु.	तू लिखी गई है	तुम लिखी गईं हो
अन्य पु.	वह लिखी गई है	वे लिखी गईं हैं

(ग) पूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा गया था	हम लिखे गए थे
मध्यम पु.	तू लिखा गया था	तुम लिखे गए थे
अन्य पु.	वह लिखा गया था	वे लिखे गए थे

नोट

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी गई थी	हम लिखी गईं थीं
मध्यम पु.	तू लिखी गई थी	तुम लिखी गईं थीं
अन्य पु.	वह लिखी गई थी	वे लिखी गईं थीं

(घ) अपूर्णभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाता था	हम लिखे जाते थे
मध्यम पु.	तू लिखा जाता था	तुम लिखे जाते थे
अन्य पु.	वह लिखा जाता था	वे लिखे जाते थे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाती थी	हम लिखी जाती थीं
मध्यम पु.	तू लिखी जाती थी	तुम लिखी जाती थीं
अन्य पु.	वह लिखी जाती थी	वे लिखी जाती थीं

(ङ) संदिग्धभूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा गया हूँगा	हम लिखे गए होंगे
मध्यम पु.	तू लिखा गया होगा	तुम लिखे गए होंगे
अन्य पु.	वह लिखा गया होगा	वे लिखे गए होंगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी गई हूँगी	हम लिखी गईं होंगी
मध्यम पु.	तू लिखी गई होगी	तुम लिखी गईं होंगी
अन्य पु.	वह लिखी गई होगी	वे लिखी गईं होंगी

(च) हेतुहेतुमद्भूत

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा गया होता	हम लिखे गए होते
मध्यम पु.	तू लिखा गया होता	तुम लिखे गए होते
अन्य पु.	वह लिखा गया होता	वे लिखे गए होते

नोट

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी गई होती	हम लिखी गईं होतीं
मध्यम पु.	तू लिखी गई होती	तुम लिखी गईं होतीं
अन्य पु.	वह लिखी गई होती	वे लिखी गईं होतीं

(छ) हेतुहेतुमद्भूत अपूर्ण

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाता	हम लिखे जाते
मध्यम पु.	तू लिखा जाता	तुम लिखे जाते
अन्य पु.	वह लिखा जाता	वे लिखे जाते

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाती	हम लिखी जातीं
मध्यम पु.	तू लिखी जाती	तुम लिखी जातीं
अन्य पु.	वह लिखी जाती	वे लिखी जातीं

वर्तमान काल

(क) सामान्य वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाता हूँ	हम लिखे जाते हैं
मध्यम पु.	तू लिखा जाता है	तुम लिखे जाते हो
अन्य पु.	वह लिखा जाता है	वे लिखे जाते हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाती हूँ	हम लिखी जाती हैं
मध्यम पु.	तू लिखी जाती है	तुम लिखी जाती हो
अन्य पु.	वह लिखी जाती है	वे लिखी जाती हैं

(ख) संदिग्ध वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाता हूँगा	हम लिखे जाते होंगे
मध्यम पु.	तू लिखा जाता होगा	तुम लिखे जाते होगे
अन्य पु.	वह लिखा जाता होगा	वे लिखे जाते होंगे

नोट

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाती हूँगी	हम लिखी जाती होंगी
मध्यम पु.	तू लिखी जाती होगी	तुम लिखी जाती होंगी
अन्य पु.	वह लिखी जाती होगी	वे लिखी जाती होंगी

(ग) अपूर्ण वर्तमान

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जा रहा हूँ	हम लिखे जा रहे हैं
मध्यम पु.	तू लिखा जा रहा है	तुम लिखे जा रहे हो
अन्य पु.	वह लिखा जा रहा है	वे लिखे जा रहे हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जा रही हूँ	हम लिखी जा रही हैं
मध्यम पु.	तू लिखी जा रही है	तुम लिखी जा रही हो
अन्य पु.	वह लिखी जा रही है	वे लिखी जा रही हैं

भविष्यत्

(क) सामान्य भविष्यत्

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाऊँगा	हम लिखे जाएँगे
मध्यम पु.	तू लिखा जाएगा	तुम लिखे जाओगे
अन्य पु.	वह लिखा जाएगा	वे लिखे जाएँगे

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाऊँगी	हम लिखी जाएँगी
मध्यम पु.	तू लिखी जाएगी	तुम लिखी जाओगी
अन्य पु.	वह लिखी जाएगी	वे लिखी जाएँगी

(ख) संभाव्य भविष्यत्

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाता हूँगा	हम लिखे जाते होंगे
मध्यम पु.	तू लिखा जाता होगा	तुम लिखे जाते होंगे
अन्य पु.	वह लिखा जाता होगा	वे लिखे जाते होंगे

नोट

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाती हूँगी	हम लिखी जातीं होंगी
मध्यम पु.	तू लिखी जाती होगी	तुम लिखी जातीं होंगी
अन्य पु.	वह लिखी जाती होगी	वे लिखी जातीं होंगी

प्रवर्तन प्रत्यक्ष साधारण

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखा जाऊँ	हम लिखे जाएँ
मध्यम पु.	तू लिखा जाए	तुम लिखे जाओ
अन्य पु.	वह लिखा जाए	वे लिखे जाएँ

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पु.	मैं लिखी जाऊँ	हम लिखी जाऊँ
मध्यम पु.	तू लिखी जाए	तुम लिखी जाओ
अन्य पु.	वह लिखी जाए	वे लिखी जाएँ

आदर विधि– लिखे जाइए (पुल्लिंग)
लिखी जाइए (स्त्रीलिंग)

विशेष आदर– लिखे जाइए, लिखी जाइएगा

परोक्ष विधि– लिखे जाना (पुल्लिंग)
लिखी जाना (स्त्रीलिंग)

लिखे जाइएगा, लिखे जाइयो, लिखी जाइयो।

इसी प्रकार अन्य क्रियाओं के रूप होते हैं।

'हो' धातु

'हो' धातु के दो अर्थ निकलते हैं–विद्यमानता और उत्पत्ति। जालंधर में विद्वान बहुत हैं (विद्यमानता), होशियारपुर में आम बहुत होते हैं (उत्पत्ति)।

अकर्मक 'हो' धातु (उत्पत्ति अर्थ में) की रूपावली

भूतकाल

1. **सामान्यभूत**–हुआ, हुए।
2. **आसन्नभूत**–हुआ है, हुए हैं।
3. **पूर्णभूत**–हुआ था, हुए थे।
4. **अपूर्णभूत**–हुआ था, होते थे।
5. **संदिग्धभूत**–हुआ होगा, हुए होंगे।
6. **हेतुहेतुमद्‌भूत**–हुआ होता, हुए होते।

नोट

वर्तमान काल

1. **सामान्य वर्तमान**–होता है, होते हैं।
2. **संदिग्ध वर्तमान**–होता होगा, होते होंगे।
3. **अपूर्ण वर्तमान**–हो रहा है, हो रहे हैं।

भविष्यत् काल

1. **सामान्य भविष्यत्**–होगा, होंगे।
2. **संभाव्य भविष्यत्**–होवे, होवें।
3. **आदर विधि**–होइए।
4. **परोक्ष विधि**–होना।

अकर्मक 'हो' धातु ('विद्यमानता' के अर्थ में) की रूपावली

1. **सामान्यभूत**–था, थे।
2. **सामान्य वर्तमान**–है, हैं।

शेष सब रूप उत्पत्ति अर्थ 'हो' धातु के समान हैं।

क्रिया का पद-परिचय

क्रिया के पद-परिचय के लिए निम्नलिखित बातों का वर्णन आवश्यक होता है–(1) भेद सकर्मक अथवा अकर्मक, (2) वाच्य, (3) काल, (4) प्रकार, (5) लिंग, (6) वचन, (7) पुरुष, (8) वाक्य से उसका संबंध आदि।

उदाहरण –

यह बात सुनकर राम ने कहा यदि वे आएँ तो उनका स्वागत किया जाएगा।

सुनकर–पूर्वकालिक क्रिया, सकर्मक, कर्तृवाच्य 'यह बात' इसका कर्म।

कहा–क्रिया, सामान्यभूत, एकवचन, पुल्लिग, प्रथम पुरुष, एकवचन।

उस–इसका कर्ता है।

आएँ–क्रिया, अकर्मक, कर्तृवाच्य, भविष्यत्, अन्य पुरुष, बहुवचन। 'वे' इसका कर्ता है।

किया जाएगा–क्रिया, सकर्मक, कर्मवाच्य, सामान्य भविष्यत्, पुल्लिग, अन्य पुरुष, एकवचन।

5.4 सारांश (Summary)

- जिस शब्द से क्रिया, विशेषण तथा दूसरे क्रियाविशेषण की विशेषता प्रकट होती है, उसे क्रियाविशेषण कहते हैं।
- क्रियाविशेषण अविकारी होते हैं, अर्थात् इनके रूप, लिंग, वचन, पुरुष और वाक्य के कारण कभी नहीं बदलते। क्रियाविशेषण के मुख्य चार भेद हैं : (1) कालवाचक, (2) स्थानवाचक, (3) परिमाणवाचक, (4) रीतिवाचक।
- क्रियापद के निर्माण में काल, पक्ष और वृत्ति सर्वप्रथम विचारणीय है और उसके बाद लिंग, वचन, पुरुष वाच्य इत्यादि।
- संज्ञाओं के समान क्रिया के दो लिंग होते हैं–पुल्लिग और स्त्रीलिंग।

नोट

- बोलते समय वाक्य का प्रयोग तीन प्रकार से किया जाता है। जो निम्नलिखित हैं–

  1. कर्तृवाच्य 2. कर्मवाच्य 3. भाववाच्य।

- क्रिया के जिस रूप से उसके होने या करने के समय का बोध हो, उसे 'काल' कहते हैं। काल के तीन भेद होते हैं–

  1. भूतकाल 2. वर्तमानकाल 3. भविष्यत् काल।

5.5 शब्दकोश (Keywords)

अकर्मक – कर्म से रहित

सकर्मक – कर्म सहित

बोध – ज्ञान

5.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. क्रियाविशेषण का पद-परिचय दीजिए।
2. 'क्रिया के विकार' से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।
3. रीतिवाचक विशेषण किसे कहते हैं? उदाहरण सहित बताइए।
4. काल के मुख्य भेदों का वर्णन कीजिए।
5. वाच्य कितने प्रकार के होते हैं? उदाहरण सहित बताइए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. परिमाणवाचक	2. क्रियाविशेषण	3. अविकारी	4. चार
5. (क)	6. (क)	7. (ख)	8. (ख)।

5.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. सरल हिंदी व्याकरण और रचना–*वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. परिष्कृत हिंदी व्याकरण–*बद्रीनाथ कपूर, प्रभात प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*

नोट

इकाई–6 : विपरीत शब्द

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
6.1 विलोम शब्द या विपरीतार्थक शब्द
6.2 सारांश (Summary)
6.3 शब्दकोश (Keywords)
6.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
6.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- विलोम शब्द का अर्थ जानने में।
- विलोम शब्दों का अध्ययन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'विलोम' शब्द का अर्थ है–**उल्टा** या **विपरीत**। अत: किसी शब्द का उल्टा अर्थ व्यक्त करने वाला शब्द विलोमार्थक शब्द कहलाता है। उदाहरणार्थ **दिन-रात**। यहाँ रात शब्द, 'दिन' शब्द का ठीक उल्टा (विपरीत) अर्थ व्यक्त कर रहा है; अत: यह विलोम शब्द है। विलोमार्थक शब्दों को **विपर्यायवाची**, **विपरीतार्थक**, **प्रतिलोमार्थक** और **विलोम** शब्द भी कहते हैं।

भाषा में भावों-विचारों की स्पष्टता के लिए विलोम शब्द का ज्ञान उपयोगी होता है; जैसे–**अवरोह** शब्द का 'पतन' 'नीचे गिरना' की अपेक्षा **आरोह** शब्द अर्थात् उल्टा कहने से अर्थ की प्रतीति और भी स्पष्टता से हो जाती है। इस प्रकार विलोम शब्दों के प्रयोग से भाषा में अभिव्यक्ति शक्ति बढ़ जाती है।

6.1 विलोम शब्द या विपरीतार्थक शब्द

विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु विलोमार्थक शब्दों की सूची प्रस्तुत है–

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
		(अ)	
अंत	आदि	अकंटक	कंटकित
अंतरंग	बहिरंग	अक्षत	विक्षत
अंतर्द्वन्द्व	बहिर्द्वन्द्व	अक्षम	सक्षम
अंतर्मुखी	बहिर्मुखी	अदृश्य	दृश्य

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
अंदर	बाहर	अस्तित्व	अनस्तित्व
अंधकार	प्रकाश	अर्हता	अनर्हता
अकर्मक	सकर्मक	अभिमुख	प्रतिमुख
अकाल	सुकाल	अभिप्रेत	अनभिप्रेत
अग्र	पश्च	अधिमूल्यन	अवमूल्यन
अगला	पिछला	अधीन	स्वतंत्र
अवर	प्रवर	अधम	उत्तम
अनुदार	प्रतिक्रियाशील	अध्यवसाय	अनध्यवसाय
अवनति	उन्नति	अधोमुखी	ऊर्ध्वमुखी
अचल	सचल	अधोगामी	ऊर्ध्वगामी
अर्पण	ग्रहण	अति	अल्प
अभिज्ञ	अनभिज्ञ	अथ	इति
अनुकूल	प्रतिकूल	अधिकृत	अनधिकृत
अर्पण	ग्रहण	अथाह	छिछला
अनिवार्य	वैकल्पिक	अनाथ	सनाथ
अच्युत	च्युत	अविचल	ढुलमुल
अस्त	उदय	अविस्मरणीय	विस्मरणीय
अवनि	अंबर	अनुराग	विराग
अवनत	उन्नत	अग्रज	अनुज
अनुलोम	प्रतिलोम	अवनि	अंबर
अमित	परिमित	अस्त्रीकरण	निरस्त्रीकरण
अल्पज्ञ	बहुज्ञ	अस्तित्व	अनस्तित्व
अशक्त	सशक्त	अपना	पराया
असीम	सीमित	अपेक्षा	उपेक्षा
अपराधी	निरपराधी	अत्यधिक	स्वल्प
अभिसरण	अपसरण	अनुरक्ति	विरक्ति
अवाक्	सवाक्	अर्जन	खर्च
अग्नि	जल	अवकाश	अनवकाश
अक्षर	क्षर	अहिंसा	हिंसा
अमर	मर्त्य	अर्वाचीन	प्राचीन
अर्थ	अनर्थ	अल्पमत	बहुमत
अगम	सुगम	अपमान	सम्मान
अग्नि	जल	अज्ञ	विज्ञ
अमृत	विष	अलभ्य	लभ्य
अभ्यास	अनभ्यास	अच्छा	बुरा
अमावस्या	पूर्णिमा	अधुनातन	पुरातन
अनुग्रह	विग्रह	अशन	अनशन

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
असंभव	संभव	अर्वाचीन	प्राचीन
अभ्यस्त	अनभ्यस्त	अधिक	कम
अनुमत	अननुमत	अक्रूर	क्रूर
अमीर	गरीब	अतिवृष्टि	अनावृष्टि
अन्वय	अनन्वय	अल्प	प्रचुर
अनुक्रिया	प्रतिक्रिया		

नोट्स 'विलोम' शब्द का अर्थ है–उल्टा या विपरीत।

(आ)

आकाश	पाताल	आकर्षण	विकर्षण
आहार	निराहार	आक्रमण	प्रतिरक्षण
आगत	अनागत	आस्तिक	नास्तिक
आगामी	विगत	आत्मीय	अनात्मीय
आचार	अनाचार	आत्मविश्वास	आत्मसंशय
आदर	अनादर	आलोक	तिमिर
आतुर	अनातुर	आवश्यक	अनावश्यक
आश्रित	अनाश्रित	आरोही	अवरोही
आध्यात्मिक	भौतिक	आय	व्यय
आविर्भाव	तिरोभाव	आयात	निर्यात
आरोहण	अवरोहण	आघात	अनाघात
आग्रह	दुराग्रह	आह्वान	विसर्जन
आधार	निराधार	आकीर्ण	विकीर्ण
आग	पानी	आकस्मिक	सामयिक
आशा	निराशा	आचार	अनाचार
आशावादी	निराशावादी	आमिष	निरामिष
आशीष	अभिशाप	आगमन	प्रस्थान
आनंदमय	विषादपूर्ण	आकुंचन	प्रसारण
आसक्त	अनासक्त	आर्ष	अनार्ष
आहत	अनाहत	आराध्य	दुराध्य
आस्था	अनास्था	आवर्तक	अनावर्तक
आरूढ़	अनारूढ़	आद्य	अंत्य
आजादी	गुलामी	आज्ञापालन	अवज्ञा
आभ्यंतर	बाह्य	आरंभ	अंत
आदर	निरादर	आलसी	कर्मठ

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
आदिष्ट	निषिद्ध	आहूत	अनाहूत
आर्य	अनार्य	आर्द्र	शुष्क
आदि	अंत	आमंत्रित	अनामंत्रित
आहार्य	अनाहार्य	आवृत	अनावृत
आडंबर	सादगी	आश्चर्य	अनाश्चर्य

(इ)

इच्छुक	अनिच्छुक	इज्जत	बेइज्जती
इष्ट	अनिष्ट	इधर	उधर
इच्छा	अनिच्छा	इहलोक	परलोक

(ई)

ईहा	अनीहा	ईश	अनीश
ईश्वर	अनीश्वर	ईप्सित	अनीप्सित
ईमानदार	बेईमान		

क्या आप जानते हैं विलोम शब्दों को विपरीतार्थक भी कहते हैं।

(उ)

उत्तम	अधम	उच्च	निम्न
उदय	अस्त	उपयुक्त	अनुपयुक्त
उपमान	व्यतिरेक	उपादेय	अनुपादेय
उत्तर	दक्षिण	उल्लास	विषाद
उत्थान	पतन	उन्मुख	विमुख
उद्घाटन	समापन	उज्ज्वल	धूमिल
उत्पत्ति	विनाश	उचित	अनुचित
उन्नयन	पलायन	उस्ताद	चेला
उर्वरा	बंजर	उत्कृष्ट	निकृष्ट
उचित	अनुचित	उक्त	अनुक्त
उन्नत	अवनत	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण
उद्गम	विलय	उद्भव	अवसान
उद्धत	विनत	उदात्त	अनुदात्त
उषा	संध्या	उदार	कृपण
उदार	अनुदार	उच्छिष्ट	अनुच्छिष्ट
उत्साह	अनुत्साह	उदित	अस्त
उष्ण	शीतल	उद्वेग	निरुद्वेग

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
उपमेय	अनुपमेय	उत्तेजन	प्रशमन
उत्कर्ष	अपकर्ष	उपसर्ग	प्रत्यय
उन्मूलन	रोपण	उपस्थित	अनुपस्थित
उधार	नकद	उल्लंघन	अनुल्लंघन
उग्र	सौम्य	उपार्जित	अनुपार्जित
उदयाचल	अस्ताचल	उदग्र	अनुदग्र
उद्यमी	निरुद्यम	उन्मत	अनुन्मत्त
उपयोग	अनुपयोग		
		(ऊ)	
ऊष्मा	शीतलता	ऊँच	नीच
		(ऋ)	
ऋजु	वक्र	ऋणी	उऋृण
ऋत	अनृत	ऋद्धि	विपन्नता
		(ए)	
एकत्र	विकीर्ण	एक	अनेक
एकाधिकार	सर्वाधिकार	एड़ी	चोटी
एकेश्वरवाद	बहुदेववाद	एकाग्र	चंचल
एकार्थक	अनेकार्थक	एकता	अनेकता
एकाग्रचित	अन्यमनस्क	एषणा	अनैषणा
एकपक्षीय	बहुपक्षीय	एकांगी	अनेकांगी
		(ऐ)	
ऐहिक	पारलौकिक	ऐतिहासिक	अनैतिहासिक
ऐच्छिक	अनैच्छिक		
		(ओ)	
ओजस्वी	निस्तेज	ओछा	गंभीर
ओतप्रोत	विहीन	ओह	वाह
		(औ)	
औरत	मर्द	औरस	दत्तक
औपचारिक	अनौपचारिक	औषधि	अनौषधि
औचित्य	अनौचित्य	औदार्य	अनौदार्य
		(क)	
कर्कश	मधुर	कापुरुष	पुरुषार्थी
कलंकित	निष्कलंक	कसूर	बेकसूर
कनिष्ठ	ज्येष्ठ	कानूनी	गैरकानूनी

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
काट्य	अकाट्य	कोलाहल	शांति
क्रय	विक्रय	कुटिल	सरल
कामी	अकाम	कर्मठ	निकम्मा
कुंठित	अकुंठित	कुरूप	सुरूप
कुपथ	सुपथ	कृष्ण	शुक्ल
कुमारी	विवाहिता	काल	अकाल
कल्पनातीत	कल्पनीय	कुशल	अकुशल
कुव्यवस्था	सुव्यवस्था	कुष्ठ	तीक्ष्ण
कृपण	दाता	कुलीन	अकुलीन
कृपा	अकृपा	कमी	बाहुल्य
कृत	अकृत	कार्य	अकार्य
कुफल	सुफल	करुण	निष्ठुर
कृश	पुष्ट	कटु	मधुर
कुख्यात	विख्यात	कड़ा	मुलायम
कुबुद्धि	सुबुद्धि	कपट	निष्कपट
कुकृति	सुकृति	कलयुग	सतयुग
कुलटा	पतिव्रता	कपूत	सपूत
क्रम	व्यतिक्रम	कृतज्ञ	कृतघ्न
कड़वा	मीठा	कोमल	कठोर
कीर्ति	अपकीर्ति	क्रोध	क्षमा
कोप	कृपा	कर्मिष्ठता	अकर्मिष्ठता
कल्याण	अकल्याण	कर्मण्य	अकर्मण्य
कायर	साहसी	कारण	अकारण
कुटिल	सरल	कृपण	फिजूलखर्ची
कृष्ण	श्वेत	कर्षण	विकर्षण
क्रूर	विनम्र	कुलदीप	कुलांगर
कृत्रिम	प्रकृत	कुसुम	वज्र

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. विलोम शब्दों के प्रयोग से भाषा में .... शक्ति बढ़ जाती है।
2. विलोमार्थक शब्दों को .... भी कहते हैं।
3. 'आस्तिक' का विलोम शब्द है .... ।
4. 'कृतज्ञ' का विपरीतार्थक है .... ।

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
		(ख)	
खंडन	मंडन	खेद	प्रसन्नता
खिलना	मुरझाना	खाली	भरा
खगोल	भूगोल	खुशकिस्मत	बदकिस्मत
खरीदना	बेचना	खुशमिजाज	बदमिजाज
खग	मृग	खूबसूरत	बदसूरत
खुश	नाखुश	खास	आम
खुला	बंद	खीझना	रीझना
खल	साधु, सज्जन	ख्यात	कुख्यात
खाद्य	अखाद्य	खेचर	भूचर
खर्च	आमदनी	खरा	खोटा
		(ग)	
गणतंत्र	राजतंत्र	गहन	विरल
गमन	आगमन	गुप्त	प्रकट
गंभीर	वाचाल	गर्म	ठंडा
गगन	पृथ्वी	गहरा	छिछला
ग्रहण	त्याग	गति	अवरोध
गूढ़	अगूढ़	गद्य	पद्य
गुनाहगार	बेगुनाह	गृही	त्यागी
गम्य	अगम्य	गृहीत	त्यक्त
गीला	सूखा	ग्राम	नगर
गोरी	साँवली	ग्रस्त	मुक्त
गहरा	उथला	ग्रथित	विकीर्ण
गाढ़ा	पतला	ग्रीष्म	शीत
गौरव	लाघव	गुरु	लघु
गृहस्थ	संन्यासी	गुण	दोष
गरल	सुधा	गुरुत्व	लघुत्व
गूढ़	प्रकट	गरिमा	लघिमा
गीत	अगीत	गत	आगत
गौरक्षक	गौभक्षक	गोचर	अगोचर
गेय	अगेय	ग्रामीण	नगरीय
		(घ)	
घर	बाहर	घृणा	प्रेम
घटना	बढ़ना	घाटा	लाभ
घटाना	बढ़ाना	घोषित	अघोषित

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
घटक	समुदाय	घना	छितरा
घात	प्रतिघात	घटित	अघटित
घोषित	अघोषित	घरेलू	बाहरी
घोष	निर्घोष, अघोष		
		(च)	
चर	अचर	चेतन	अचेतन
चतुर	मूढ़	चिकना	खुरदरा
चढ़ाव	उतार	चोर	साहूकार
चल	अचल	चाहा	अनचाहा
चर्चित	अचर्चित	चैन	बेचैनी
चाटुकार	स्वाभिमानी	चर	अचर
चारु	अचारु	चेष्टा	निश्चेष्ट
चित्र	विचित्र	चिरायु	अल्पायु
चिर	अचिर	चल	अचल
चिरंतन	नश्वर	चोर	साधु
चिंत्य	अचिंत्य	चोटी	एड़ी
चिरस्थायी	अल्पस्थायी	चिंतित	निश्चिंत
		(छ)	
छल	सारल्य	छूत	अछूत
छली	निश्छल	छोटा	बड़ा
छादन	प्रकाशन	छोरा	छोरी
छाया	आतप	छुटकारा	बंधन
छात्र	छात्रा	छाँह	धूप
छिन्न	संलग्न		
		(ज)	
जड़	चेतन	जाड़ा	गर्मी
जल	स्थल	जीवन	मरण
जटिल	सरल	जागरण	निद्रा
जन्म	मृत्यु	जागना	सोना
जंगम	स्थावर	ज्येष्ठ	कनिष्ठ
जय	पराजय	ज्वार	भाटा
जाति	विजाति	ज्योति	तम
जागृत	सुप्त	जेय	अजेय
जीत	हार	जीर्ण	अजीर्ण
जड़ता	चेतनता	जातीय	विजातीय
जल	थल	जालिम	रहमदिल

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
जवानी	बुढ़ापा	जाली	असली
जारज	औरस		
		(झ)	
झगड़ा	शांति	झूठ	सच
झंकृत	निस्तब्ध	झोंपड़ी	महल
झंझा	तूफान		
		(ट)	
टल	अटल	टीका	भाष्य
टकसाली	सामान्य	टूटना	जुड़ना
		(ठ)	
ठहरना	जाना	ठीक	गलत
ठंडा	गर्म	ठोस	तरल
		(ड)	
डर	निडर	डाल	पत्ती
		(ढ)	
ढंग	कुढंग/बेढंग	ढाढस	त्रास
ढरना	रुकना	ढाल	तलवार
ढालू	समतल	ढीठ	विनम्र
		(त)	
तरल	ठोस	तिमिर	प्रकाश
तरुण	वृद्ध	तप्त	शीतल
तट	मझधार	तृषा	तृप्ति
तल	अतल	ताजा	बासी
तन्वी	स्थूल	तीक्ष्ण	कुंठित
तंद्रा	जागरण	तीव्र	मंद
तृष्णा	वितृष्णा	तुलनीय	अतुलनीय
तर्कपूर्ण	कुतर्कपूर्ण	तुच्छ	महत्त्वपूर्ण
तृप्त	अतृप्त	तेज	धीमा
व्यक्त	ग्रहीत	तेजस्वी	निस्तेज
		(थ)	
थकावट	स्फूर्ति	थोक	फुटकर
थोड़ा	बहुत		

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
		(द)	
दयालु	निर्दयी	दुराचारी	सदाचारी
दृश्य	अदृश्य	दक्ष	अदक्ष
दृढ़	अदृढ़	दुर्गति	सुगति
दक्षिण	उत्तर	दुष्कर	सुकुर
दरिद्र	संपन्न	द्वैत	अद्वैत
दानी	कृपण	दुर्लभ	सुलभ
दिवा	रात्रि	द्वेष	सद्भावना
दीर्घायु	अल्पायु	देशभक्त	देशद्रोही
दीर्घ	लघु	दुष्प्राप्य	सुप्राप्य
दुर्बल	सबल	दाखिल	खारिज
देनदार	लेनदार	दंड	पुरस्कार
दुष्ट	सज्जन	दैत्य	देव
दुराचार	सदाचार	दाता	सूम
देह	विदेह	द्वंद्व	निर्द्वंद्व
देव	दानव	दुर्जन	सज्जन
देय	अदेय	दुष्ट	भला
देन	लेन	दूषित	स्वच्छ
देर	सवेर	दिव्य	अदिव्य
		(ध)	
धरा	गगन	ध्रुव	अस्थिर
धवल	श्याम	धैर्य	अधैर्य
धनी	निर्धन	धर्म	अधर्म
धनात्मक	ऋणात्मक	ध्वंस	निर्माण
धीर	अधीर	धीरता	अधीरता
धृष्ट	विनीत या विनम्र		
		(न)	
नगद	उधार	न्याय	अन्याय
नश्वर	अनश्वर	न्यून	अधिक
नख	शिख	नागरिक	ग्रामीण
नवीन	प्राचीन	नर	नारी
नया	पुराना	निर्गुण	सगुण
निषिद्ध	विहित	निराशा	आशा
निश्चल	चंचल	निरोगी	रोगी
निकट	दूर	निःशुल्क	सशुल्क

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
निरर्थक	सार्थक	निर्भय	भयभीत
निष्काम	सकाम	निर्दोष	सदोष
निर्मल	मलिन	नूतन	पुरातन
नत	उन्नत	निर्माण	विनाश
निरक्षर	साक्षर	निरामिष	सामिष
निडर	कायर	नियमित	अनियमित
निर्धनता	धनाढ्यता	नियंत्रित	अनियंत्रित
निंदा	स्तुति	निर्भीक	भयभीत
निश्चित	अनिश्चित	निर्लज्ज	सलज्ज
नित्य	अनित्य	निष्ठा	अनिष्ठा
निर्दय	सदय	न्यायी	अन्यायी
नीरुजता	रुग्णता	नीति	अनीति
नेकी	बदी	न्यून	अधिक
नैतिक	अनैतिक	नीरस	सरस
नैसर्गिक	अनैसर्गिक	निर्दिष्ट	अनिर्दिष्ट

(प)

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
पंडित	मूर्ख	परुष	कोमल
परिचित	अपरिचित	परतंत्र	स्वतंत्र
प्रकट	गुप्त	परिश्रम	विश्राम
प्रवेश	निकास	पारितोष	दंड
परमार्थ	स्वार्थ	परा	अपरा
परार्थ	स्वार्थ	पेय	अपेय
पक्षपाती	निष्पक्ष	पूरा	अधूरा
पसंद	नापसंद	पैना	भोथरा
प्रसारण	संकुचन	पूर्ववर्ती	परवर्ती
प्रफुल्ल	म्लान	परिहार्य	अपरिहार्य
प्रगति	अधोगति	परार्थ	स्वार्थ
पक्का	कच्चा	पटु	अपटु
परोक्ष	प्रत्यक्ष	पतन	उत्थान
प्रोत्साहित	हतोत्साहित	परिष्कृत	अपरिष्कृत
प्रधान	गौण	पार्थिव	अपार्थिव
प्रशंसा	निंदा	पाक	नापाक
प्रत्यय	अप्रत्यय	पापी	निष्पाप
प्रभु	भृत्य	पूत	अपूत
पवित्र	अपवित्र	पूर्ण	अपूर्ण
पुरोगामी	पश्चगामी	प्रगल्भ	अप्रगल्भ

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
परिमित	अपरिमित	प्रतिष्ठा	अप्रतिष्ठा
परिणत	अपरिणत	प्राय:	बहुधा
परोक्ष	अपरोक्ष	प्रीति	द्वेष
पाच्य	अपाच्य	प्रौढ़	अप्रौढ़
पठित	अपठित	प्रतिपन्न	अप्रतिपन्न
परिग्रही	अपरिग्रही	प्राकृतिक	अप्राकृतिक
पोषित	अपोषित	पक्ष	विपक्ष
पृथक्	संयुक्त	पात्र	कुपात्र
प्रजातंत्र	राजतंत्र	प्राचीन	आधुनिक
पदोन्नत	पदावनत	पावन	अपावन
प्रवेश	निर्गम	पाठ्य	अपाठ्य
प्रकाश	अंधकार	पालक	घातक
प्रतीची	प्राची	पारदर्शक	अपारदर्शक
प्रगतिशील	अप्रगतिशील	पिता	माता
प्रावैगिक	स्थैतिक	पुरस्कार	दंड
पूर्ण	अपूर्ण	प्रशस्त	अप्रशस्त
पूर्णता	अभाव	प्रशिक्षित	अप्रशिक्षित
पूर्व	पश्चिम	प्रलय	सृष्टि
पौष्टिक	अपौष्टिक	प्रच्छन्न	अप्रच्छन्न
पूर्व (पहला)	उत्तर (बाद का)	प्रकृत	अप्रकृत
पूर्णिमा	अमावस्या	प्रतिबद्ध	अप्रतिबद्ध
पौरस्तय	पाश्चात्य	प्रत्याशित	अप्रत्याशित
		(फ)	
फल	अफल	फूल	काँटा
फाटक	हाटक	फुल्ल	म्लान
फैलना	सिकुड़ना	फिरना	स्थिर
फायदा	नुकसान		
		(ब)	
बलवान	बलहीन	बंधन	मोक्ष
बलिष्ठ	दुर्बल	बृहत	लघु
बचपन	यौवन	बहिष्कार	स्वीकार
बड़ा	छोटा	बहिरंग	अंतरंग
बहुत	थोड़ा	बंध्या	स्वीकार
बढ़िया	घटिया	बोध्य	अबोध्य

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
बर्बर	सभ्य	बेडौल	सुडौल
बहुतायत	कमी	बिंब	प्रतिबिंब
बेमेल	संगत	बुढ़ापा	जवानी
बाधित	अबाधित	बुद्धिमान	मूर्ख
बंधुत्व	शत्रुता	बुराई	भलाई
बाढ़	सूखा	बोध	अबोध
बाहर	भीतर		
		(भ)	
भगवान	भगवती	भोला	चालाक
भय	साहस	भीषण	सौम्य
भव्य	अभव्य	भग्न	अभग्न
भद्र	अभद्र	भंगुर	अभंगुर
भक्ष्य	अभक्ष्य	भोग्य	अभोग्य
भंजक	योजक	भक्त	अभक्त
भारी	हल्का	भलाई	बुराई
भाग्य	दुर्भाग्य	भिन्न	अभिन्न
भाव	अभाव	भूत	भविष्य
भयभीत	निर्भय	भूगोल	खगोल
भीड़	छीड़	भोगी	योगी
भ्रांत	निभ्रांत	भोज्य	अभोज्य
भूषण	दूषण	भौतिक	आध्यात्मिक
भावी	अतीत	भाई	बहिन
		(म)	
महात्मा	दुरात्मा	मनुज	दनुज
मंद	त्वरित	मौखिक	लिखित
मधु	तिक्त	मित	अपरिमित
मनोरम	असुंदर	मधु	कटु
मुसीबत	आराम	ममता	निर्ममता
मुख	पृष्ठ	मानव	दानव
मार्जित	अमार्जित	मानवीय	अमानवीय
मूढ़	ज्ञानी	मानवता	दानवता, नृशंसता
मुनाफा	नुकसान	मालिक	नौकर
मृदुल	कठोर	मिलन	विरह
मिथ्या	सत्य	महीन	मोटा
मैत्री	अमैत्री	मत	विमत

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
मिश्रित	अमिश्रित	मसृण	रुक्ष
मूर्त	अमूर्त	मेहमान	मेजबान
मित्र	शत्रु	मितव्ययिता	अमितव्ययिता
मूल	निर्मूल	मीठा	कड़वा
मूल्यवान	मूल्यहीन	मुदित	खिन्न
मौन	मुखर	मुसीबत	आराम
मोक्ष	बंधन	मूक	वाचाल
		(य)	
यश	अपयश	योग्यता	अयोग्यता
यति	गृहस्थ	यौवन	बुढ़ापा
यथार्थ	कल्पित	योग्य	अयोग्य
याद	भूल	योग	वियोग
युद्ध	शांति	याचक	अयाचक
योगी	भोगी		
		(र)	
रत	विरत	रूढ़िबद्ध	रूढ़िमुक्त
रक्षक	भक्षक	रूक्ष	मृदु
रचना	ध्वंस	रौद्र	अरौद्र
राग	विराग	रद्द	बहाल
राजा	रंक/प्रजा	रीता (खाली)	भरा
राक्षस	देवता	रूदन	हास्य
राव	रंक	रोगी	नीरोगी
रहमदिल	बेरहम	राहत	प्रकोप
राजतंत्र	जनतंत्र	रिक्त	पूर्ण
रागी	विरागी	रूप	कुरूप
		(ल)	
लक्ष्य	अलक्ष्य	लौकिक	पारलौकिक
लघु	दीर्घ	ललित	कुरूप
लचीला/लचकीला	कठोर	लाघव	गौरव
लंबाई	चौड़ाई	लुप्त	व्यक्त
लाभ	हानि	लोहित	अलोहित
लिप्त	निर्लिप्त	लापरवाह	सावधान
लिखित	मौखिक	लुभावना	घिनौना
लेन	देन	लक्षित	अलक्षित

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
		(व)	
वर्तमान	भूत	वन	मरु
वंद्य	निंद्य	विश्लेषण	संश्लेषण
व्यस्त	अव्यस्त	व्यास	समास
व्यक्तिगत	सार्वभौम	वनस्थल	मरुस्थल
वाद	प्रतिवाद	विरत	निरत
विकारी	अविकारी	विशालकाय	क्षीणकाय
विपुल	स्वल्प	विदग्ध	अविदग्ध
विजय	पराजय	विचारित	अविचारित
विकास	ह्रास	विबुध	अविबुध
विशाल	क्षुद्र	विकृत	अविकृत
विशेष	साधारण	वसंत	पतझड़
विनत	उद्दंड	विकल	अविकल
विभव	पराभव	विद्यमान	अविद्यमान
वर	वधू	वर्ण्य	अवर्ण्य
विधवा	सधवा/सुहागिन	विभक्त	अविभक्त
विपन्न	संपन्न	विहित	अविहित
विदाई	स्वागत	वैदिक	अवैदिक
व्यष्टि	समष्टि	विश्वसनीय	अविश्वसनीय
विचलित	अविचलित	विलंब	अविलंब
विज्ञ	अविज्ञ	विनीत	धृष्ट
विपद	सपद	विस्तारण	संक्षेपण
विरल	सुलभ	विश्वास	अविश्वास
विराट	क्षुद्र	विस्मरण	स्मरण
व्याप्त	अव्याप्त	विषाद	हर्ष
व्यग्र	अव्यग्र	विशिष्ट	सामान्य
वैमनस्य	सौमनस्य	वीर	कायर
विश्वस्त	अविश्वस्त	विधि	निषेध
विस्तीर्ण	अविस्तीर्ण	विद्वान	मूर्ख
व्यवहृत	अव्यवहृत	वेदना	परमानंद

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. 'तरफ' का विलोम है

   (क) ठोस (ख) ठीक (ग) कारक (घ) द्रव्य

6. 'व्यष्टि' का विपरीतार्थक है

   (क) संपन्न (ख) समष्टि (ग) समास (घ) संश्लेषण

7. 'आरोह' का उल्टा अर्थ व्यक्त करने वाला शब्द है

   (क) अवरोह (ख) अव्यस्त (ग) व्यास (घ) विरोह

8. 'हर्ष' का विलोम है

   (क) खुशी (ख) विषाद (ग) आनंद (घ) परमानंद

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
		(श)	
शकुन	अपशकुन	शयन	जागरण
शब्द	नि:शब्द	शांति	अशांति
शक्ति	क्षीणता	शायद	अवश्य
शरण	अशरण	शासक	शासित
शत्रुता	मित्रता	शालीन	धृष्ट
शस्त्र	अस्त्र	शिख	नख
शिष्ट	अशिष्ट	शोषक	पोषक
शिक्षित	अशिक्षित	शोभनीय	अशोभनीय
शिक्षा	अशिक्षा	शिष्ट	अशिष्ट
शिखर	तल	शीर्ष	तल
शिष्य	गुरु	शाप	वरदान
शीतल	ऊष्ण	श्लील	अश्लील
शुभ	अशुभ	शर्मदार	बेशर्म
शुद्धि	अशुद्धि	शुष्क	सरस
शुक्ल	कृष्ण	शूर	भीरु
शुल्क	नि:शुल्क	श्लाघा	निंदा
शुचि	अशुचि	श्वास	उच्छ्वास
शेष	अशेष	शोहरत	बदनामी
शोभन	अशोभन	शोधित	अशोधित
		(स)	
संगत	असंगत	सहयोगी	प्रतियोगी
संपद्	विपद्	स्वेदश	विदेश
संकोच	नि:संकोच	सज्जन	दुर्जन

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
संयोग	वियोग	सत्कर्म	दुष्कर्म
संश्लिष्ट	विश्लिष्ट	स्थावर	जंगम
संत	असंत	सगुण	निर्गुण
संधि	विग्रह	सृजन	विनाश
सपूत	कपूत	सत	असत
सक्षम	अक्षम	स्थूल	सूक्ष्म
सभ्य	असभ्य	स्वामी	सेवक
संपन्न	विपन्न	स्वार्थी	परार्थी
सत्कार	तिरस्कार	स्वर्ग	नरक
सबल	दुर्बल	स्पष्ट	अस्पष्ट
समावेश	अनावेश	संकल्प	विकल्प
सनाथ	अनाथ	स्वजाति	विजाति
सनातनी	प्रगतिवादी	स्वीकृति	अस्वीकृति
ससीम	असीम	सामयिक	असामयिक
सदाचार	दुराचार	सामिष	निरामिष
सरल	कठिन	साहस	भय
सवर्ण	असवर्ण	सात्विक	तामसिक
समूल	निर्मूल	साक्षर	निरक्षर
सत्य	असत्य/झूठ	साहचर्य	पृथक्करण
स्थिर	चंचल	सन्निविष्टन	निस्तारण
सित	असित	सातत्य	असातत्य
सुकृति	कुकृति	स्वदेशी	विदेशी
सुदूर	निकट	सुनाम	दुर्नाम
सुमार्ग	कुमार्ग	सुमुख	दुर्मुख
सुपथ	कुपथ	सेवित	असेवित
सुंदर	असुंदर	स्तब्ध	अस्तब्ध
सुपात्र	कुपात्र	सुसाध्य	दु:साध्य
सुशील	दु:शील	सुसंगति	कुसंगति
सुगंध	दुर्गंध	स्खलित	अस्खलित
सुधा	गरल	स्थिरचित्त	अस्थिरचित्त
सुसमय	कुसमय	सुलभ	दुर्लभ
सुलक्षण	कुलक्षण	सौम्य	उग्र
सुकाल	दुष्काल	सचेत	अचेत
सुगति	दुर्गति	सजल	निर्जल
सुधार्य	असुधार्य	सुरीति	कुरीति
सैद्धांतिक	असैद्धांतिक	स्पर्धा	सहयोग

नोट

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
स्पृश्य	अस्पृश्य	स्मरणीय	विस्मरणीय
सुबोध	दुर्बोध	स्वाभाविक	अस्वाभाविक
सौभाग्य	दुर्भाग्य	स्वार्थ	परमार्थ
स्थिर	अस्थिर	सुखांत	दुखांत
सुमति	कुमति	सुफल	कुफल
सुर	असुर	स्याह	सफेद
सुप्रबंध	कुप्रबंध	स्निग्ध	अस्निग्ध
समावेशन	अनावेशन	स्थैर्य	अस्थैर्य
स्वर्ग	नर्क	स्वावलंबी	परावलंबी
संतोष	असंतोष		

टास्क विलोम शब्द से क्या तात्पर्य है?

(ह)

हर्ष	विषाद	हमदर्द	बेदर्द
हमारा	तुम्हारा	हत	अहत
हँसना	रोना	हिंसा	अहिंसा
ह्रस्व	दीर्घ	हास	रुदन
हित	अहित	ह्रास	वृद्धि
हेय	ग्राह्य	हार	जीत
होनी	अनहोनी	हानि	लाभ

(क्ष)

क्षर	अक्षर	क्षति	लाभ
क्षमा	दंड	क्षणिक	शाश्वत

(त्र)

त्रिकोण	षट्कोण	त्रिकुटी	भृकुटी

(ज्ञ)

ज्ञान	अज्ञान	ज्ञानी	अज्ञानी/मूर्ख
ज्ञेय	अज्ञेय	ज्ञात	अज्ञात

(श्र)

श्राप	आशीर्वाद	श्रोता	वक्ता
श्रद्धा	अश्रद्धा	श्रवण	दर्शन
श्रीमान	श्रीमती		

नोट

6.2 सारांश (Summary)

- 'विलोम' शब्द का अर्थ है–उल्टा या विपरीत। अत: किसी शब्द का उल्टा अर्थ व्यक्त करने वाला शब्द विलोमार्थक शब्द कहलाता है। उदाहरणार्थ दिन-रात। विलोमार्थक शब्दों को विपर्यायवाची, विपरीतार्थक, प्रतिलोमार्थक और विलोम शब्द भी कहते हैं।

6.3 शब्दकोश (Keywords)

विलोमार्थक – विपरीत अर्थ देने वाला

आरंभ – शुरू

आदर – सम्मान

6.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'विलोम' से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।
2. विलोमार्थक शब्दों को किस-किस नाम से जानते हैं?
3. विलोम शब्दों का ज्ञान उपयोगी क्यों है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

1. अभिव्यक्ति	2. विपर्यायवाची	3. नास्तिक	4. कृतघ्न
5. (क)	6. (ख)	7. (क)	8. (ख)।

6.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*
2. मुग्धबोध हिंदी व्याकरण–*कृष्ण नारायण प्रसाद मागध।*
3. हिंदी व्याकरण की अभ्यास पुस्तिका–*जी.पी. शर्मा, ओरिएंट ब्लैक स्वान।*

इकाई–7 : पर्यायवाची शब्द

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
7.1 पर्यायवाची शब्द (Synonymous Word)
7.2 सारांश (Summary)
7.3 शब्दकोश (Keywords)
7.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
7.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पर्यायवाची शब्द का अर्थ जानने में।
- भाषा में पर्यायवाची शब्दों की अनिवार्यता जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पर्याय का अर्थ है–समान। अत: समान अर्थ व्यक्त करने वाले शब्दों को पर्यायवाची शब्द (Synonyms words) कहते हैं। इन्हें **प्रतिशब्द** या **समानार्थक** शब्द भी कहा जाता है। व्यवहार में पर्याय या पर्यायवाची शब्द ही अधिक प्रचलित हैं। अंग्रेजी व्याकरणकार **Nesfield** ने लिखा है–

"Those Words having the same or nearly the same meaning as another."

अर्थात् वे शब्द, जिनसे समान अथवा लगभग समान अर्थ का बोध होता है, पर्यायवाची शब्द कहलाते हैं।

पर्यायवाची शब्द किसी भी भाषा की सबलता के प्रतीक हैं, जिस भाषा में जितने अधिक पर्यायवाची शब्द होंगे, वह उतनी ही सबल व सशक्त भाषा होगी। इस दृष्टि से संस्कृत सर्वाधिक संपन्न भाषा है। कहा जाता है कि संस्कृत में 'राजा' शब्द के एक हजार से भी अधिक पर्यायवाची हैं। इसी प्रकार 'सारंग' शब्द के पचास से ऊपर शब्द बन सकते हैं। भाषा में इन शब्दों के प्रयोग से पूर्ण अभिव्यक्ति की क्षमता आती है, साथ ही भाषा में वह आकर्षण और लालित्य आ जाता है जो कि वक्ता और श्रोता, दोनों के लिए ही अनिवार्य है। जिस भाषा में समानार्थक शब्दों का अभाव होगा, उसमें अभिव्यक्ति का सौंदर्य नहीं होगा और न वह पुनरुक्ति दोष से मुक्त हो पाएगी।

नोट्स पर्याय का अर्थ है–समान। अत: समान अर्थ व्यक्त करने वाले शब्दों को पर्यायवाची शब्द कहते हैं।

नोट

7.1 पर्यायवाची शब्द (Synonymous Word)

विद्यार्थियों के अध्ययन के लिए पर्यायवाची शब्दों की सूची प्रस्तुत है–

अंक – संख्या, गिनती, क्रमांक, निशान, चिह्न, छाप।

अंकमाल – अंकवार, गिनती, आलिंगन, प्रेमालिंगन।

अंकुर – कोंपल, अँखुवा, कल्ला, नवोद्भिद्, कलिका, गाभ, कली, अंकुड़ा।

अंकुश – प्रतिबंध, रोक, दबाव, रुकावट, नियंत्रण।

अंग – अवयव, अंश, कला, हिस्सा, भाग, खंड, उपांश, घटक, टुकड़ा।

अगाध – अथाह, गंभीर, गहन, गहरा, असीम, अपार।

अग्नि – आग, अनल, पावक, जातवेद, कृशानु, वैश्वानर, हुताशन, रोहिताश्व, वायुसुख, हव्यवाहन।

अंचल – पल्लू, छोर, क्षेत्र, अंत, प्रदेश, आँचल, किनारा।

अचानक – अकस्मात्, अनायास, एकाएक, दैवयोग।

अच्छा – उचित, उपयुक्त, ठीक, सही, बढ़िया, चोखा, बेहतर।

अजनबी – अपरिचित, अनजान, अज्ञात, गैर, नावाकिफ, अनभिज्ञ।

अटल – अडिग, स्थिर, पक्का, दृढ़, अचल, निश्चल।

अठखेली – कौतुक, क्रीड़ा, खेलकूद, चुलबुलापन, उछल-कूद, हँसी-मजाक।

अमृत – अमिय, पीयूष, अमी, मधु, सोम, सुधा, सुरभोग।

अयोग्य – व्यर्थ, बेकार, अनर्ह, योग्यताहीन, नालायक।

अर्थ – अभिप्राय, प्रयोजन, धन, निमित्त, प्रकार, फल, अभिलाषा।

अरुण – गरुड़, लाल रंग, तड़का, मजीठ।

अर्जुन – भारत, गुडाकेश, पार्थ, श्वेत, कनेर, सहस्रार्जुन, धनन्या।

अलसेट – विलंब, देर, ढिलाई, विघ्न, धोखाधड़ी, अड़चन, हेराफेरी।

अल्हड़ – अकुशल, अनुभवहीन, उजड्ड, उद्धत, गँवार, अनाड़ी।

अवज्ञा – अनादर, तिरस्कार, अवमानना, अपमान, दूतक।

अश्व – घोड़ा, तुरंग, हय, बाजि, सैंधव, घोटक, बछेड़ा।

असुर – रजनीचर, निशाचर, दानव, दैत्य, राक्षस, दनुज, यातुधान।

अड्डा – निवास, डेरा, वेश्यालय, रहने का स्थान।

अड़ंगा – रुकावट, विघ्न, अवरोध, व्यवधान।

अतिथि – मेहमान, पाहुँना, अभ्यागत, आगंतुक।

अतीत – पूर्वकाल, भूतकाल, विगत, गत।

अनाज – अन्न, शस्य, धान्य, गल्ला, खाद्यान्न।

अनाड़ी – नौसिखिया, अनजान, अनभिज्ञ, अज्ञानी, अकुशल, अदक्ष, अपटु, मूर्ख, अल्पज्ञ।

अनार – सुनील, वल्कफल, मणिबीज, बीदाना।

अनिष्ट – बुरा, अपकार, अहित, नुकसान, हानि, अमंगल।

अनुकंपा – दया, कृपा, मेहरबानी।

अनुमान – अंदाज, अटकल, कयास।

अनुरक्त – मग्न, व्यस्त, तल्लीन, आसक्त।

अनुपम – सुंदर, अतुल, अपूर्व, अद्वितीय, अनोखा, अप्रतिम, अद्भुत, अनूठा।

नोट

अनुष्ठान – तप, योग, तपस्या, योगाभ्यास, साधना, कार्यारंभ।
अनुसरण – नकल, अनुकृत, अनुगमन।
अपमान – अनादर, निरादर, बेइज्जती।
अप्सरा – परी, देवकन्या, अरुणप्रिया, सुखवनिता, देवांगना, स्वर्वेश्या।
अबाध – अनिवारित, निर्विघ्न, बाधारहित, अपार, असीम, निरंकुश।
अभय – निडर, साहसी, निर्भीक, निर्भय, निश्चिंत।
अभागा – बदनसीब, भाग्यहीन, बदकिस्मत, कर्महीन।
अभाव – कमी, तंगी, न्यूनता, अपूर्ति।
अभिजात – कुलीन, सुजात, खानदानी।
अभिप्राय – प्रयोजन, आशय, तात्पर्य, मतलब, अर्थ, मंतव्य, विचार।
अभिज्ञ – जानकार, विज्ञ, परिचित, ज्ञाता।
अभिमान – गौरव, गर्व, नाज, घमंड, दर्प, स्वाभिमान।
अभियोग – दोषारोपण, कसूर, अपराध, गलती।
अभिलाषा – कामना, मनोरथ, इच्छा, आकांक्षा, ईहा, ईप्सा, चाह, लालसा, मनोकामना।
अभिवादन – नमस्ते, नमस्कार, प्रणाम, दंडवत, राम-राम।
अभ्यास – रियाज, पुनरावृत्ति, दोहराना, मश्क।
अमर – मृत्युंजय, अविनाशी, अनश्वर, अक्षर, अक्षय।
अमीर – धनी, धनाढ्य, संपन्न, धनवान, पैसेवाला।
अशोक – ताम्रपल्लव, हेमपुष्पक, कर्णपूरक, पिंडपुष्पक, रक्तपल्लव, अँगनाप्रिय।
अनंत – असंख्य, अपरिमित, अगणित, बेशुमार।
अज्ञानी – अनभिज्ञ, अनजान, मूर्ख, मूढ़।
अगुआ – अग्रणी, सरदार, मुखिया, प्रधान, नायक।
अधर – रदन, छद, रदपुट, होंठ, ओष्ठ।
अध्यापक – आचार्य, शिक्षक, गुरु, व्याख्यात, अवबोधक।
अंधकार – तम, तिमिर, ध्वांत।
अनल – धूमकेतु, पावक, कृशानु, हुताशन।
अघाना – छकना, तृप्त होना, संतुष्ट होना, पेट भरना।
अनुरूप – अनुकूल, संगत, अनुसार, मुआफिक।
अपकार – अनिष्ट, अमंगल, अहित।
आतुर – बेचैन, अधीर, उद्विग्न, आकुल।
अधिकार – सामर्थ्य, अर्हता, क्षमता, योग्यता।
अनोखा – विलक्षण, अनोखा, अद्भुत, अनूठा, विचित्र।
अंत:पुर – रनिवास, भोगपुर, जनानखाना।
अदृश्य – अंतर्धान, तिरोहित, ओझल, लुप्त।
अकाल – भुखमरी, काल, कुकाल, दुष्काल, दुर्भिक्ष।
अशुद्ध – दूषित, गंदा, अपवित्र, अशुचि।
असभ्य – अभद्र, अविनीत, अशिष्ट, गँवार, उजड्ड।
अभिप्राय – आशय, तात्पर्य, उद्देश्य, मंशा।

नोट

> *क्या आप जानते हैं* जिस भाषा में समानार्थक शब्दों का अभाव होगा, उसमें अभिव्यक्ति का सौंदर्य नहीं होगा।

अनुपम – अतुल, अपूर्व, अप्रतिम, निरूपम, अद्वितीय, बेजोड़।
अधम – नीच, निकृष्ट, पतित।
अवज्ञा – तिरस्कार, अवहेलना, अवमानना, तौहीन।
अतीत – विगत, व्यतीत, गत, गुजरा हुआ, बीता हुआ।
अनिश्चित – भ्रामक, संदिग्ध, अनिर्णीत, भ्रामक।
अपकीर्ति – अपयश, बदनामी, निंदा, अकीर्ति
अध्ययन – अनुशीलन, पारायण, पठनपाठन।
अनुरोध – अभ्यर्थना, प्रार्थना, विनती, याचना, निवेदन।
अखंड – पूर्ण, समस्त, संपूर्ण, अविभक्त, समूचा, पूरा।
अपराधी – मुजरिम, दोषी, कसूरवार, सदोष।
अधीन – आश्रित, मातहत, निर्भर, पराश्रित, पराधीन।
अनुचित – नाजायज, गैरवाजिब, बेजा, अनुपयुक्त, अयुत।
अन्वेषण – अनुसंधान, गवेषण, खोज, जाँच।
अनबन – विवाद, झगड़ा, तकरार, बखेड़ा।
अमूल्य – अनमोल, बहुमूल्य, मूल्यवान, बेशकीमती।
अवनति – अपकर्ष, गिराव, घटाव, ह्रास।
अश्लील – अभद्र, अधिभ्रष्ट, बेशर्म, असभ्य।
आकुल – व्यग्र, बेचैन, क्षुब्ध, बेकल।
आक्षेप – अभियोग, आरोप, दोषारोपण, इल्जाम।
आकृति – आकार, चेहरा-मोहरा, नैन-नक्श, डील-डौल।
आदर्श – प्रतिरूप, प्रतिमान, स्टैंडर्ड, मानक।
आलसी – ठलुआ, सुस्त, निकम्मा, काहिल।
आयुष्मान – चिरायु, दीर्घायु, शतायु, दीर्घजीवी।
आज्ञा – आदेश, निदेश, फरमान, हुक्म।
आश्रय – सहारा, आधार, भरोसा, अवलंब, प्रश्रय।
आख्यान – कहानी, वृत्तांत, कथा, किस्सा।
आचार्य – प्राध्यापक, प्रिंसीपल, गुरु, पंडित, प्रोफेसर।
आधुनिक – अर्वाचीन, नूतन, नव्य, वर्तमानकालीन।
आवेग – तेजी, स्फूर्ति, जोश, त्वरा, चपलता।
आलोचना – समीक्षा, टीका, टिप्पणी, नुक्ताचीनी।
आरंभ – श्रीगणेश, शुरुआत, सूत्रपात, उपक्रम।
आराम – विश्राम, विश्रांति, सुख, चैन, करार।
आवश्यक – अनिवार्य, अपरिहार्य, जरूरी, बाध्यकारी।
आदि – पहला, प्रथम, आरंभिक, आदिम।

नोट

आचरण – चालचलन, व्यवहार, बरताव, सदाचार, शिष्टाचार, चरित्र, आदत।
आपत्ति – विपदा, मुसीबत, आपदा, विपत्ति।
अरण्य – जंगल, कांतार, विपिन, वन, कानन।
आकाश – नभ, अंबर, अंतरिक्ष, आसमान, व्योम, गगन, दिव, द्यौ, पुष्कर, शून्य।
आडंबर – पाखंड, ढकोसला, ढोंग, प्रपंच, दिखावा।
आँख – अक्षि, नयन, नेत्र, लोचन, दृग, चक्षु, अक्षि।
आँगन – प्रांगण, बगर, बाखर, अजिर, अँगना, सहन।
आम – रसाल, आम्र, फलराज, पिकबंधु, सहकार, अमृतफल।
आनंद – आमोद, प्रमोद, विनोद, उल्लास, प्रसन्नता, हर्ष, सुख।
आराम – विश्राम, चैन, राहत, विश्रान्ति, शान्ति।
आशा – उम्मीद, तवक्का, आस।
आशीर्वाद – आशीष, दुआ, शुभाशीष।
आश्चर्य – अचंभा, अचरज, विस्मय, ताज्जुब।
आहार – भोजन, खुराक, खाना, भक्ष्य।
आस्था – मान, कदर, महत्त्व, आदर।
इंदिरा – लक्ष्मी, रमा, श्री, कमला।
इच्छा – लालसा, कामना, चाह, मनोरथ, ईहा, ईप्सा, आकांक्षा, अभिलाषा, मनोकामना।
इंद्र – महेंद्र, सुरेंद्र, सुरेश, पुरंदर, देवराज, मधवा, पाकरिपु, पाकशासन, पुरहूत।
इंद्राणी – शची, इंद्रवधू, महेंद्री, इंद्रा, पौलोमी।
इठलाना – इतराना, अकड़ना, ऐंठना, शान दिखाना, टशन दिखाना।
इन्कार – अस्वीकृति, निषेध, प्रत्याख्यान।
इच्छुक – अभिलाषी, लालायित, उत्कंठित, आतुर।
इशारा – संकेत, इंगित, निर्देश।
इंद्रधनुष – सुरचाप, इंद्रधनु, शक्रचाप, सप्तवर्णधनु।
ईख – गन्ना, ऊख, रसडंड, रसाल, पेंडी, रसद।
ईमानदार – सच्चा, निष्कपट, सत्यनिष्ठ, सत्यपरायण।
ईश्वर – परमात्मा, परमेश्वर, ईश, ओऽम, ब्रह्म, अलख, अनादि, अज, अगोचर, जगदीश।
ईर्ष्या – मत्सर, डाह, जलन, कुढ़न।
उचित – ठीक, सम्यक्, सही, उपयुक्त।
उत्कर्ष – उन्नति, उत्थान, अभ्युदय, उन्मेष।
उत्पत्ति – पैदाइश, उद्‌भव, जन्म।
उत्पात – दंगा, उपद्रव, फसाद, हुड़दंग, गड़बड़।
उत्सव – समारोह, आयोजन, पर्व।
उत्साह – जोश, उमंग, हौसला, उत्तेजना।
उत्सुक – आतुर, उत्कंठित, व्यग्र, उत्कर्ण, रुचि, रुझान।
उदार – सदय, उदात्त, सहृदय।
उदास – उन्मन, विमनस्क, खिन्न।
उदाहरण – मिसाल, नमूना, दृष्टांत।

नोट

उद्देश्य – प्रयोजन, ध्येय, लक्ष्य।
उद्यत – तैयार, प्रस्तुत, तत्पर।
उन्मूलन – निरसन, अंत, उत्सादन।
उपकार – (*i*) परोपकार, अच्छाई, भलाई, नेकी। (*ii*) हित, उद्धार, कल्याण।
उपस्थित – विद्यमान, हाजिर, प्रस्तुत।
उत्कृष्ट – उत्तम, श्रेष्ठ, प्रकृष्ट, प्रवर।
उत्थान – उत्कर्ष, उठान, उत्क्रमण, चढ़ाव, आरोह।
उल्लास – हर्ष, आनंद, प्रमोद, आह्लाद।
उपमा – तुलना, मिलान, सादृश्य, समानता।
उपासना – पूजा, आराधना, अर्चना, सेवा।
उदासीन – विरक्त, निर्लिप्त, अनासक्त, वीतराग।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. पर्याय का अर्थ है ....।
2. पर्यायवाची को प्रतिशब्द या .... भी कहा जाता है।
3. पर्यायवाची शब्द किसी भाषा की .... के प्रतीक हैं।
4. पर्यायवाची शब्दों से भाषा में आकर्षण और .... आ जाता है।

उद्यम – परिश्रम, पुरुषार्थ, श्रम, मेहनत।
उजाला – प्रकाश, आलोक, प्रभा, ज्योति।
उद्धार – मुक्ति, निस्तार, अपमोचन, छुटकारा।
उलझन – असमंजस, दुविधा, अनिश्चय, संभ्रम।
उपाय – युक्ति, ढंग, तरकीब, तरीका।
उपयुक्त – उचित, ठीक, वाजिब, मुनासिब, वांछनीय।
उपेक्षा – उदासीनता, विरक्ति, अनासक्ति, विराग।
उलटा – प्रतिकूल, विलोम, विपरीत, विरुद्ध।
उजाड़ – निर्जन, वीरान, सुनसान, बियावान।
उग्र – तेज, प्रबल, प्रचंड।
ऊसर – अनुर्वर, सस्यहीन, अनुपजाऊ।
ऊष्मा – उष्णता, तपन, ताप, गर्मी।
उपहार – भेंट, सौगात, तोहफा।
उपालंभ – उलाहना, शिकवा, शिकायत।
उल्लंघन – तिरस्कार, उपेक्षा, अवज्ञा।
उल्लू – उलूक, लक्ष्मीवाहन, कौशिक।
ऊँचा – उच्च, शीर्षस्थ, उन्नत, उतुंग।
ऊर्जा – ओज, स्फूर्ति, शक्ति।
ऋषि – मुनि, मनीषी, महात्मा, साधु, संत।

नोट

एकता	–	एका, सहमति, एकत्व।
एहसान	–	आभार, कृतज्ञता, अनुग्रह।
ऐश	–	विलास, ऐय्याशी, सुख-चैन।
ऐश्वर्य	–	वैभव, संपन्नता, समृद्धि।
ऐच्छिक	–	स्वेच्छाकृत, वैकल्पिक, अख्तियारी।
ओज	–	दम, जोर, पराक्रम, बल।
ओझल	–	अंतर्धान, तिरोहित, अदृश्य।
और	–	(*i*) अन्य, दूसरा, इतर, भिन्न। (*ii*) अधिक, ज्यादा। (*iii*) एवं, तथा।
औषध	–	दवा, दवाई, भेषज, औषधि।
कजूंस	–	सूम, अनुदार, कृपण, मक्खीचूस।
कपड़ा	–	चीर, वस्त्र, वसन, अंबर, पट, चैल, दुकूल।
कपाट	–	पट, किवाड़, द्वार, दरवाजा।
कमल	–	सरोज, सरोरुह, जलज, पंकज, नीरज, वारिज, अंबुज, अंबोज, अब्ज, सतदल, अरविंद, कुवलय, अंभोरूह।
कर्ण	–	अंकराज, सूर्यसुत, अर्कनंदन, राधेय, सूतपुत्र, रविसुत, आदित्यनंदन।
कली	–	मुकुल, जालक, ताम्रपल्लव, कलिका, कुडमल, कोरक, नवपल्लव, अँखुवा, कोपल।
कल्पवृक्ष	–	कल्पतरु, कल्पशाल, कल्पद्रुम, कल्पपादप।
कन्या	–	कुमारिका, बालिका, किशोरी, बाला।
कठिन	–	दुर्बोध, जटिल, दुरूह।
कंगाल	–	निर्धन, गरीब, अकिंचन, दरिद्र।
कंचन	–	सोना, स्वर्ण, सुवर्ण।
कृतार्थ	–	उपकृत, आभारी, धन्य।
कमजोर	–	दुर्बल, निर्बल, अशक्त, क्षीण।
कामना	–	अभिलाषा, आकांक्षा, मनोरथ, चाह।
कुटिल	–	छली, कपटी, धोखेबाज, चालबाज।
कृपा	–	अनुकंपा, अनुग्रह, दया, मेहरबानी।
कामुकता	–	व्यभिचारिता, भोगासक्ति, विषयासक्ति, इंद्रियलोलुपता।
काक	–	काग, काण, वायस, पिशुन, करठ, कौआ।
कुत्ता	–	कुकुर, श्वान, शुनक।
कबूतर	–	कपोत, रक्तलोचन, हारीत, पारावत।
कृत्रिम	–	अवास्तविक, नकली, झूठा, दिखावटी।
कल्याण	–	मंगल, योगक्षेम, शुभ, हित, भलाई।
कठोर	–	कड़ा, कर्कश, परुष, निष्ठुर।
कलह	–	विवाद, झगड़ा, बखेड़ा।
कूल	–	किनारा, तट, तीर।
कृषक	–	किसान, काश्तकार, हलधर, जोतकार, खेतिहर।
क्लिष्ट	–	दुरूह, संकुल, कठिन।
कायर	–	बुजदिल, भीरु, डरपोक, कातर।

नोट

कौशल	–	कला, हुनर, फन।
कर्म	–	कार्य, कृत्य, क्रिया, काम, काज।
कलिका	–	कली, मुकुल, पंखुड़ी, कोरक।
कामी	–	विषयी, कामासक्त, कामुक।
कड़वा	–	कटु, तीखा, तीक्ष्ण, तेज।
कस्तूरी	–	मृगमद, मृगनाभि, मदलता।
कंदरा	–	गुहा, गुफा, खोह, दरी
कथन	–	विचार, वक्तव्य, मत, बयान।
कटाक्ष	–	आक्षेप, व्यंग्य, ताना, छींटाकशी।
कुरूप	–	भद्दा, बेडौल, बदसूरत, असुंदर।
कलंक	–	दोष, दाग, धब्बा, लांछन।
केवट	–	माँझी, नाविक, मल्लाह, धीवर।
कोमल	–	मृदुल, सुकुमार, नाजुक, नर्म।
किरण	–	रश्मि, केतु, अंशु, कर।
कुशल	–	दक्ष, प्रवीण, निपुण, चतुर।
कसक	–	पीड़ा, दर्द, टीस, दुःख।
कोयल	–	कोकिल, श्यामा, पिक, मदनशलाका।
काल्पनिक	–	मनगढ़ंत, कल्पित।
कायरता	–	भीरुता, अपौरुष, पामरता, साहसहीनता।
कंटक	–	काँटा, शूल, खार।
क्षेत्र	–	प्रदेश, इलाका, भूभाग, भूखंड।
क्षणभंगुर	–	अस्थिर, अनित्य, नश्वर, क्षणिक।
क्षय	–	तपेदिक, यक्ष्मा, राजरोग।
क्षुब्ध	–	व्याकुल, विकल, उद्विग्न।
क्षमता	–	शक्ति, सामर्थ्य, बल, ताकत।
क्षीण	–	दुर्बल, कमजोर, बलहीन, कृश।
कामदेव	–	मनोज, कंदर्प, आत्मभू, अनंग, अतनु, काम, मकरकेतु, पुष्पचाप, स्मर, मन्मथ।
कार्तिकेय	–	कुमार, पार्वतीनंदन, शरभव, स्कंध, षडानन, गुह, मयूरवाहन, शिवसुत, षड्वदन।
किरण	–	रश्मि, मरीचि, अंश, कर, मयूख, पुंज।
किला	–	दुर्ग, कोट, गढ़, शिविर।
किंचित्	–	(*i*) कतिपय, कुछ एक, कई एक (*ii*) कुछ, अल्प, जरा।
किंतु	–	लेकिन, परंतु, मगर, क्योंकि, पर।
किताब	–	पुस्तक, ग्रंथ, पोथी।
किनारा	–	(*i*) तट, मुहाना, तीर, पुलिन, कूल। (*ii*) अंचल, छोर, सिरा, पर्यंत।
कीमत	–	मूल्य, दाम, लागत।
कुबेर	–	राजराज, किन्नरेश, धनाधिप, धनेश, यक्षराज, धनद।
कुमुदनी	–	नलिनी, कैरव, कुमुद, इंदुकमल, चंद्रप्रिया।

नोट

कृष्ण – नंदनंदन, मधुसूदन, जनार्दन, माधव, मुरारि, कन्हैया, द्वारकाधीश, गोपाल, केशव, नंदकुमार, नंदकिशोर, बिहारी।

कृतज्ञ – आभारी, उपकृत, अनुगृहीत, ऋणी, कृतार्थ।

केला – रंभा, कदली, वारण, अशुमत्फला, काष्ठीला।

क्रोध – गुस्सा, अमर्ष, रोष, कोप, आक्रोश, गर्मी, ताव।

करुणा – दया, तरस, रहम।

कहानी – दास्तान, गाथा, कथा, किस्सा, आख्यायिका।

कायर – डरपोक, बुजदिल, भीरु।

खग – पक्षी, चिड़िया, पखेरू, द्विज, पंछी, विहंग, शकुनि।

खंजन – नीलकंठ, सारंग, कलकंठ।

खबर – जानकारी, सूचना, समाचार, संदेश।

खल – शठ, दुष्ट, धूर्त, दुर्जन, कुटिल, नालायक, अधम।

खुला – स्पष्ट, प्रत्यक्ष, जाहिर।

खुशी – उल्लास, आनंद, हर्ष, प्रसन्नता।

खूबसूरत – सुंदर, मनोज्ञ, रूपवान।

खोज – अन्वेषण, आविष्कार, शोध, अनुसंधान।

खून – रुधिर, लहू, रक्त, शोणित।

खिड़की – झरोखा, गवाक्ष, वातायन, अंतद्वार।

खंभा – खंभ, स्तूप, स्तंभ।

खतरा – अंदेशा, भय, डर, आशंका।

खत – चिट्ठी, पत्र, पाती।

खरा – शुद्ध, निर्मल, स्वच्छ, साफ।

खामोश – नीरव, शांत, चुप, मौन।

खोटा – झूठा, नकली, कृत्रिम।

खराबी – दोष, बुराई, अवगुण, विकार।

खीझ – झुँझलाहट, झल्लाहट, खीझना, चिढ़ना।

गरुड़ – खगेश्वर, सुपर्ण, वैतनेय, नागांतक।

गर्व – घमंड, दर्प, अकड़, दंभ, अभिमान।

गौरव – मान, सम्मान, महत्त्व, बड़प्पन।

गुरु – शिक्षक, आचार्य, अध्यापक।

गहन – अभेद, दुर्गम, अच्छेद।

गंभीर – गहरा, अथाह, अतल।

गरीब – निर्धन, अकिंचन, दीन, कंगाल।

गीदड़ – श्रृगाल, सियार, जंबुक।

गुप्त – निभृत, अप्रकट, गूढ़, अज्ञात।

गति – चाल, रफ्तार।

गति – हाल, दशा, अवस्था, स्थिति।

गुस्सा – क्रोध, रोष, क्षोभ, कोप।

नोट

गंगा	–	भागीरथी, देवसरिता, मंदाकिनी, विष्णुपदी, त्रिपथगा, देवापगा, सुरसरि, पापछालिका।
गणेश	–	लंबोदर, मूषकवाहन, भवानीनंदन, विनायक, गजानन, मोदकप्रिय, जगवंद्य, हेरंब।
गज	–	हस्ती, सिंधुर, मातंग, कुंभी, नाग, हाथी, वितुंड, कुंजर, करी, द्विप।
गधा	–	गदहा, खर, धूसर, गर्दभ, चक्रीवाहन, रासभ, लंबकर्ण, बैशाखनंदन।
गाय	–	धेनु, सूरभि, माता, कल्याणी, पयस्विनी, गौ।
गलना	–	द्रवीभूत होना, द्रवित होना, पिघलना, नष्ट होना।
गहन	–	अगाह, अथाह, अगाध, गहरा।
गुलाब	–	सुमना, शतपत्र, स्थलकमल, पाटल, वृंतपुष्प।
गुंडा	–	लोफर, शरारती, नंगा, बदमाश, लफंगा, उद्दंड।
गुनाह	–	गलती, अधर्म, पाप, अपराध, खता, त्रुटि, कुकर्म।
गोदाम	–	मालखाना, भंडार, कोठा, गोडाउन।
घट	–	कलश, घड़ा, कुंभ, गागर, निप, गगरी, कुट।
घर	–	महल, सदन, निकेतन, भवन, गृह, गेह, ओक, हवेली, सदन, लाज, निवास, कुटी, मकान, आवास, आलय।
घूस	–	चाँदी का जूता, उत्कोच, रिश्वत।
घी	–	घृत, हवि, अमृत।
घाटा	–	हानि, नकुसान, टोटा।
घन	–	जलधर, वारिद, अंबुधर, बादल।
घृणा	–	जुगुप्सा, अरुचि, घिन, वीभत्स।
चंदन	–	मंगल्य, मलयज, श्रीखंड।
चाँदी	–	रजत, रूपा, रौप्य, रूपक।
चपलता	–	चंचलता, अधीरता, चुलबुलापन।
चरित्र	–	आचार, सदाचार, शील, आचरण।
चेतना	–	होश, एहसास, ज्ञान, सुधबुध।
चिंता	–	फ्रिक, सोच, ऊहापोह।
चौकीदार	–	पहरेदार, प्रहरी, गारद।
चोटी	–	श्रृंग, तुंग, शिखर, परकोटि।
चिक्कन	–	चिकना, मस्रण, स्निग्ध, स्नेहिल।
चक्र	–	पहिया, चाक, चक्का।
चमक	–	कांति, आभा, द्युति, दीप्ति।
चिकित्सा	–	उपचार, इलाज, दवादारू।
चतुर	–	कुशल, नागर, प्रवीण, दक्ष, निपुण, योग्य, होशियार, चालाक, सयाना, विज्ञ।
चंद्र	–	सोम, राकेश, रजनीश, राकापति, चाँद, निशाकर, हिमांशु, मयंक, सुधांशु, मृगांक, चंद्रमा, कला-निधि, ओषधीश।
चाँदनी	–	चंद्रिका, ज्योत्स्ना, कौमुदी, कुमुदकला, जुन्हाई, अमृतवर्षिणी, चंद्रातप, चंद्रमरीचि।
चपला	–	विद्युत, बिजली, चंचला, दामिनी, तड़ित।
चश्मा	–	ऐनक, उपनेत्र, सहनेत्र, उपनयन।
चाटुकारी	–	खुशामद, चापलूसी, मिथ्या, प्रशंसा, चिरौरी, चमचागिरी।

नोट

चिह्न – प्रतीक, निशान, लक्षण, पहचान, संकेत।
चोर – रजनीचर, दस्यु, साहसिक, कभिज, खनक, मोषक, तस्कर।
छात्र – विद्यार्थी, शिक्षार्थी, शिष्य।
छाया – साया, प्रतिबिंब, परछाईं, छाँव।
छल – प्रपंच, झाँसा, फरेब, कपट।
छटा – आभा, कांति, चमक।
छानबीन – जाँच-पड़ताल, पूछताछ, जाँच, तहकीकात।
छेद – छिद्र, सूराख, रंध्र।
छली – ठग, छद्‌मी, कपटी, कैतव, धूर्त, मायावी।
छलांग – उछाल, फाँद, चौकड़ी, उछलकूद।
छाती – उर, वक्ष, वक्षस्थल, सीना।
जुगनू – प्रभाकीट, खद्योत, पटबीजना।
जननी – माँ, माता, अंबा, अम्मा।
जटिल – दुर्बोध, दुरूह, पेचीदा, क्लिष्ट।
जवान – युवा, युवक, किशोर, तरुण।
जीविका – आजीविका, वृत्ति, रोटी, रोजी।
जिद्‌दी – हठी, दुराग्रही, हठीला, दुर्दांत।
जोश – आवेश, उफान, उबाल।
जीव – प्राणी, देहधारी, जीवधारी।
जानकारी – ज्ञान, बोध, विज्ञता।
जिज्ञासा – उत्सुकता, उत्कंठा, कुतूहल।
ज्योतिषी – दैवज्ञ गणक, भविष्यवक्ता।
जंग – युद्ध, रण, समर, लड़ाई, संग्राम।
जग – दुनिया, संसार, विश्व, भुवन, मृत्युलोक।
जल – सलिल, उदक, तोय, अंबु, पानी, नीर, वारि, पय, अमृत, जीवक, रस, अप।
जहाज – जलयान, वायुयान, विमान, पोत, जलवाहन।
जानकी – जनकसुता, वैदेही, मैथिली, सीता, रामप्रिया, जनकदुलारी, जनकनंदिनी।
जुटाना – बटोरना, संग्रह करना, जुगाड़ करना, एकत्र करना, जमा करना, संचय करना।
जोश – आवेश, साहस, उत्साह, उमंग, हौसला।
झंडा – ध्वजा, केतु, पताका, निसान।
झरना – स्रोता, स्रोत, उत्स, निर्झर, जलप्रपात।
झेंप – सकुचाहट, संकोच, तकल्लुफ, खिसी, हया।
झगड़ा – कलह, टंटा, तकरार, वितंडा।
झोंपड़ी – कुटी, कुटिया, पर्णकुटी, कुंज।
झुंड – जत्था, समूह, मंडली, पुंज।
झुकाव – रुझान, प्रवृत्ति, प्रवणता, उन्मुखता।
टीका – भाष्य, वृत्ति, विवृत्ति व्याख्या।
टक्कर – भिड़ंत, संघट्ट, समाघात, ठोकर।

नोट

टोल	–	समूह, मंडली, जत्था, झुंड, चटसाल, पाठशाला।
टीस	–	साल, कसक, शूल, शूक्त, चसक, दर्द, पीड़ा।
टेढ़ा	–	(*i*) बंक, कुटिल, तिरछा, वक्र, (*ii*) कठिन, पेचीदा, मुश्किल, दुर्गम।
ठंड	–	शीत, ठिठुरन, सर्दी, जाड़ा, ठंडक।
ठेस	–	आघात, चोट, ठोकर, धक्का।
ठौर	–	ठिकाना, स्थल, जगह।
ठग	–	जालसाज़, प्रवंचक, वंचक, प्रतारक।
ठाठ	–	आडंबर, सजावट, वैभव।
डगर	–	बाट, मार्ग, राह, रास्ता, पथ, पंथ।
डर	–	त्रास, भीति, दहशत, आतंक, भय, खौफ
डेरा	–	पड़ाव, खेमा, शिविर।
डोर	–	डोरी, रज्जु, तांत, रस्सी, पगहा, तंतु।
डकैत	–	डाकू, लुटेरा, बटमार।
डाह	–	ईर्ष्या, कुढ़न, जलन।
ढीठ	–	ध्रष्ट, प्रगल्भ, अविनीत, गुस्ताख।
ढोंग	–	स्वाँग, पाखंड, कपट, छल।
ढंग	–	पद्धति, विधि, तरीका, रीति, प्रणाली, करीना।
ढेर	–	राशि, समूह, अंबार, घौद, झुंड।
तन	–	शरीर, काया, जिस्म, देह, वपु।
तपस्या	–	साधना, तप, योग, अनुष्ठान।
तरंग	–	हिलोर, लहर, ऊर्मि, मौज, वीचि।
तरकस	–	तूण, तूणीर, माथा, त्रोण, निषंग।
तरु	–	वृक्ष, पेड़, विटप, पादप, द्रुम।
तलवार	–	असि, खड्ग, सिरोही, चंद्रहास, कृपाण, शमशीर, करवाल, करौली।
तस्वीर	–	चित्र, फोटो, प्रतिबिंब, प्रतिकृति, आकृति।
तालाब	–	जलाशय, सरोवर, ताल, सर, तड़ाग, जलधर, सरसी, पद्माकर, पुष्कर।
तारीख	–	दिनांक, मिती, तिथि।
तारीफ	–	बड़ाई, प्रशंसा, सराहना, प्रशस्ति, गुणगान।
तीर	–	नारच, बाण, शिलीमुख, शर, सायक।
तुरंत	–	तत्काल, तत्क्षण, सत्वर, अविलंब, जल्दी।
तोता	–	सुवा, शुक, दाडिमप्रिय।
ताकना	–	देखना, निहारना, झाँकना, निरखना।
तत्पर	–	तैयार, कटिबद्ध, उद्यत, सन्नद्ध।
तन्मय	–	मग्न, तल्लीन, लीन, ध्यानमग्न।
तालमेल	–	समन्वय, संगति, सामंजस्य।
तोष	–	तृप्ति, संतोष, तुष्टि।
तिरस्कार	–	अपमान, निरादर, उपेक्षा, अवमानना।
तकलीफ	–	रोग, अस्वस्थता, रुग्णता।

नोट

तरकारी – शाक, सब्जी, भाजी।
तूफान – झंझावात, अंधड़, आँधी, प्रभंजन।
त्योहार – उत्सव, समारोह, पर्व।
तादात्म्य – तद्रूपता, अभिन्नता, सारूप्य, एकात्म्य।
त्रुटि – भूलचूक, गलती।
थकान – क्लांति, श्रांति, थकावट, थकन।
थोड़ा – कम, जरा, अल्प, स्वल्प, न्यून।
थाह – अंत, छोर, सिरा, सीना।
दर्पण – शीशा, आईना, मुकुर, आरसी।
दया – तरस, करुणा, रहम, अनुकंपा।
दास – चाकर, नौकर, सेवक, परिचारक, परिचर, किंकर, अनुचर।
दुःख – क्लेश, खेद, पीड़ा, यातना, विषाद, यंत्रणा, क्षोभ, कष्ट।
दूध – पय, दुग्ध, स्तन्य, क्षीर, अमृत।
देवता – सुर, आदित्य, अमर, देव, वसु।
दोस्त – सखा, मित्र, स्नेही, अंतरंग, हितैषी, सहचर।
द्रोपदी – श्यामा, पांचाली, कृष्णा, सैरंध्री, याज्ञसेनी, द्रुपदसुता, नित्ययौवना।
दौलत – संपत्ति, संपदा, धन, द्रव्य, विभूति, वित्त।
दासी – बाँदी सेविका, किंकरी, परिचारिका।
दैत्य – असुर, सुरारि, दनुज, रजनीचर।
दीपक – दीप, प्रदीप, दीया।
द्रव्य – संपत्ति, दौलत, विभूति, संपदा, धन।
दुर्गा – सिंहवाहिनी, कालिका, अजा, भवानी, चंडिका, कल्याणी, सुभद्रा, चामुंडा।
दुष्ट – नीच, खल, दुर्जन, पिशुन।
दमन – अवरोध, निग्रह, रोक, नियंत्रण, वश।
दीर्घ – लंबा, विशाल, बड़ा।
दिव्य – अलौकिक, स्वर्गिक, लोकातीत, लोकोत्तर।
दुर्लभ – अलंभ, नायाब, विरल, दुष्प्राप्य।
दिलेर – साहसी, शूर, वीर, बहादुर।
दशा – अवस्था, स्थिति, हालत।
दर्शन – भेंट, साक्षात्कार, मुलाकात।
दंगा – उपद्रव, फसाद, उत्पात, ऊधम।
द्वेष – बैर, शत्रुता, दुश्मनी, खार।
दूत – एलची, राजदूत।
दरवाजा – किवाड़, पल्ला, कपाट, द्वार।
दाई – धाया, धात्री, अम्मा।
देवालय – देवमंदिर, देवस्थान, मंदिर।
दृढ़ – पुष्ट, मजबूत, पक्का, तगड़ा।
दुर्गम – अगम्य, विकट, कठिन, दुस्तर।

नोट

धनुष	–	चाप, धनु, शरासन, पिनाक, कोदंड, कमान, विशिखासन।
धीरज	–	धीरता, धीरत्व, धैर्य, धारण, धृति।
धरती	–	धरा, धरणी, पृथ्वी, क्षिति, वसुधा, अवनी, मेदिनी।
धूप	–	आतप, धोत।
धनी	–	धनवान, धनाढ्य, दौलतमंद, मालदार।
धन्यवाद	–	कृतज्ञता, शुक्रिया, आभार, मेहरबानी।
धवल	–	श्वेत, सफेद, उजला।
धुंध	–	कुहरा, नीहार, कुहासा।
ध्वस्त	–	नष्ट, भ्रष्ट, भग्न, खंडित।
धूल	–	रज, खेह, मिट्टी, गर्द, धूलि।
ध्रुव	–	दृढ़, अटल, स्थिर, निश्चित।
ध्यान	–	एकाग्रता, मनोयोग, तल्लीनता, तन्मयता।
धाम	–	गृह, निकेतन, सदन, घर।
धंधा	–	रोजगार, व्यापार, कारोबार, व्यवसाय।
धनुर्धर	–	धन्वी, तीरंदाज, धनुषधारी, निषंगी।
धाक	–	रोब, दबदबा, धौंस।
नदी	–	सरिता, दरिया, अपगा, तटिनी, सलिला, स्रोतस्विनी, कल्लोनी, प्रवाहिणी।
नमक	–	लवण, लोन, रामरस, नोन।
नया	–	नवीन, नव्य, नूतन, आधुनिक, अभिनव, अर्वाचीन, नव, ताजा।
नायक	–	अभिनेता, सितारा, पात्र, कलाकार, अगुवा, प्रमुख पात्र।
नाश	–	(*i*) समाप्ति, अवसान, (*ii*) विनाश, संहार, ध्वंस, नष्ट-भ्रष्ट।
नित्य	–	हमेशा, रोज, सनातन, सर्वदा, सदा, सदैव, चिरंतन, शाश्वत।
नियम	–	विधि, तरीका, विधान, ढंग, कानून, रीति।
नीलकमल	–	इंदीवर, नीलांबुज, नीलसरोज, उत्पल, असितकमल, कुवलय, सौगंधित।
नौका	–	तरिणी, डोंगी, नाव, जलयान, नैया, तरी।
नारी	–	स्त्री, महिला, रमणी, वनिता, वामा, औरत।
निंदा	–	अपयश, बदनामी, बुराई, बदगोई।
निमित	–	हेतु, उद्देश्य, ध्येय, प्रयोजन।
नरेश	–	नरेंद्र, राजा, नरपति, भूपति, भूपाल।
निकम्मा	–	निठल्ला, अकर्मण्य, निखट्टू, बेकार।
निर्भय	–	निडर, दिलेर, नि:शंक, बेधड़क।
निष्पक्ष	–	उदासीन, अलग, निरपेक्ष, तटस्थ।
नियति	–	भाग्य, प्रारब्ध, होनी।
निकट	–	समीप, करीब, आसन्न।
नवल	–	अद्भुत, विचित्र, विलक्षण, अनोखा।
नक्षत्र	–	तारा, सितारा, खद्योत, तारक।
नवीन	–	नव, नूतन, अभिनव, नवेला।
नाग	–	सर्प, विषधर, भुजंग, व्याल, फणी।

नोट

नग – भूधर, पहाड़, पर्वत, शैल, गिरि।

नरक – यमपुर, यमलोक, जहन्नुम, दोज़ख।

नम्र – शिष्ट, सुशील, विनीत, विनयशील।

निधि – कोष, खजाना, भंडार।

नग्न – नंगा, दिगंबर, निर्वस्त्र, अनावृत।

निधान – आश्रम, आधार, अवलंब।

नीरस – रसहीन, फीका, सूखा, स्वादहीन।

नीरव – मौन, चुप, शांत, खामोश।

निरर्थक – बेमानी, बेकार, अर्थहीन, व्यर्थ।

निष्ठा – आस्था, श्रद्धा, विश्वास।

निर्णय – निष्कर्ष, फैसला, परिणाम।

निष्ठुर – निर्दय, निर्मम, बेदर्द, बेरहम।

नेकी – उपकार, भलाई, अच्छा, भला।

टास्क पर्यायवाची शब्दों के अभाव में भाषा में कौन-सा दोष आ जाता है?

पत्ता – पर्ण, पल्लव, पत्र, पाती, पत्ती, दल।

पत्थर – पाहन, प्रस्तर, संग, अश्म, पाषाण।

पति – स्वामी, कांत, भर्तार, बल्लभ, भर्ता, ईश।

पत्नी – दुलहिन, अर्धांगिनी, गृहिणी, त्रिया, दारा, जोरू, गृहलक्ष्मी, सहधर्मिणी, सहचरी।

पथिक – राही, बटाऊ, पंथी, मुसाफिर, बटोही।

पंडित – विद्वान, सुधी, ज्ञानी, धीर, कोविद, प्राज्ञ।

परशुराम – भृगुसुत, जामदग्न्य, भार्गव, परशुधर, भृगुनंदन, रेणुकातनय।

पर्वत – पहाड़, अचल, शैल, नग, भूधर, मेरू, महीधर, गिरि।

पवन – समीर, अनिल, मारुत, वात, पवमान, वायु, बयार।

पवित्र – पुनीत, पावन, शुद्ध, शुचि, साफ, स्वच्छ।

पान – तांबूल, पर्णलता, नागरबेल, नागबल्ली, सप्तशिला, नागिनीपत्र।

पार्वती – भवानी, अंबिका, गौरी, अभया, गिरिजा, उमा, सती, शिप्रिया।

पिता – जनक, बाप, तात, गुरु, फादर, वालिद।

पुत्र – तनय, आत्मज, सुत, लड़का, बेटा, औरस, पूत।

पुत्री – तनया, आत्मजा, सुता, लड़की, बेटी, दुहिता।

पृथ्वी – वसुधा, वसुंधरा, मेदिनी, मही, भू, भूमि, इला, उर्वी, जमीन, क्षिति, धरती, धात्री।

प्रकाश – चमक, ज्योति, द्युति, दीप्ति, तेज, आलोक।

प्रतिष्ठा – गौरव, महानता, इज्जत, सम्मान, आबरू, कीर्ति, यश।

प्रभात – सवेरा, सुबह, विहान, प्रातःकाल, भोर, उषाकाल।

प्रथा – प्रचलन, चलन, रीति, रिवाज, परंपरा, परिपाटी, रूढ़ि।

प्रबंध – इंतजाम, व्यवस्था, बंदोबस्त।

नोट

प्रलय	–	कयामत, विप्लव, कल्पांत, गजब।
प्रसिद्ध	–	मशहूर, नामी, ख्यात, नामवर, विख्यात, प्रख्यात, यशस्वी।
प्रार्थना	–	विनय, विनती, निवेदन, अनुरोध, स्तुति, अभ्यर्थना, अर्चना, अनुनय।
प्रिया	–	प्रियतमा, प्रेयसी, सजनी, दिलरुबा, प्यारी।
प्रेम	–	प्रीति, स्नेह, दुलार, लाड़-प्यार, ममता, अनुराग, प्रणय।
पैर	–	पाँव, पाद, चरण, गोड़, पग, पद, पगु, टाँग।
पूर्ण	–	निखिल, संपूर्ण, अखंड, समग्र।
प्रभा	–	छवि, दीप्ति, द्युति, आभा।
पाला	–	हिम, तुषार, नीहार, प्रालेय।
पंथ	–	राह, डगर, पथ, मार्ग।
परतंत्र	–	पराधीन, परवश, पराश्रित।
पंकिल	–	गंदला, मैला, मलिन।
परिवार	–	कुल, घराना, कुटुंब, कुनबा।
परमार्थ	–	भलाई, उपकार, परोपकार।
परछाईं	–	प्रतिच्छाया, साया, प्रतिबिंब, छाया।
परिचर	–	सेवक, नौकर, भृत्य, चाकर।
पक्षी	–	विहग, निहंग, खग, शकुंत।
पल	–	क्षण, लम्हा, दम।
पश्चाताप	–	अनुताप, पछतावा, ग्लानि, संताप।
परिष्कृत	–	परिमार्जित, प्रांजल, शुद्ध।
पताका	–	झंडा, ध्वज, निशान।
प्रचुर	–	पर्याप्त, बहुत, यथेष्ट।
पराक्रम	–	पुरुषार्थ, ताकत, शक्ति।
पट	–	कपाट, दरवाजा।
पटु	–	निपुण, प्रवीण।
परिवाद	–	निंदा, बुराई, अपयश, बदनामी।
परिताप	–	क्लेष, व्यथा, दुःख, पीड़ा।
परख	–	छानबीन, परीक्षण, जाँच, पड़ताल।
परिणाम	–	परिपाक, नतीजा, कल।
पराजित	–	पराभूत, परास्त, विजित।
पाप	–	पातक, गुनाह, अपकर्म।
पागल	–	दीवाना, विक्षिप्त, उन्मत्त।
पाखंड	–	आडंबर, ढोंग, प्रपंच, स्वांग, ढकोसला।
पादप	–	पेड़, वृक्ष, द्रुम, तरु।
पामर	–	पापी, दुष्ट, दुरात्मा, पातकी।
पाश	–	जाल, बंधन, फंदा।
पीड़ा	–	दर्द, व्यथा, वेदना, यंत्रणा।
पुकार	–	दुहाई, गुहार, फरियाद।

नोट

पुरातन – प्राचीन, पूर्वकालीन, पुराना।
पुष्ट – बलिष्ठ, हृष्टपुष्ट, तगड़ा।
पूजा – आराधना, अर्चना, उपासना।
प्रथु – विस्तृत, चौड़ा, विस्तीर्ण।
प्रकांड – अतिशय, विपुल, अधिक, भारी।
प्रगल्भ – अहंकारी, दंभी, गर्वीला, अभिमानी।
प्रज्ञा – बुद्धि, ज्ञान, मेधा, प्रतिभा।
प्रचंड – भीषण, उग्र, भयंकर।
प्रणय – स्नेह, अनुराग, प्रीति, अनुरक्ति।
प्रथित – विख्यात, प्रसिद्ध, प्रख्यात, नामवर।
प्रताप – प्रभाव, धाक, बोलबाला, इकबाल।
प्रतिहार – दरबान, चोबदार, द्वारपाल, द्वाररक्षक।
प्रतिहिंसा – प्रतिशोध, बदला, प्रतिकार।
प्रतिज्ञा – प्रण, वचन, वायदा।
प्रशस्त – निर्विघ्न, निष्कंटक, निर्दोष।
प्रारब्ध – भाग्य, तकदीर, किस्मत, नसीब।
प्रस्तावना – प्राक्कथन, भूमिका, पुरोवचन, आमुख।
प्रेक्षागार – नाट्यशाला, रंगशाला, अभिनयशाला, प्रेक्षागृह।
प्रौढ़ – अधेड़, प्रबुद्ध।
फसाद – उत्पाद, दंगा, बलवा।
फुनगी – कोंपल, मंजरी, अंकुर, किसलय।
फणी – सर्प, साँप, फणधर, नाग।
फौरन – तत्काल, तत्क्षण, तुरंत।
फूल – सुमन, कुसुम, गुल, प्रसून, पुष्प, पुहुप।
फौज – सेना, लश्कर, पल्टन, वाहिनी, सैन्य।
बलराम – हलधर, बलवीर, रेवतीरमण, बलभद्र, हली, श्यामबंधु।
बाग – उपवन, वाटिका, उद्यान, निकुंज, फुलवाड़ी।
बंदर – कपि, वानर, मर्कट, शाखामृग, कीश।
बट्टा – घाटा, हानि, टोटा, नुकसान।
बलिदान – कुर्बानी, आत्मोत्सर्ग, जीवनदान।
बर्बर – असभ्य, जंगली, अशिष्ट, उद्धत।
बहेलिया – अहेरी, शिकारी, व्याघ्र, लुब्धक।
बंजर – ऊसर, परती, अनुपजाऊ, अनुर्वर।
बराबरी – समान, सदृश, तुल्य।
बड़प्पन – बड़ाई, महत्त्व, महत्ता, गरिमा।
बिगाड़ – विकार, दोष, खराबी।
बगावत – विप्लव, विद्रोह, गदर।
बहादुर – वीर, सूरमा, शूर, जवाँमर्द।

नोट

बिछोह	–	वियोग, जुदाई, बिछोड़ा।
बियाबान	–	निर्जन, सुनसान, वीरान, उजाड़।
बेजोड़	–	अनुपम, अद्वितीय, अतुल।
ब्रह्मा	–	सृष्टिकर्ता, विधाता, चतुरानन।
ब्रह्मा	–	विधि, चतुरानन, कमलासन, विधाता, विरंचि, पितामह, अज, प्रजापति, स्वयंभू।
बादल	–	मेघ, पयोधर, नीरद, वारिद, अंबुद, बलाहक, जलधर, घन, जीमूत।
बाल	–	केश, अलक, कुंतल, रोम, शिरोरूह, चिकुर।
बिजली	–	तड़ित, दामिनी, विद्युत, सौदामिनी, चंचला, बीजुरी।
भांग	–	विजया, भंग, शिवा, चपला, जया।
भाई	–	भ्राता, बंधु, सहोदर।
भय	–	डर, त्रास, भीति, खौफ।
भगवान	–	परमेश्वर, परमात्मा, सर्वेश्वर, प्रभु, ईश्वर।
भगिनी	–	दीदी, जीजी, बहिन।
भंग	–	नाश, ध्वंस, क्षय, विनाश।
भांड	–	मसखरा, जोकर, भांड।
भारती	–	सरस्वती, ब्राह्मी, विद्यादेवी, शारदा, वीणावादिनी।
भाव	–	आशय, अभिप्राय, तात्पर्य, अर्थ।
भाल	–	ललाट, मस्तक, माथा, कपाल।
भरोसा	–	सहारा, अवलंब, आश्रय, प्रश्रय।
भास्कर	–	चमकीला, आभामय, दीप्तिमान, प्रकाशवान।
भुगतान	–	भरपाई, अदायगी, बेबाकी।
भोला	–	सीधा, सरल, निष्कपट, निश्छल।
भोजन	–	आहार, खाद्य, सामग्री, खाना।
भुवन	–	जगत, संसार, विश्व, दुनिया।
भूखा	–	बुभुक्षित, क्षुधातुर, क्षुधालु, क्षुधार्त।
भँवरा	–	भ्रमर, भृंग, मधुकर, मधुप, अलि, द्विरेफ।
भाई	–	अग्रज, अनुज, सहोदर, तात, भइया, बंधु।
मछली	–	मीन, मत्स्य, सफरी, झष, जलजीवन।
मजाक	–	दिल्लगी, उपहास, हँसी, मखौल, मसखरी, व्यंग्य, छींटाकशी।
मदिरा	–	शराब, हाला, आसव, मद्य, मधु, सुरा।
महादेव	–	शंकर, शंभु, शिव, पशुपति, चंद्रशेखर, महेश्वर, भूतेश, आशुतोष, गिरीश।
मंगल	–	महीसुत, भौम, लोहितांग।
मक्खन	–	नवनीत, दधिसार, माखन, लौनी।
मट्ठा	–	माठा, छाछ, गोरस।
मंडन	–	अलंकरण, शृंगार, रूपसज्जा।
मंगनी	–	वाग्दान, फलदान, सगाई।
मत	–	धारणा, सम्मति, मंतव्य।
मनीषी	–	पंडित, विचारक, ज्ञानी, विद्वान।

नोट

मतभेद	–	असहमति, मातद्वैध, असम्मति।
मुँह	–	मुख, आनन, बदन।
मित्र	–	सखा, दोस्त, सहचर, सुहृदय।
मैना	–	सारिका, चित्रलोचना, कलहप्रिया।
मनोहर	–	मनहर, मनोरम, लुभावना, चित्ताकर्षक।
मंथन	–	बिलोना, विलोड़न, आलोड़न।
महक	–	परिमल, वास, सुवास, खुशबू।
महत्ता	–	बड़ाई, गरिमा, महात्म्य, गौरव।
महल	–	राजभवन, राजप्रासाद, राजमहल, प्रासाद।
मृत्यु	–	देहावसान, देहांत, पंचतत्व, निधन।
महात्मा	–	महापुरुष, महामना, महानुभाव, महाशय।
माँझी	–	मल्लाह, नाविक, केवट।
मार्मिक	–	मर्मांतक, मर्मस्पर्शी, हृदयस्पर्शी, मर्मभेदी।
माया	–	छल, छलना, प्रपंच, प्रतारणा।
माधुरी	–	माधुर्य, मिठास, मधुरता।
मानव	–	मनुज, मनुष्य, मानुष, इनसान।
मानक	–	प्रतिमान, आदर्श, मानदंड।
मुलायम	–	मृदु, कोमल, स्निग्ध।
मुक्ति	–	निर्वाण, मोक्ष, परमपद, अमृतत्व।
मोती	–	सीपिज, मौक्तिक, मुक्ता, शशिप्रभा।
मेढक	–	दादुर, दर्दुर, चातक, मंडूक, वर्षाप्रिय, भेक।
मोर	–	मयूर, नीलकंठ, शिखी, केकी, कलापी।
मोक्ष	–	मुक्ति, निर्वाण, कैवल्य, परमधाम, परमपद, अपवर्ग, सद्‌गति।
यम	–	सूर्यपुत्र, धर्मराज, श्राद्धदेव, कीनाश, शमन, दंडधर, यमुनाभ्राता।
यत्न	–	प्रयत्न, चेष्टा, उद्यम।
यश	–	कीर्ति, ख्याति, प्रसिद्धि।
यामिनी	–	निशा, रजनी, राका, विभावरी।
युवती	–	तरुणी, प्रमदा, रमणी।
योग्य	–	कुशल, सक्षम, कार्यक्षम, काबिल।
यात्रा	–	भ्रमण, देशाटन, पर्यटन, सफर, घूमना।
याद	–	सुधि, स्मृति, ख्याल, स्मरण।
रक्त	–	खून, लहू, रुधिर, शोणित, लोहित, रोहित।
रत	–	निमग्न, लिप्त, अनुरक्त, तल्लीन।
राधा	–	ब्रजरानी, हरिप्रिया, राधिका, वृषभानुजा।
रानी	–	राज्ञी, महिषी, राजपत्नी।
रावण	–	लोकेश, दशानन, दशकंठ।
राज्यपाल	–	प्रांतपति, सुबेदार, गवर्नर।

राय	–	मत, सलाह, सम्मति, मंत्रणा, परामर्श।
रोचक	–	मनोहर, लुभावना, दिलचस्प।
रूढ़ि	–	प्रथा, दस्तूर, रस्म।
रक्षा	–	बचाव, संरक्षण, हिफाजत, देखरेख।
रमा	–	कमला, इंदिरा, लक्ष्मी, हरिप्रिया, समुद्रजा, चंचला, क्षीरोदतनया, पद्मा, श्री, भार्गवी।
राजा	–	नरेंद्र, नरेश, नृप, भूपाल, राव, भूप।
रामचंद्र	–	रघुवर, रघुनाथ, सीतापति, कौशल्यानंदन, अमिताभ, राघव, रघुराज, अवधेश।
रात	–	रैन, रजनी, निशा, विभावरी, यामिनी, तमी, तमस्विनी, शर्वरी, क्षपा, रात्रि।
रिपु	–	बैरी, दुश्मन, विपक्षी, विरोधी, प्रतिवादी, अमित्र, शत्रु।
रोना	–	विलाप, रोदन, रुदन, क्रंदन, विलपन।
लक्ष्मण	–	अनंत, लखन, सौमित्र।
लग्न	–	संयुक्त, संलग्न, संबद्ध, संयुक्त।
लज्जा	–	शर्म, हया, लाज, व्रीड़ा।
लहर	–	लहरी, हिलोर, तरंग, उर्मि।
लालसा	–	तृष्णा, अभिलाषा, लिप्सा, लालच।
लुटेरा	–	डकैत, डाकू, बटमार, अपहर्ता।
लोलुप	–	लालची, लोभी, तृष्णालु।
लगातार	–	सतत्, निरंतर, अजस्र, अनवरत।
लड़ाई	–	झगड़ा, खटपट, अनबन, मनमुटाव, युद्ध, रण, संग्राम, जंग।
लता	–	बेल, बल्लरी, लतिका, प्रतान, वीरुध, बल्ली, बेली।
वर्षा	–	बरसात, मेह, बारिश, पावस, चौमासा।
वक्ष	–	सीना, छाती, वक्षस्थल, उदरस्थल।
वन	–	अरण्य, अटवी, कानन, विपिन।
वस्त्र	–	परिधान, पट, चीर, वसन, अंबर।
वपु	–	देह, काया, तन, बदन।
वर्ग	–	श्रेणी, कोटि, समुदाय, संप्रदाय, समूह।
वर्ष	–	साल, बरस, वत्सर।
विकार	–	विकृति, दोष, बुराई, बिगाड़।
विपन्न	–	व्यथित, आर्त, पीड़ित, विपत्तिग्रस्त।
विष	–	गरल, माहुर, हलाहल, कालकूट।
विफल	–	व्यर्थ, बेकार, निरर्थक, निष्फल।
विभव	–	संपत्ति, धन, अर्थ, ऐश्वर्य।
विरुद	–	प्रशस्ति, कीर्ति, यशोगान, गुणगान।
विलक्षण	–	विचित्र, निराला, अद्भुत, अनूठा।
विस्मय	–	अचरज, आश्चर्य, हैरानी।
विविध	–	नाना, प्रकीर्ण, विभिन्न।
विभोर	–	मस्त, मुग्ध, मग्न, लीन।

नोट

विरक्ति	–	अनासक्ति, विराग, निर्लिप्तता।
विप्र	–	भूदेव, ब्राह्मण, महीसुर, पुरोहित।
विभा	–	प्रभा, आभा, कांति, शोभा।
विशारद	–	पंडित, ज्ञानी, विशेषज्ञ, सुधी।
विलास	–	आनंद, भोग, संतुष्टि, वासना।
व्यसन	–	लत, वान, टेक, आसक्ति।
वृक्ष	–	द्रुम, पादप, तरु, विटप।
वेश्या	–	गणिका, वारांगना, पतुरिया, रंडी।
विवेचन	–	व्याख्या, वर्णन, टीका।
वसंत	–	मधुमास, ऋतुराज, माधव, कुसुमाकर, कामसखा, मधुऋतु।
विद्या	–	ज्ञान, शिक्षा, गुण, इल्म, सरस्वती।
विधि	–	शैली, तरीका, पवित्र, रीति, पद्धति, प्रणाली, चाल।
विमल	–	स्वच्छ, निर्मल, पवित्र, पावन, विशुद्ध।
विमान	–	वायुयान, खग, उड़नखटोला, हवाईजहाज।
विष्णु	–	नारायण, केशव, गोविंद, माधव, जनार्दन, विशंभर, मुकुंद, लक्ष्मीपति, कमलापति।
शपथ	–	कसम, प्रतिज्ञा, सौगंध, हलफ, सौं।
शहद	–	मधु, मकरंद, पुष्परस, पुष्पासव।
शब्द	–	ध्वनि, नाद, आश्व, घोष, रव, मुखर।
शराब	–	हाला, अम्रता, मद्य, अमृता, वीरा, मदिरा।
शरीर	–	कलेवर, देह, गात, वपु, तन, भूतात्मा।
शरण	–	संश्रय, आश्रय, त्राण, रक्षा।
शिष्ट	–	शालीन, भद्र, संभ्रांत, सौम्य।
शेर	–	नाहर, केहरि, वनराज, केशरी, मृगेंद्र।
शस्य	–	फसल, पैदावार, उपज।
शिरा	–	नाड़ी, धमनी, नस।
शुभ	–	मंगल, कल्याणकारी, शुभकर।
शायद	–	कदाचित, संभवतः, स्यात्।
शिक्षा	–	नसीहत, सीख, तालीम, प्रशिक्षण, उपदेश, शिक्षण ज्ञान।
शिविका	–	पालकी, डाँडी, डोली।
श्वेत	–	सफेद, सित, धवल।
सब	–	अखिल, संपूर्ण, सकल, सर्व, समस्त, समग्र, निखिल।
संकल्प	–	वृत, दृढ़निश्चय, प्रतिज्ञा, प्रण।
संतृप्त	–	व्यथित, क्लेशित, वेदनाग्रस्त।
संग्रह	–	संकलन, संचय, जमाव।
संन्यासी	–	बैरागी, दंडी, विरत, परिव्राजक।
सजग	–	सतर्क, चौकस, चौकन्ना, सावधान।
संहार	–	अंत, नाश, समाप्ति, ध्वंस।

नोट

सतीत्व	–	पातिव्रत्य, सतीधर्मिता, सतीपन।
सन्नद्ध	–	तापर, कटिबद्ध, तैयार, प्रस्तुत।
सभ्यता	–	शिष्टाचार, शिष्टता, भद्रता, शीलवत्ता।
समसामयिक	–	समकालिक, समकालीन, समवयस्क।
सदन	–	गृह, घर, निकेतन, आवास।
समीक्षा	–	विवेचना, मीमांसा, आलोचना, निरूपण।
समुद्र	–	नदीश, वारीश, रत्नाकर, उदधि, पारावार।
सखी	–	सहेली, सहचरी, सैरंध्री, सजनी।
सज्जन	–	भद्र, साधु, पुंगव, सभ्य, कुलीन।
स्तन	–	पयोधर, छाती, कुच, उरस, उरोज।
सुरभि	–	इष्टगंध, सुगंधि, खुशबूदार।
सुंदरी	–	ललिता, सुनेत्रा, सुनयना, विलासिनी, कामिनी।
सुबोध	–	सुगम, सुस्पष्ट, सरल, बोधगम्य।
सूची	–	तालिका, फेहरिस्त, सारिणी, सरणी।
स्वर्ण	–	सुवर्ण, सोना, कनक, हिरण्य, हेम।
स्वर्ग	–	सुरलोक, द्युलोक, बैकुंठ, परलोक, दिव।
स्वामिकार्तिकेय	–	शिखिवाहन, महासेन, पार्वतीनंदन, कार्तिकेय, महासेन।
स्वच्छंद	–	निरंकुश, स्वतंत्र, निर्बंध।
स्वावलंबन	–	आत्माश्रय, आत्मनिर्भरता, स्वाश्रय।
स्नेह	–	प्रेम, प्रीति, अनुराग, प्यार, मोहब्बत, इश्क।
समुद्र	–	सागर, रत्नाकर, पयोधि, नदीश, सिंधु, जलधि, पारावार, वारीश, अर्णव, अब्धि।
सरस्वती	–	भारती, शारदा, वीणापाणि, गिरा, वाणी, महाश्वेता, श्री, भाष्, वाक्, हंसवाहिनी, ज्ञानदायिनी।
सूर्य	–	दिनकर, दिवाकर, भास्कर, रवि, नारायण, सविता, कमलबंधु, आदित्य, प्रभाकर, मार्तंड।
संपर्क	–	मिलन, भेंट, मिलाप, संयोग, मुलाकात।
संपूर्ण	–	पूर्ण, समग्र, सारा, पूरा।
सद्भाव	–	समन्वय, मेल-मिलाप, मेलजोल।
सर्प	–	भुजंग, अहि, विषधर, व्याल, फणी, उरग, साँप, नाग, अहि।
सुरपुर	–	सुलोक, स्वर्गलोक, हरिधाम, अमरपुर, देवराज्य, स्वर्ग।
सेठ	–	महाजन, सूदखोर, साहूकार, ब्याजजीवी, पूँजीपति, मालदार, धनवान, धनी, ताल्लुकदार।
हंस	–	मुक्तमुक, मराल, सरस्वतीवाहन।
हँसी	–	स्मिति, मुस्कान, हास्य।
दृढ़	–	जिद, अड़, टेक, दुराग्रह।
हित	–	कल्याण, भलाई, भला, उपकार।
हरिण	–	मृग, हिरन, कुरंग, सारंग।
हक	–	अधिकार, स्वत्व, स्वामित्व।
हिमालय	–	हिमगिरि, हिमाद्रि, गिरिराज, शैलेंद्र।

नोट

हनुमान – पवनसुत, महावीर, आंजनेय, कपीश, बज्रांगी, मारुतिनंदन।
हाथ – कर, हस्त, पाणि, भुजा, बाहु, भुजाग्र।
हाथी – गज, कुंजर, वितुंड, मतंग, नाग, द्विरद।
हार – (*i*) पराजय, पराभाव, शिकस्त, मात।, (*ii*) माला, कंठहार, मोहनमाला, अंकमालिका।
हिम – तुषार, तुहिन, नीहार, बर्फ।
हिरन – मृग, हरिण, कुरंग, सारंग।
होशियार – समझदार, पटु, चतुर, बुद्धिमान, विवेकशील।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. संस्कृत में 'राजा' शब्द के .... से भी अधिक पर्यायवाची हैं।
   (क) एक हजार (ख) दो हजार (ग) तीन हजार (घ) चार हजार
6. .... शब्द के पचास से ऊपर शब्द बन सकते हैं।
   (क) सारंग (ख) अश्व (ग) गगन (घ) अभय
7. पर्यायवाची शब्दों के अभाव से भाषा में .... का सौंदर्य नहीं आता।
   (क) लालित्य (ख) अभिव्यक्ति (ग) अनुरक्ति (घ) विभक्ति
8. 'दूध' शब्द का पर्यायवाची शब्द है ....।
   (क) वसु (ख) क्षीर (ग) अल्प (घ) सामक

7.2 सारांश (Summary)

- पर्याय का अर्थ है–समान। अत: समान अर्थ व्यक्त करने वाले शब्दों को पर्यायवाची शब्द (Synonyms words) कहते हैं। इन्हें प्रतिशब्द या समानार्थक शब्द भी कहा जाता है। व्यवहार में पर्याय या पर्यायवाची शब्द ही अधिक प्रचलित हैं। अंग्रेजी व्याकरणकार Nesfield ने लिखा है–

  "Those Words having the same or nearly the same meaning as another."
- पर्यायवाची शब्द किसी भी भाषा की सबलता के प्रतीक हैं, जिस भाषा में जितने अधिक पर्यायवाची शब्द होंगे, वह उतनी ही सबल व सशक्त भाषा होगी। इस दृष्टि से संस्कृत सर्वाधिक संपन्न भाषा है। जिस भाषा में समानार्थक शब्दों का अभाव होगा, उसमें अभिव्यक्ति का सौंदर्य नहीं होगा और न वह पुनरुक्ति दोष से मुक्त हो पाएगी।

7.3 शब्दकोश (Keywords)

देवालय – मंदिर
निरर्थक – अर्थहीन, बेकार
शरण – आश्रय

7.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'पर्यायवाची शब्द' से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।
2. भाषा में पर्यायवाची शब्दों की क्या आवश्यकता है? उल्लेख कीजिए।
3. 'दुर्गम' और 'शहद' के तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखिए।

नोट

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. समान	2. समानार्थक	3. सबलता	4. लालित्य
5. (क)	6. (क)	7. (ख)	8. (ख)

7.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण एवं रचना–*डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. हिंदी व्याकरण–*बृजकिशोर प्रसाद सिंह, नमन प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन।*

इकाई–8 : अनेकार्थक शब्द

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
8.1 अनेकार्थक शब्दों की तालिका
8.2 सारांश (Summary)
8.3 शब्दकोश (Keywords)
8.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
8.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- अनेकार्थक शब्द का अर्थ जानने में।
- हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

अनेकार्थक शब्द का अर्थ है–अनेक अर्थ वाला, अर्थात् जिन शब्दों से एक से अधिक अर्थ-बोध होता है, उन्हें अनेकार्थक (Homonym) कहते हैं।

हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग अधिकतर काव्य में ही मिलता है। काव्य के रसास्वादन के लिए इनका ज्ञान आवश्यक है। इन्हीं शब्दों द्वारा कवियों ने यमक और श्लेष अलंकारों का भरपूर प्रयोग किया है। कविवर **सेनापति** के अनुसार कवि वही है, जिसकी कविता कम-से-कम दो अर्थों का निर्वाह करने वाली हो–"**सेनापति कवि सोई, जाकी द्वै अरथ कविताई निर्वाह की।**"

नोट्स अनेकार्थक शब्द का अर्थ है–अनेक अर्थ वाला।

8.1 अनेकार्थक शब्दों की तालिका

1. **अंक** गिनती के अंक, गोद, भाग्य, चिह्न, रूपक के दस भेदों में से एक, नाटक का अध्याय।
2. **अंकोर** दोपहरी, रिश्वत, भेंट, गोद, कलेवा।
3. **अंग** शरीर, टुकड़ा, अवयव, भेद, पक्ष, सहायक, भाग, हिस्सा।

नोट

4. **अक्रूर** कृष्ण के चाचा, मित्र, कोमल स्वभाववाला।
5. **अचल** अटल, पहाड़, निश्चल, स्थिर, वृक्ष, पार्वती।
6. **अज** बकरा, दशरथ के पिता, अजन्मा, शिव, ब्रह्मा, मेषराशि, जीव, आत्मा, कामदेव।
7. **अजया** बकरी, भाँग, विजया।
8. **अच्युत** स्थिर, विष्णु, कृष्ण, अपतित।
9. **अक्षर** वर्ण, ईश्वर, आत्मा, स्थिर, शिव, विष्णु।
10. **अधर** होंठ, आकाश, अनाधार, नीच, बुरा, चंचल।
11. **अदिति** पृथ्वी, प्रकृति, देवताओं की माता, रक्षा, देवलोक, वाणी।
12. **अमृत** जल, दूध, अमर, अन्न, सुधा, पारा, प्रिय, सुंदर, आत्मा, शिव, घी, धन।
13. **अब्ज** कपूर, अरब की संख्या, कमल, चंद्रमा, शंख।
14. **अब्द** बादल, वर्षा, मेघ, आकाश, साल।
15. **अपेक्षा** आशा, आवश्यकता, इच्छा, आकांक्षा, लालच, अनुरोध, भरोसा, तुलना।
16. **अनंत** अंतहीन, शेषनाग, लक्ष्मण, आकाश, विष्णु।
17. **अरस** आकाश, नीरस, आलस्य, महल, रसशून्य, अनाड़ी, सुस्ती।
18. **अरुण** सूर्य का सारथी, लाल, सूर्य, गरुड़, तड़का, सिंदूर, केसर।
19. **अंतर** फर्क, भीतर, अंतरिक्ष, समय, व्यवधान।
20. **अपवाद** किसी नियम के विपरीत, कलंक, निंदा, विरोध, आदेश, आज्ञा।
21. **अतिथि** मेहमान, अग्नि, अपरिचित, संन्यासी, आगंतुक, अभ्यागत।
22. **अर्क** सूर्य, सत्त्व, ताँबा, बिजली की चमक, स्फटिक, मदार, क्वाथ (काढ़ा), रविवार।
23. **अर्थ** धन, प्रयोजन, तात्पर्य, कारण, लिए, अभिप्राय, निमित्त, फल, वस्तु, प्रकार।
24. **अलि** सखी, भ्रमर, कोयल, बिच्छू, मदिरा, कौवा, कोयल, सहेली।
25. **अवि** सूर्य, पहाड़, पर्वत, आक, बकरी, मेष, वायु, कंबल।
26. **अहि** दुष्ट, सूर्य, साँप, राहु, पृथ्वी, जल, बादल।
27. **आम** सामान्य, एक फल, मामूली, अपक्व, आंव, कच्चा।
28. **आत्मज** पुत्र, कामदेव, बेटा।
29. **आन** दूसरा, क्षण, शपथ, टेक, सीमा, बनावट, भम, लज्जा, प्रतिज्ञा, विचार।
30. **आतुर** उत्सुक, उतावला, रोगी, कमजोर, दुःखी, आहत, पीड़ित, व्यग्र, व्याकुल।
31. **आराम** विश्राम, वाटिका, एक प्रकार का दंडक वृत्त, फुलवाड़ी
32. **आसुग** मन, वायु, वाण।
33. **इतर** अन्य, नीच, चरस, अंत्यज, अवशेष, बाकी, साधारण, दूसरा।
34. **इंदु** गणित में एक की संख्या, चंद्रमा, कपूर।
35. **उरु** जाँघ, विशाल, श्रेष्ठ, विस्तीर्ण, अधिक मूल्यवान, जाँच।
36. **ऊर्मि** लहर, पीड़ा, तरंग प्रकाश, वेग, भंग, भ्रांति, भूल।
37. **ऐन** कस्तूरी, घर, पूर्ण, आँख, उपयुक्त, ठीक।
38. **ओस** गीला, गोद, धरोहर, बहाना, जिमीकंद।
39. **कंज** कमल, सिर के बाल, अमृत, ब्रह्म, केश।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. अनेकार्थक शब्द का अर्थ है .... ।
2. जिन शब्दों से एक से अधिक अर्थ का बोध होता है, उन्हें .... है।
3. हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग अधिकतर .... में ही मिलता है।
4. काव्य के .... के लिए इनका ज्ञान आवश्यक है।

40. **कनक** सोना, धतूरा, गेहूँ, आटा, खजूर, नागकेसर, पलास।
41. **कर** हाथ, टैक्स, सूँड़, किरण, ओला, विषय, छल, युक्ति, काम।
42. **कल** मशीन, चैन, आने वाला कल, बीता हुआ कल, शांति, सुंदर।
43. **कंद** जड़, मिसरी, बादल, समूह, सूरन, गाँठ, शोथ।
44. **कटाक्ष** आक्षेप, तिरछी चितवन, व्यंग्य।
45. **कर्ण** कान, कुंती का पुत्र, समकोण त्रिभुज के सामने की भुजा।
46. **काम** कार्य, इच्छा, कामना, अनुराग, चार पुरुषार्थों में एक पुरुषार्थ काम।
47. **काल** समय, शत्रु, यमराज, अवसर, अकाल।
48. **कुशल** चतुर, क्षेम (खैरियत), योग्य, कुश लाने वाला।
49. **कृष्ण** भगवान कृष्ण, काला, वेदव्यास।
50. **केतु** एक ग्रह, ध्वजा, पुच्छल तारा, ज्ञान, प्रकाश।
51. **कौशिक** विश्वामित्र, इंद्र, सपेरा, उल्लू, नेवला।
52. **खग** पक्षी, वाण, गंधर्व, सूर्य, ग्रह, चंद्रमा, देवता, वायु।
53. **खर** गधा, दुष्ट, तिनका, गर्दभ, खच्चर, कौआ, रावण के भाई का नाम।
54. **खल** दवा कूटने का पात्र, धतूरा, दुष्ट।
55. **गण** समूह, छंदों में तीन वर्णों का समूह, शिव के अनुचर।
56. **गति** चाल, मोक्ष, हालत, गमन, परिणाम, ज्ञान, प्रमाण, मुक्ति, कर्मफल, दशा।
57. **गुरु** शिक्षक, बड़ा, माता-पिता, भारी, छंद में दीर्घ।
58. **गोपाल** गाय पालनेवाला, कृष्ण, ग्वाला, किसी लड़के का नाम।
59. **गौतम** गौतम बुद्ध, द्रोणाचार्य का साला, भारद्वाज।
60. **गौतमी** हल्दी, गोदावरी नदी, गोरोचन, गौतम ऋषि की पत्नी, अहल्या, दुर्गा।
61. **घट** शरीर, घड़ा, कम, कलसा, जलपात्र, पिंड, मन, हृदय, न्यून।
62. **घन** हथौड़ा, बादल, बड़ा, मेघ, समूह, विस्तार, अभ्रक।
63. **घुटना** कष्ट सहना, सांस लेने में कठिनाई, पाँव का मध्य भाग।
64. **चक्र** कुम्हार का चाक, विष्णु का अस्त्र, पहिया, वायु का भँवर, दल।
65. **चक्री** विष्णु, कुम्हार, गाँव का पुरोहित, चकवा पक्षी, कौआ।
66. **चपला** चंचल स्त्री, लक्ष्मी, बिजली, मदिरा, जीभ, भाँग।
67. **चर** विचरण करने वाला, पशुओं के चरने का स्थान, जासूस।
68. **चश्मा** स्रोत, ऐनक, सोत।
69. **चाप** धनुष, दबाव, परिधि का एक भाग, धनु राशि।

नोट

क्या आप जानते हैं हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग अधिकतर काव्य में ही मिलता है।

70. **चारा** पशुओं का भोजन, उपाय, आचरण, घास, जिस वस्तु को बंसी में लगाकर मछली फँसाई जाती है।
71. **छंद** काव्य, बहाना, छल, मत, युक्ति, रंग-ढंग, अभिप्राय, कविता।
72. **छाजन** छप्पर, वस्त्र, अपरस, खपरैल की छवाई, आच्छादन।
73. **जड़** मूल, मूर्ख, हठी, अचेतन, स्तब्ध, चेष्टाहीन, मूक, गूँगा।
74. **जर** जल, जड़, ज्वर, जरा, वृद्धावस्था।
75. **जलज** कमल, शंख, सीप, मोती, सेवार।
76. **जालक** झरोखा, जाल, घोंसला, गवाक्ष।
77. **जीव** जंतु, जीविका, बृहस्पति, जीवात्मा।
78. **जीवन** जिंदगी, वायु, जल, वृत्ति, प्राणधारण, पानी, घी, मज्जा।
79. **जोड़** योग, मेल, गाँठ, समानता, एक प्रकार की दो वस्तुएँ।
80. **जया** पार्वती, दुर्गा, हरी दूब, पताका, त्रयोदशी, ध्वजा, हड़।
81. **टीका** तिलक, व्याख्या, चेचक आदि का टीका, धब्बा, बदनामी का टीका।
82. **ठाकुर** जाति विशेष, भगवान, स्वामी, नाई, बड़ा।
83. **ढाल** रक्षक, उतार, धातुओं की ढलाई, ढलुवाँ भूमि, ढार, प्रकार, रीति, ढंग।
84. **तक्षक** विश्वकर्मा, बढ़ई, सूत्रधार, सर्प विशेष।
85. **तारा** बृहस्पति की स्त्री, नक्षत्र, बालि की स्त्री, आँख के बीच की काली पुतली।
86. **ताल** संगीत का ताल, झील, तालाब, ताड़ का वृक्ष।
87. **तीर** बाण, नदी का किनारा, किनारा, तट, समीप।
88. **तात** पूज्य, पिता, गुरु, मित्र, भाई।
89. **द्रोण** द्रोणाचार्य, कौआ, दोना, नाव।
90. **दहर** छोटा भाई, कुंड, नरक, छछूँदर, चूहा, बालक।
91. **दिवा** दिन, दीपक, दिवस, बाईस अक्षरों का एक वर्ण वृत्त।
92. **धन** जोड़, स्त्री, संपत्ति, लाभ, द्रव्य, संपत्ति, पूँजी, चौपायों का समूह।
93. **धर्म** संप्रदाय, स्वभाव, कर्त्तव्य, प्रकृति।
94. **धारा** संतान, सेना, नियम, पानी का झरना, धार, झुंड।
95. **नाक** स्वर्ग, इज्जत, एक फल, नासिका, अंतरिक्ष, आकार, मान, प्रतिष्ठा।
96. **नाग** सर्प, हाथी, बादल, नागबल्ली, एक पर्वत।
97. **नागर** चतुर, नागरमोथी, नागरिक, सोंठ, पौर, सभ्य व्यक्ति, नारंगी।
98. **निशाचर** राक्षस, चोर, उल्लू, सियार, सर्प, बिल्ली, प्रेत, भूत, महादेव।
99. **पर** पंख, ऊपर, दूसरा, किंतु, पराया।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

नोट

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. 'अज' का एक अर्थ है बकरा, दूसरा अर्थ होगा ....।

(क) शिव (ख) भाँग (ग) भाग (घ) इनमें से कोई नहीं

6. 'कनक' का अर्थ है सोना, अन्य अर्थ है .... ।

(क) छल (ख) धतूरा (ग) लाल (घ) राहु

7. 'कौशिक' के अनेकार्थ हैं–विश्वामित्र, इंद्र, सेपरा, नेवला .... ।

(क) नाई (ख) झील (ग) उल्लू (घ) तट

8. 'चश्मा' शब्द के अनेकार्थक हैं .... ऐनक, सोता।

(क) घड़ा (ख) काव्य (ग) जड़ (घ) स्रोत

100. पत्र पत्ता, चिट्ठी, पन्ना, आवरण।
101. पानी इज्जत, जल, चमक, शस्त्र की धार।
102. पास निकट, उत्तीर्ण, पसंद, परिचय-पत्र।
103. फल परिणाम, लाभ, संतान, खाने वाला फल, हल, चाकू आदि का फल।
104. बलि पितरों को दिया गया भोग, एक राजा, उपहार, न्यौछावर, बलिहारी।
105. बहार वसंत, एक राग, आनंद।
106. बल शक्ति, सेना, बलराम, पार्श्व, बगल, लपेट, ऐंठन, सिकुड़न, अंतर।
107. बिंब छाया, चंद्रमंडल, बाँबी, घेरा, सूर्य।
108. भा चमक, शोभा, बिजली, किरण, प्रभा, कांति।
109. भाव विचार, अभिप्राय, मनोविकार, दर, श्रद्धा।
110. भूत प्रेत, पंचभूत, बीता हुआ समय, मृत शरीर, तत्व, सत्य।
111. मधु शहद, वसंत, पराग, चैतमास, ऋतु, शराब।
112. माधव वसंत ऋतु, विष्णु, बैसाख, महीना, श्रीकृष्ण।
113. मद नशा, मस्ती, हाथी के मस्तक का स्राव, गर्व, कस्तूरी।
114. मुद्रा सिक्का, छापा, आकृति, कुंडल, चिह्न, अँगूठी।
115. मूल पूँजी, एक नक्षत्र, जड़, कंद, आरंभ, पास, समीप।
116. रंग सातों रंग, आनंद, विलास, नाटक का प्रदर्शन।
117. रंभा वेश्या, एक अप्सरा, केला, कदली, गौरी, उत्तर दिशा।
118. रक्त खून, केशर, लाल, कुंकुम, ताँबा, कमल, सिंदूर, रुधिर।
119. रसाल ईख, आम, मीठा, रसीला, कटहल, गेहूँ, अमलबेंत।
120. राशि समूह, मेष-वृष आदि राशियाँ, ढेर, पुंज, समुच्चय।
121. वंग रांगा, कपास।
122. वर्ण रंग, अक्षर, चतुर्वर्ण्य, भेद, रूप।
123. वन वाटिका, जंगल, पानी, भवन।
124. वार अवसर, दिन, द्वार, रोक, आक्रमण।
125. विषय भोग, विचारणीय भाव, बारे में, विलास।

नोट

126. **विधि** रीति, भाग्यविधाता, ईश्वर, कार्यक्रम, योजना, प्रकार, कानून, संगति।
127. **वृत** गोल-घेरा, हाल, चरित्र।
128. **विहंग** पक्षी, वाण, बादल, विमान, सूर्य, चंद्रमा, देवता।
129. **शर** सरकंडा, वाण, तीर, नरकट, जल, पाँच की संख्या, रूस।
130. **शरभ** ऊँट, एक मृग, टिड्डी, सिंह, हाथी का बच्चा, विष्णु।
131. **सरि** समता, माला, नदी, सरिता, बराबरी, सदृश।
132. **सारंग** हिरन, बादल, पानी, मोर, शंख, पपीहा, हाथी, सिंह, राजहंस, भ्रमर, कपूर, कामदेव, कोयल, धनुष, मधुमक्खी, कमल, भूषण।
133. **सार** रस, रक्षा, जुआ, लाभ, उत्तम, पत्नी का भाई, तलवार, तत्व।
134. **सिता** चाँदी, चमेली, चाँदनी, शकर, गोरोचन, सफेद दूब।
135. **सूर** वीर, अंधा, एक कवि, सूर्य, अर्क, मदार, आचार्य, पंडित।
136. **हर** हरण करना, प्रत्येक, शिव, गणित में अंश के नीचे वाली संख्या।
137. **सूत** बढ़ई, धागा, पौराणिक, सारथी, सूत्रकार, सूर्य, पारा।
138. **सैन** सेना, संकेत, बाजपक्षी, इंगित, लक्षण, चिह्न।
139. **हरि** विष्णु, इंद्र, बंदर, हवा, सर्प, सिंह, आग, कामदेव, हंस, मेढक, चाँद, हरा रंग।
140. **हार** पराजय, माला, गले का आभूषण।
141. **हीन** नीचा, तुच्छ, कम, रहित, छोड़ा हुआ, अल्प, निष्कपट, बुरा, शून्य।
142. **हेम** सोना, तुषार, इज्जत, पीला रंग।
143. **हंस** आत्मा, योगी, श्वेत, घोड़ा, सूर्य, सरोवर का पक्षी।
144. **क्षेत्र** शरीर, तीर्थ, गृह, प्रकृति, खेल, स्त्री।

टास्क अनेकार्थक शब्दों द्वारा कवि किन अलंकारों का भरपूर प्रयोग करते हैं?

8.2 सारांश (Summary)

- जिन शब्दों से एक से अधिक अर्थ-बोध होता है, उन्हें अनेकार्थक (Homonym) कहते हैं।
- हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग अधिकतर काव्य में ही मिलता है। काव्य के रसास्वादन के लिए इनका ज्ञान आवश्यक है। इन्हीं शब्दों द्वारा कवियों ने यमक और श्लेष अलंकारों का भरपूर प्रयोग किया है। कविवर सेनापति के अनुसार कवि वही है, जिसकी कविता कम-से-कम दो अर्थों का निर्वाह करने वाली हो–**''सेनापति कवि सोई, जाकी द्वै अरथ कविताई निर्वाह की।''**

8.3 शब्दकोश (Keywords)

ऊर्मि – लहर
कुशल – चतुर
राशि – समूह

नोट

8.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. अनेकार्थक शब्द से क्या तात्पर्य है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
2. हिंदी साहित्य में अनेकार्थक शब्दों का महत्त्व बताइए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. अनेक अर्थवाला	2. अनेकार्थक	3. काव्य	4. रसास्वादन
5. (क)	6. (ख)	7. (ग)	8. (घ)।

8.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. सरल हिंदी व्याकरण और रचना–*वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. परिष्कृत हिंदी व्याकरण–*बद्रीनाथ कपूर, प्रभात प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*

नोट

इकाई–9 : काव्य का स्वरूप एवं परिभाषा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
9.1 कविता का रूप
9.2 गद्य, पद्य, सूक्ति और कविता
9.3 काव्य के भेद
9.4 सारांश (Summary)
9.5 शब्दकोश (Keywords)
9.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
9.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- काव्य का स्वरूप एवं परिभाषा जानने में।
- काव्य के भेद जानने में।
- हिंदी के महाकाव्य को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

सुंदरता में सहज आकर्षण होता है। किसी भी सुंदर वस्तु की ओर सब स्वत: अनायास ही खिंच जाते हैं। बगीचे में खिला फूल, सुगठित और लावण्य से भरी देह व मुखाकृति, भवन की वास्तु-कुशलता, मंदिर व संग्रहालय में स्थापित सुडौल मूर्ति, चित्रशाला में सुसज्जित चित्र अथवा कोई भी नयनाभिराम जीव वस्तु आदि देखने पर सौ काम छोड़कर किसी सहृदय का उसे देखते रह जाना नितांत स्वाभाविक है। उसे देखकर जो मानसिक तृप्ति मिलती है, जिस आनंद का अनुभव होता है, वह लाख चेष्टा करने पर भी ज्यों का त्यों यथा-अनुभूत न तो वाणी से कहा जा सकता है और न लेखनी से ही प्रकट किया जा सकता है।

ठीक इसी प्रकार का रुचिकर अनुभव किसी मनोरंजक उक्ति या बात को सुनने एवं पढ़ने पर होता है। हम जब कोई मनोहर रचना सुनते या पढ़ते हैं तब हमारा मन उसकी ओर अपने आप खिंच जाता है। साधारणतया एक ही बात पुन:-पुन: सुनने या पढ़ने से मन को अरुचि हो जाती है, परंतु किसी मनभावनी उक्ति को बार-बार सुनने या पढ़ने से मन थकता नहीं, प्रत्युत उसमें बार-बार नया रस मिलता है। इस प्रकार की रचना, चाहे गद्य में हो, चाहे पद्य में, सुनते या पढ़ते ही हृदय में ऐसा आनंद उत्पन्न करती है जो कहा नहीं जा सकता, वर्णनातीत होता है। ऐसी कर्ण-सुखद, अर्थ-सौष्ठव से पूर्ण प्रभावशाली व हृदयस्पर्शी उक्ति ही **'कविता'** कहला सकती है। उसका पहचानना प्राय: कष्टसाध्य नहीं होता। किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव किये बिना ही हम जान या

बता सकते हैं कि कोई उक्ति कवितापूर्ण है अथवा नहीं। हम सब जानते हैं कि सौंदर्य क्या है अथवा प्रेम क्या है, किंतु इनका यथार्थ सम्यक् और पूर्णरूप से वर्णन शब्दों में नहीं कर पाते। इसी प्रकार यह जानते हुए भी किसी उक्ति को कविता कहा जा सकता है, पूर्णरूप से अभिव्यक्त नहीं कर सकते कि कविता क्या है? उसका सर्वमान्य लक्षण नहीं बता सकते।

फिर भी कवि और कविता के मर्मज्ञ कुछ नपे-तुले शब्दों में कविता का लक्षण बतलाते हैं। कोई कहता है कि 'सुनने में प्रिय शब्दों का समुदाय' कविता है, किंतु शब्दों का अर्थ उपेक्षणीय नहीं, अपितु प्रमुख है। इससे अर्थ के सहित शब्द अथवा 'शब्द और अर्थ दोनों के योग' को कविता कहा जाता है। यही बात और अधिक अच्छे ढंग से यों कही गयी है–'शब्द और अर्थ दोनों की रमणीयता (लोकोत्तर आनंद देने की क्षमता) से संपन्न उक्ति को कविता कहना चाहिए। इस प्रकार कविता के लिए यह आवश्यक है कि–(1) उसमें शब्द (भाषा) का सौष्ठव हो। वह सामान्य व्यवहार की भाषा से कहीं अधिक सुंदर, सुसंस्कृत और सुगठित हो; (2) साथ ही उसका अर्थ भी रमणीय और मन में असाधारण आनंद का संचारक हो। इस प्रकार काव्य-पुरुष के शरीर हैं–शब्द और अर्थ। यह रूपक राजशेखर ने काव्य-मीमांसा (अध्याय तृतीय) में प्रस्तुत किया है।

परंतु कुछ मनीषी ऐसी उक्ति को काव्यमयी कहते हैं जो रसात्मक हो। पद, वाक्य, रस आदि के विविध दोष उसका अपकर्ष न करते हों और गुण, अलंकार, रीति आदि उसके सौष्ठव का उत्कर्ष साधन करते हों। इस प्रकार काव्य-पुरुष का रूपक यों पूर्ण होता है–शब्द और अर्थ उसके शरीर हैं, रस उसकी आत्मा है, गुण उसके शौर्यादि के सदृश हैं, दोष उसके एकाक्ष, गंजापन की तरह हैं और रीति अवयवों के समान है।

9.1 कविता का रूप

यों कविता केवल कानों को सुखद या मनोरंजक न हो, अर्थ की मनोहरता से भी परिपूर्ण हो। इस प्रकार निर्दोष, रीति और गुण से पूर्ण, अलंकृत और मनोहर अर्थ समन्वित वाक्य काव्य कहा जाता है। कुछ लोग मानते हैं कि यदि उक्त विशेषताओं में अलंकृति (सजावट) न भी हो किंतु शेष सब बातें हों तो भी वाक्य को काव्य कहा जा सकता है। तात्पर्य यह है कि कहीं-कहीं अलंकार न होने पर भी उक्ति के शब्द और अर्थ निर्दोष हों तो उसमें कवित्व हो सकता है, परंतु इस लक्षण से काव्य के उस रूप का बोध नहीं होता जिससे–(1) विचारों का परिष्कार होता है और वे उदात्त बनते हैं, (2) जो हृदय को अनिर्वचनीय आनंद देता है और (3) हृदय में ऐसी भावना उत्पन्न कर सदा बनाये रखता है जिससे उसका सृष्टि के अन्य संपूर्ण चेतन और अचेतन पदार्थों से एक प्रकार का आत्मिक संबंध स्थापित हो जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का यह मत उनके शब्दों में यों व्यक्त हुआ है–'कविता मनुष्य के हृदय को व्यक्तिगत संबंध के संकुचित मंडल से उठाकर सामान्य भाव-भूमि पर ले जाती है जहाँ जगत् के नाना रूपों और व्यापारों के साथ उसके प्रकृत संबंध का सौंदर्य दिखाई पड़ता है।' यह भावना कविता के श्रोता या पाठक के मन में तभी जागृत होगी जब वह सरल और सरस शब्दों में हो एवं उसमें रूप-सौष्ठव हो। इसलिए, सुंदर और सरस वाक्यों द्वारा अभिव्यक्त ऐसे विचारों को कविता कहा जा सकता है जो श्रोता या पाठक के हृदय में वही भाव उत्पन्न करने में समर्थ हो जो रचयिता के हृदय में उठे थे और जिसके सहारे वह क्षुद्र अहंभाव छोड़कर सजीव और निर्जीव सभी पदार्थों से मानसिक भावना द्वारा एकता का अनुभव करे। काव्य-विषयक इस धारणा को संक्षेप में कह सकते हैं–सरल और सरस शब्दों में व्यक्त, मन को मुग्ध करने वाले ऐसे उच्च भावों को कविता कहते हैं जिनमें श्रोता या पाठक के विचार देश या काल की सीमा को लाँघकर सृष्टि के सभी पदार्थों से तादात्म्य का अनुभव करने लगे। 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान-दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्त दशा कविता कहलाती है।'

कुछ मनीषी मानते हैं कि ऐसी लोकोत्तर आनंद से भरपूर उक्ति जब तक लोक-मंगल का साधन न करे तब तक कविता नहीं कही जा सकती है। वे कहते हैं कि लोक-कल्याण भगवद्विषयक रचना से ही हो सकता है। तुलसीदास के शब्दों में 'कीरति भनिति भूति भल सोई, सुरसरि सम सब कहँ हित कोई।' अर्थात् कीर्ति और विभूति के सदृश कविता को भी गंगा के सदृश सार्वजनिक हित का साधन करना चाहिए। इसीलिए गोस्वामीजी ने निम्नांकित रूपक में कविता की चारुता का उद्घाटन किया है–

हृदय सिंधु मति सीप समाना, स्वाति सारदा कहहिं सुजाना।
जौं बरषइ वर बारि बिचारू, होहिं कवित मुकुतामनि चारू।
जुगुति बेधि पुनि पोहिअहिं राम चरित वर ताग।
पहिरहिं सज्जन विमल उर सोभा अति अनुराग।

(रामचरितमानस 1, 11, 8-11)

अर्थात् स्वाति नक्षत्र में बरसे मेघ-जल को सीप ग्रहण कर मोती उत्पन्न करती है जिन्हें गूँथकर बनी माला वक्षस्थल को सुशोभित करती है। ऐसे ही हृदय स्थित मति में सरस्वती विचार में कविता उत्पन्न करती है जिसमें रामचरित को गूँथकर बने काव्य को सज्जन अपने हृदय का हार बनाते हैं।

इस प्रकार भाव के अनुरूप कोमल अथवा पुरुष तथा सरल एवं सरस साभिप्राय पदों में अमित अर्थ व्यक्त करके लोकोत्तर आनंद एवं लोक-मंगल करने वाली रचना को कविता कहना चाहिए।

नोट्स 'सुनने में प्रिय शब्दों का समुदाय' कविता है।

इस परिभाषा का विश्लेषण करने पर विदित होता है कि–(1) कविता का विषय ऐसा हो जो मानव हृदय पर प्रभावशाली हो और जिसके द्वारा उसमें से पशुत्व का अंश-अहंभाव निकलकर उसमें सच्चे मनुष्यत्व, विश्वबंधुत्व का भाव प्रतिष्ठित हो जाए, तथा (2) जो ऐसे शब्दों में ऐसे ढंग से प्रकट किया जाए कि मानव-हृदय को अपनी ओर खींच सके, उसे मोह सके और उसमें ऐसा आनंद पैदा कर सके, जो संसार के अन्य पदार्थों से प्राप्त न हो सकता हो और जो उसे अपने रंग में रंग दे, आत्मलीन करके आत्मविस्मृत कर दे।

कविता में वर्ण्य विषयों का विस्तार अपरिमित है। जिन रूपों और व्यापारों से मनुष्य आदिम युगों से ही परिचित है बिन रूपों और व्यापारों को सामने पाकर वह नर-जीवन के आरंभ से ही लुब्ध और क्षुब्ध होता आ रहा है उनका हमारे भावों के साथ मूल या सीधा संबंध है। 'इस विशाल बिंब के प्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष और गूढ़ से गूढ़ तथ्यों को भावों के विषय या आलंबन बनाने के लिए इन्हीं मूल रूपों और मूल व्यापारों में परिणित करना पड़ता है, जब तक वे इन मूल मार्मिक रूपों में नहीं लाये जाते तब तक उन पर 'काव्य-दृष्टि नहीं पड़ती।'... ऐसे आदिम रूपों और व्यापारों में, वंशानुगत वासना की दीर्घ-परंपरा के प्रभाव से, भावों के उद्‌बोधन की गहरी शक्ति संचित है। इस प्रकार ''काव्य-दृष्टि कहीं तो नरक्षेत्र के भीतर रहती है, कहीं मनुष्येतर बाह्य सृष्टि के और कहीं समस्त चराचर के।''

9.2 गद्य, पद्य, सूक्ति और कविता

इन बातों को ध्यान में रखकर किसी रचनात्मक वाक्य को, चाहे वह गद्य में हो चाहे पद्य में, काव्य कह सकते हैं। हमारे देश में यद्यपि पहले भी गद्य में अपने भाव प्रकट करके उनको ग्रंथों में रक्षित रखने की प्रथा थी तथापि लोग अधिकतर पद्य में ही अपनी भावाभिव्यक्ति छोड़ गये हैं। इसी कारण प्राचीन समय में जहाँ-जहाँ किसी उक्ति को काव्य के नाम से अभिहित करना पड़ा है, वहाँ उसके लिए पद्यात्मक होना आवश्यक-सा माना गया है। इधर गत शताब्दी से हमारे यहाँ भी यूरोपीय देशों की भाँति गद्य में व्यंजना अधिक की जाने लगी है। इससे यदि गद्यात्मक वाक्य में कवित्व के उक्त सब उपादान पाये जाएँ तो उसे गद्य-काव्य या गद्यमुक्तक कहा जाता है। हमारे यहाँ काव्य ग्रंथ सदा से पद्य-बद्ध होते आये हैं। इससे साधारणतया पद्य और कविता एक-दूसरे के पर्यायवाचक से हो गये हैं, परंतु सच पूछा जाए तो पद्यमयी सभी उक्तियाँ कविता कहलाने की अधिकारिणी नहीं।

भोजन बनाओ, अब उठो,
निज कार्य साधो, सब उठो,
तुमको अभय-दायक वचन मैंने दिये।

(मैथिलीशरण गुप्त)

यह पद्य ही कहा जायेगा। इसमें कोरी तुकबंदी है, श्रोता या पाठक के हृदय में वक्ता के भाव उद्दीप्त कर देने की शक्ति नहीं।

इसी प्रकार–

कनक कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय।
यहि खाये बौरात है वह पाये बौराय। *(बिहारी)*

उक्त दोहे में 'कनक' शब्द के 'सोना' और 'धतूरा' इन दो अर्थों के कारण शाब्दिक चमत्कार प्रदर्शित किया गया है। इसको सुनकर हम शब्द के प्रयोग की चतुराई पर ही प्रसन्न होकर रह जायेंगे। उससे अंतरात्मा का कोई और स्थायी सदा नया बना रहने वाला आनंद पायेंगे। इस प्रकार के वाक्य को 'पद्य' न कहकर 'सूक्ति' कहेंगे, पर कविता नहीं।

क्या आप जानते हैं कुछ मनीषी ऐसी उक्ति को काव्यमयी कहते हैं जो रसात्मक हो।

परंतु जब राम और लक्ष्मण के साथ वन-यात्रा करते हुए यमुना पार करने के अनंतर गाँव की भोली-भाली स्त्रियों के द्वारा राम का परिचय पूछने पर सीता राम से अपना संबंध बताती है–

बहुरि बदन-बिधु अंचल ढाँकी पिय तन चितै भौंह करि बाँकी।
खँजन मंजु तिरीछे नैननि निज पति तिनहिं कहेंउ सिय सैननि।।

तब हम केवल आर्य-मर्यादा की प्रतिनिधि-स्वरूपा सीता को अपने पति की उपस्थिति में उनके नाम का उच्चारण करने से विरत ही नहीं देखते, अपितु पति के समीप होने से भारतीय ललना को जो स्वाभाविक लज्जा लगती है उसको भी प्रत्यक्ष देखते हैं। इतना ही नहीं, सबके सामने अपने पति का परिचय देने के ढंग में सीता की चतुरता भी हृदय पर अपना प्रभाव डालती है। शब्दों की कोमलता के साथ इस चौपाई में जो चित्र कवि अंकित करता है वह देश और काल के प्रभाव से परे है, चिरस्थायी है। यदि यह बात सीता ने राम के साथ एकांत में की होती, तो हिंदी के रीति-कालीन कवियों की कविता की भाँति इसमें 'संभोग-शृंगार' का चित्र मात्र होता, कोई विशेषता न होती। परंतु यहाँ बात ऐसी नहीं है। ग्राम-बालाओं के मध्य सीताजी की यह चेष्टा कुलवधू की मर्यादा की मनमोहक व्यंजना है। इसी से यह चौपाई जब भी पढ़ी जाती है, तब नये आनंद की लहर मन में उठा देती है। इसी प्रकार की उक्तियाँ वास्तव में 'कविता' कहलाती हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. पद्य और कविता एक-दूसरे के .... हैं।
2. सुंदरता में सहज .... होता है।
3. हमारे यहाँ काव्य-ग्रंथ सदा से .... होते आए हैं।
4. कविता में वर्ण्य विषयों का विस्तार .... है।

9.3 काव्य के भेद

गद्य, पद्य और चंपू

काव्य के अंतर्गत उन्हीं रचनाओं की गणना होती है जिनमें ऊपर कहे गये शब्द और अर्थ से युक्त कवित्व के मूल तत्व विद्यमान हों। ऐसी रचनाएँ गद्य और पद्य दोनों में हो सकती हैं। महाकवि तुलसी का पद्यात्मक 'रामचरितमानस' या श्री मैथिलीशरण गुप्त का 'जयद्रथ-वध' काव्य हैं, श्रीवियोगी हरि-कृत गद्यात्मक 'तरंगिणी'

नोट

या 'अंतर्नाद' अथवा श्री रायकृष्णदास-विरचित 'साधना' और 'भावुक' भी काव्य हैं, परंतु प्रायः पद्यात्मक रचनाओं को ही काव्य माना जाता है। ऐसा करने से आकार को–बाहरी ढाँचे को–प्रधानता मिल जाती है, आत्मा की–कविता के मूल तत्त्व की–उपेक्षा हो जाती है। वास्तव में कविता के विशिष्ट गुणों से युक्त कथन को, चाहे वह पद्य में हो, चाहे गद्य में–काव्य कहना अधिक युक्तिपूर्ण है। कुछ वर्णन-प्रधान रचनाएँ ऐसी भी हैं जो गद्य और पद्य दोनों में होती हैं। श्री जयशंकर 'प्रसाद' के 'चित्राधार' में संगृहीत 'उर्वशी' और 'बभ्रूवाहन' तथा श्री अनूप शर्माकृत 'फेरि मिलिबो' इसी प्रकार की कृतियाँ हैं। ऐसी रचनाओं को 'मिश्र काव्य या चंपू' कहते हैं।

दृश्य और श्रव्य

प्रयोजन अथवा स्वरूप के विचार से काव्य के–(1) दृश्य और श्रव्य दो भेद किये जाते हैं। श्रव्य केवल सहृदय के मन पर प्रभाव डालता है, परंतु दृश्य काव्य सामान्य जन के हृदय-पटल पर भी अपनी छाप अंकित करता है। अभिनेता इसमें उल्लिखित पात्रों का रूप बनाकर उनके कथन एवं कार्यों का अपनी देह की चेष्टाओं, मुद्राओं, वाणी, वेष-भूषा और विविध शारीरिक विकारों–अश्रु, हँसी आदि सात्विक भावों–द्वारा अनुकरण करते हैं। (1) शरीर के अंगों के व्यापार को आंगिक, (2) वचन संबंधी कार्य को वाचिक, (3) वेशरचना को आहार्य (शृंगार से प्रभावित) और (4) सात्विक अनुभावों को सात्विक नामक अनुकरण कहा जाता है। इस क्रिया को अभिनय कहते हैं। दृश्य काव्य को रूपक भी कहते हैं। कारण, इसमें अभिनेता दूसरों का रूप धारण करके अपने में उनका आरोपन किया करता है। दर्शकगण उसे थोड़ी देर के लिए ही सही, वही व्यक्ति समझ लेते हैं, जिसका वह अभिनय करता है।

श्रव्य काव्य केवल सुने या पढ़े जा सकते हैं। उनका अभिनय नहीं होता। दृश्य काव्य भी पढ़े या सुने जा सकते हैं; किंतु वास्तविक आनंद तभी आता है जब उनका अभिनय रंगशाला में देखा जाए। किसी की दशा का अनुकरण नाट्य कहलाता है। उनमें लौकिक पदार्थ से भिन्न अनुकरण का प्रतिबिंब होता है। राजा लक्ष्मणसिंह का 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का अनुवाद, भारतेंदु-हरिश्चंद्र कृत 'सत्य हरिश्चंद्र', 'भारत दुर्दशा' आदि अथवा श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'-कृत 'रक्षाबंधन', 'आहुति' आदि, श्री जयशंकर 'प्रसाद'-विरचित 'अजातशत्रु', 'चंद्रगुप्त' 'स्कंदगुप्त' इत्यादि नाटकों का आनंद पढ़ने या सुनने से भी मिलता है; परंतु जब अभिनेताओं द्वारा रंगमंच पर इनका प्रदर्शन होता है तब इनका आनंद सुनने या पढ़ने की अपेक्षा कई गुना बढ़ जाता है। तब इनमें प्रेक्षक लीन हो जाता है, रस-मग्न हो जाता है।

दृश्य काव्य के अंतर्गत 'रूपक' और 'उपरूपक' हैं। संस्कृत-वाङ्मय में कथानक की वृत्ति, नायक और रस के भेद के आधार पर रूपक के दस और उपरूपक के अठारह भेद माने गये हैं। हिंदी में **'नाटक'** शब्द का प्रयोग 'रूपक' के अर्थ में होता है क्योंकि उसमें नाट्यशास्त्र से संबद्ध सभी लक्षण पाये जाते हैं और सभी रसों का समावेश हो सकता है।

रूपक के संस्कृत साहित्य में माने गये ये दस भेद हैं–

1. **नाटक–**इसकी कथा इतिहास-प्रसिद्ध होती है, कवि-कल्पित नहीं होती। इसका नायक कोई धीर-गंभीर, उदात्त, प्रतापी, तेजस्वी, गुणी राजा, राजर्षि अथवा दिव्य (देवता) या दिव्यादिव्य (अवतार) पुरुष ही होता है। स्वभाव के विचार से नायक चार प्रकार के होते हैं–(1) धीरोदात्त (आत्मश्लाघा से रहित, गंभीर, महाबलवान, स्थिर, विनयशील, सर्वगुणसंपन्न), (2) धीरोद्धत (उद्धत, अभिमानी, आत्मश्लाघी), (3) धीरललित (विनोदी, विलासी, सबका प्रिय) और (4) धीरप्रशांत (सरल)। इसमें प्रधान रस वीर या शृंगार होता है। अन्य रस इनमें किसी के अंग होकर उसके सहायक रूप में ही आते हैं। रस का संचार सामाजिक या नाटक के द्रष्टा के हृदय में होता है। वह अभिनेता और उसके विविध कार्यों, चेष्टाओं, उक्तियों आदि से अपने हृदयगत भावों के उद्दीप्त होने पर रसमय होता है। नाटक में पाँच से लेकर दस तक अंक होते हैं। (पाँच से अधिक अंक वाले नाटक को महानाटक कहते हैं। इसके अंकों का आकार क्रमशः छोटा होते जाना चाहिए)।

   हिंदी के सभी दृश्य काव्य नाटक कहे जाते हैं। संस्कृत में मान्य नाटक के उपर्युक्त लक्षण उन सब पर लागू नहीं हो सकते। उनमें नीचे वर्णित 'प्रकरण' का भी समावेश हो जाता है।

2. **प्रकरण**—इसकी कथा लौकिक एवं कल्पित होती है। इसमें प्रधान रस श्रृंगार होता है। नायक धीर, शांत ब्राह्मण, मंत्री अथवा वैश्य होता है। वह धर्म, अर्थ और काम में पारायण होता है तथा विघ्न-बाधाओं का सामना करते हुए सफल-मनोरथ होता है। इसके तीन भेद होते हैं—(1) शुद्ध, जिसमें नायिका कुलकन्या होती है, (2) विकृत, जिसकी नायिका वेश्या और (3) संकीर्ण, जिसकी नायिका दोनों होती हैं। संकीर्ण प्रकरण धूर्त, जुआरी, विट चेटादि पात्रों से युक्त होता है। प्रकरण अन्य सभी बातों में नाटक के समान ही होता है। इसका उदाहरण 'मालती-माधव' है जो भवभूति-रचित है और सत्यनारायण कविरत्न द्वारा हिंदी में अनूदित है।
3. **भाण**—इसमें अनेक अवस्थाओं से युक्त धूर्तों का चरित्र ही दिखाया जाता है। इसमें एक अंक और एक ही पात्र होता है। वह पात्र कोई बुद्धिमान विट होता है। वह रंगमंच पर अपनी या औरों की अनुभूति बातों को कथोपकथन के रूप में स्वयं ही पूछता और स्वयं उत्तर देता हुआ 'आकाशभाषित' द्वारा प्रकाशित करता है। इसका कथानक कल्पित होता है। उदाहरण, वैदिक हिंसा हिंसा न भवति (भारतेंदु हरिश्चंद्र)।
4. **प्रहसन**—यह भी भाण के ही समान होता है, पर इसमें हास्य रस की अधिकता रहती है। इसमें नायक के रूप में संन्यासी, तपस्वी, पुरोहित, नपुंसक, कंचुकी आदि की योजना की जाती है।
5. **डिम**—इसकी कथा पुराण या इतिहास प्रसिद्ध चार अंकों में प्रदर्शित होती है। यह माया, इंद्रजाल, संग्राम, क्रोध, उन्मत्त आदि की चेष्टा तथा उपरागों (सूर्य-चंद्र-ग्रहण) आदि के वृत्तांत से पूर्ण रहता है। इसमें रौद्र रस प्रधान होता है। शांत, हास्य और श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य रस उसके सहायक होते हैं। इसमें चार अंक होते हैं। प्रवेशक नहीं होते। इसमें देवता, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, महोरग, भूत, प्रेत, पिशाच आदि अत्यंत उद्धत सोलह प्रकार के नायक होते हैं।
6. **व्यायोग**—इसका भी आख्यान पुराण या इतिहास-प्रसिद्ध होता है, पर इसमें नायक धीरोद्धत राजर्षि अथवा दिव्य पुरुष होता है। इसमें पात्रों की अधिकता होती है। वे सब पुरुष होते हैं। इसमें एक भी स्त्री पात्र नहीं होता। इसमें युद्ध होता है, किंतु स्त्री के कारण नहीं। इसमें एक ही अंक होता है जिसमें एक ही दिन का वृत्तांत होता है।
7. **समवकार**—इसकी कथा इतिहास की कोई ऐसी घटना होती है जिसका संबंध देवताओं और असुरों से होता है। इसमें तीन अंक होते हैं और बारह देवासुर नायक। प्रत्येक नायक का फल पृथक् ही होता है। उसमें वीर रस प्रधान होता है; उसकी पुष्टि अन्य सब रस करते हैं।
8. **वीथी**—इसमें एक ही अंक होता है और कोई एक पुरुष—उत्तम, मध्यम या अधम—नायक कल्पित कर लिया जाता है। **'भाण'** की भाँति इसमें भी आकाशभाषित द्वारा उक्ति-प्रत्युक्ति होती है। इसमें श्रृंगार रस की अधिकता रहती है।
9. **ईहामृग**—इसका वृत्तांत मिश्रित, अर्थात् कुछ ऐतिहासिक और कुछ कल्पित होता है। इसमें नायक और प्रतिनायक प्रसिद्ध धीरोद्धत मनुष्य या देवता होते हैं। इसमें एक ही अंक होता है। इसमें युद्ध होते-होते किसी बहाने रह जाता है।
10. **अंक या उत्सृष्टिक अंक**—इसमें एक ही अंक होता है। इसका नायक साधारण पुरुष तथा वृत्तांत प्रख्यात होता है। कवि उसको विस्तृत कर देता है। इसमें स्त्रियों के विलाप की प्रचुरता रहती है। इसी से करुण रस की प्रधानता होती है।

उपरूपक

1. **नाटिका**—इसमें चार अंक होते हैं। पात्रों में अधिक स्त्रियाँ होती हैं। नायक धीर-ललित राजा होता है। नायिका रनिवास से संबद्ध राजवंश की कोई गायन-पटु अनुरागवती कन्या होती है।
2. **त्रोटक**—इसमें पाँच, सात, आठ या नौ अंक होते हैं। प्रत्येक अंक में विदूषक का व्यापार रहता है। श्रृंगार रस प्रधान होता है।

नोट

3. **गोष्ठी**–इसमें एक ही अंक होता है। पाँच-छह स्त्रियों और नौ-दस मनुष्यों का व्यापार रहता है। वासनामय (काम) शृंगार की प्रधानता रहती है।
4. **सट्टक**–इसकी रचना संस्कृत में न होकर प्राकृत में होती है। इसमें अद्भुत रस रहता है। अंकों को 'जवनिका' कहते हैं। अन्य बातें 'नाटिका' के सदृश होती हैं।
5. **नाट्यरासक**–इसमें एक ही अंक होता है। शृंगार से युक्त हास्य रस प्रधान रहता है। नायक उदात्त, उपनायक पीठमर्द तथा नायिका वासक-सज्जा होती है।
6. **प्रस्थानक**–इसमें दो अंक होते हैं। नायक दास और उपनायक हीन पुरुष होता है। नायिका दासी होती है।
7. **उल्लाप्य**–इसमें एक अंक, दिव्य कथा, धीरोदात्त नायक तथा हास्य शृंगार एवं करुण रस होते हैं। कुछ लोग इसमें तीन अंक मानते हैं।
8. **काव्य**–इसमें एक अंक और हास्य रस होता है। गीतों की अधिकता होती है। नायक और नायिका दोनों उदात्त होते हैं।
9. **रासक**–इसमें भी एक ही अंक होता है। पाँच पात्र होते हैं, सूत्रधार नहीं होता। नायिका प्रसिद्ध और नायक मूर्ख होता है। इसमें उदात्त-भाव उत्तरोत्तर प्रदर्शित किये जाते हैं।
10. **प्रेङ्खण**–इसमें भी एक ही अंक होता है। नायक हीन पुरुष होता है। इसमें सूत्रधार नहीं होता। नांदी तथा प्ररोचना नेपथ्य से पढ़ी जाती हैं।
11. **संलापक**–इसमें तीन या चार अंक होते हैं। नायक पाखंडी होता है। शृंगार और करुण रस नहीं होते। इसमें नगर के घेरे, संग्राम आदि का वर्णन रहता है।
12. **श्रीगदित**–इसमें कथा प्रसिद्ध होती है। यह एक अंक का होता है। नायक धीरोदात्त और नायिका प्रख्यात होती है।
13. **शिल्पक**–इनमें चार अंक होते हैं। शांत और हास्य के अतिरिक्त अन्य रस होते हैं। नायक ब्राह्मण होता है। इसमें मरघट, मुर्दे आदि का वर्णन रहता है।
14. **विलासिका**–यह शृंगार-बहुल, एक अंक वाली, विदूषक विट पीठमर्द से विभूषित, हीनगुण नायक से युक्त, छोटी कथावली होती है।
15. **दुमल्लिका**–इसमें चार अंक होते हैं। पहले अंक में विट की क्रीड़ा, दूसरे में विदूषक का विलास, तीसरे में पीठमर्द का विलास-व्यापार और चौथे में नागरिकों की क्रीड़ा रहती है। इन चारों अंकों का व्यापार क्रमशः 6, 10, 12 और 20 घड़ी का होता है। इसमें पुरुष पात्र सब चतुर होते हैं पर नायक छोटी जाति का होता है।
16. **प्रकरणिका**–इसमें नायक व्यापारी होता है। नायिका उसकी सजातीया होती है। शेष बातों में यह प्रकरण के सदृश होती है।
17. **हल्लीश**–इसमें एक ही अंक होता है। साथ में दस तक स्त्रियाँ होती हैं और एक उदात्त वचन बोलने वाला पुरुष रहता है। इसमें गाने, ताल और लय अधिक होते हैं।
18. **भणिका**–इसमें भी एक अंक होता है। नायक मंदमति तथा नायिका उदात्त और प्रगल्भा होती है।

इन सब रूपकों और उपरूपकों की मूल प्रकृति यद्यपि नाटक के अनुसार है तथापि इनमें औचित्य के अनुसार नाटक के यथासंभव अंगों का समावेश होता है। रूपकों या उपरूपकों से युक्त सभी भेद हिंदी में सुलभ नहीं हैं। उनमें भी जो मिलते हैं उन सभी को 'नाटक' ही कहा जाता है। अंग्रेजी के 'वन ऐक्ट प्ले' के अनुकरण पर बने छोटे-छोटे नाटक 'एकांकी नाटक' या 'एकांकी' कहे जाते हैं। हिंदी में अनेक एकांकी बन चुके हैं और निरंतर बनते जा रहे हैं। रूपकों में भाण, व्यायोग, वीथी, ईहामृग और अंक या उत्सृष्टिकांक तथा उपरूपकों में गोष्ठी, नाट्यरासक उल्लाप्य, काव्य, रासक, प्रेखण, श्रीगदित, विलसका, हल्लीश और भणिका भी एक अंक के ही होते हैं, किंतु इन सबकी अलग-अलग विशेषता होती है। आजकल के एकांकी भी नाटक नामधारी हैं। उनके विषय

नोट

व पात्र के विचार से उक्त रूपकों तथा उपरूपकों के सदृश निश्चित विशिष्टता नहीं है कि उनका वर्गीकरण संभव हो सके। फिर भी उनमें कुछ को किसी उपरूपक के अंतर्गत रखा जा सकता है। एकांकी के कथानक का एक ही लक्ष्य होता है। इससे उसी की सिद्धि करने वाले प्रसंग रहते हैं। इसमें कथोपकथन घटना आदि में अनावश्यक विस्तार नहीं होता।

कुछ नाटक गद्य-पद्य मिश्रित न होकर केवल पद्यात्मक या गीतों में होते हैं। उन्हें 'गीति-नाट्य' कहा जाता है। भावों के विविध रूपों का निरूपण 'भावनाट्य' में होता है। अंग्रेजी के 'मोनो ड्रामा' को आदर्श मानकर अब ऐसे छोटे नाटक भी बनने लगे हैं जिनमें बहुधा एक ही पात्र होता है। सेठ गोबिंददास के चार एकांकियों के संग्रह 'चतुष्पथ' में ऐसा प्रयोग भी किया गया है जिसमें कोई मनुष्य और उसका घोड़ा नाटक के पात्र हैं। उसके अंतर्गत 'शाप और वर' में एक दंपती ही पात्र हैं। इस प्रकार एक या दो पात्रों के भी एकांकी बनने लगे हैं।

इसके अतिरिक्त सिनेमा में प्रदर्शित नाटक और रेडियो तथा दूरदर्शन द्वारा प्रसारित नाटकों की विशिष्ट रचना-शैली होती है। रेडियो के नाटक का अभिनय दर्शक नहीं देखता, स्टूडियो में हो रही ध्वनियों, बातचीत आदि को सुनकर उसके दृश्य की कल्पना भी करता चलता है। परंतु दूरदर्शन (टेलीविजन) में परदे पर उन दृश्यों का साक्षात्कार करने के साथ अभिनय, क्रियाकलाप, वार्तालाप आदि देख व सुन सकता है।

श्रव्य काव्य

शैली भेद से श्रव्य काव्य को गद्य और पद्य दो विभागों में बाँटा जा सकता है। गद्य काव्य के अंतर्गत कथा, कहानी, आख्यायिका, उपन्यास, निबंध आदि आते हैं। इनके अतिरिक्त ऐसी रचनाएँ भी आती हैं जिन्हें 'पद्य-काव्य' या 'गद्य-मुक्तक' कहा जाता है, परंतु गद्य-काव्य को छोड़ गद्य की अन्य विधाओं की प्रचलित सीमा के भीतर नहीं रखा गया।

प्रबंध की दृष्टि से पद्य काव्य के (1) मुक्तक, और (2) प्रबंध ये दो भेद किये जाते हैं। 'मुक्तक' काव्य ऐसी रचना को कहते हैं जिसके एक छंद का भाव दूसरे से 'मुक्त' या 'निरपेक्ष' हो उसमें किसी भाव दशा या विचार का पूरा-पूरा उल्लेख हो जाता है। बिहारी, तुलसी, वृंद, रहीम, वियोगी हरि आदि की सतसइयों के दोहे मुक्तक काव्य के उदाहरण हैं।

मुक्तकों में कुछ रचनाएँ गीत के रूप में होती हैं। उन्हें 'गीति काव्य' कहते हैं। सूरदास का सूरसागर गीतों में ही है। तुलसी की 'विनयपत्रिका' और 'गीतावली' भी गीतों में है। पर इनमें प्रबंध का भी निर्वाह हुआ है। मीरा की पदावली, महादेवी वर्मा, निराला, पंत आदि की रचनाओं में गीति-काव्य के उदाहरण मिलते हैं।

'प्रबंध' में क्रमबद्ध या पूर्वापर-संबद्ध घटना तथ्य आदि का वर्णन होता है। कोई कथानक धारावाहिक रूप से वर्णित होता है। उसके छंदों में कही गयी बात परस्पर संबद्ध होती है। वे छंद एक-दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते। यदि ऐसा किया जाए तो उनका भाव पूर्णतया स्पष्ट नहीं होता। 'मुक्तक' में एक छंद स्वतः पूर्ण होता है। 'प्रबंध' में ऐसा नहीं होता। तुलसी का 'रामचरितमानस', जायसी का 'पद्मावत', हरिऔध का 'प्रिय-प्रवास', मैथिलीशरण गुप्त का 'साकेत', गुरुभक्तसिंह की 'नूरजहाँ', श्याम नारायण पांडेय की 'हल्दीघाटी' आदि प्रबंध काव्य के उदाहरण हैं।

प्रबंध-काव्य के भेद–खंडकाव्य और महाकाव्य

प्रबंध के विस्तार की दृष्टि से प्रबंध काव्य के दो भेद किये जाते हैं–(1) खंडकाव्य, और (2) महाकाव्य।

खंडकाव्य–इसमें मानव-जीवन के किसी अंश (वृत्तांत आदि) का वर्णन होता है, उसकी संपूर्ण व्यापकता का नहीं। मैथिलीशरण गुप्त के 'जयद्रथ-वध', 'पंचवटी', 'विरहिणी ब्रजांगना' आदि, रामनरेश त्रिपाठी के 'पथिक', 'मिलन', और 'स्वप्न', सियारामशरण गुप्त का 'मौर्य विजय' तथा हमारी 'अग्रपूजा' खंडकाव्य है। महाकाव्य में जीवन का विस्तृत और पूर्ण वर्णन होता है। उसमें खंडकाव्य की अपेक्षा आकार की दीर्घता के साथ वर्ण्य विषय की व्यापकता भी रहती है। तुलसी का 'रामचरितमानस', जायसी की 'पद्मावत' और रामचरित उपाध्याय का 'रामचरितचिंतामणि' हिंदी के पुराने और कामायनी, लोकायतन आदि कुछ नये महाकाव्य हैं। महाकाव्य के सभी

नोट

लक्षणों से युक्त न होने पर भी रचना उसके ही ढंग से लिखी जाती है, वह काव्य कही जाती है। यथा–'प्रिय-प्रवास', 'साकेत', 'हल्दीघाटी'। कभी-कभी ऐसी कृतियाँ भी अज्ञान और किसी विशेष प्रयोजन से महाकाव्य कह दी जाती हैं।

महाकाव्य–पद्यबद्ध यह रचना सर्गों में बँधी है। इसका नायक धीरोदात्त गुणान्वित देवता या सद्वंश जात क्षत्रिय होता है। नायक एक होता है, अनेक भी होते हैं। इसका प्रधान रस श्रृंगार, वीर या शांत होता है। अन्य रस भी रहते हैं, पर वे प्रधान रस (अंगी) के अंगरूप होते हैं। कथा, इतिहास या लोक में प्रसिद्ध सज्जन के विषय की होती है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष–इनमें कोई इसका फल होता है। आरंभ में नमस्कार, आशीर्वाद या वर्ण्य वस्तु का निर्देश होता है। कहीं खलों की निंदा और सज्जनों का गुण वर्णन होता है; न बहुत छोटे न बहुत बड़े आठ से अधिक सर्ग होते हैं। उनमें प्रत्येक में एक ही छंद का प्रयोग होता है, किंतु प्रत्येक सर्ग का अंतिम छंद उससे भिन्न होता है। कहीं-कहीं एक ही सर्ग में नाना छंद प्रयुक्त होते हैं। सर्ग के अंत में अगले सर्ग की कथा की सूचना होती है। इसमें प्रातःकाल, मध्याह्न, संध्या, सूर्य, चंद्रमा, रात्रि, प्रदोष, अंधकार, दिन, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, संयोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नरक, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह, मंत्र, पुत्र, अभ्युदय आदि का यथासंभव सांगोपांग वर्णन होता है। इसका नाम कवि, वृत्ति नायक के नाम से अथवा अन्य प्रकार से रखा जाता है। सर्गों का नाम संख्या, कथा-प्रसंग के आधार पर अथवा आख्यान-संज्ञक होता है।

अग्निपुराण (337/137-39) के अनुसार जिस महाकाव्य के सर्ग में विविध छंदों का प्रयोग होता है उसको 'आभासोपम शक्ति' नाम दिया गया है। इसके दो भेद–मिश्र और प्रकीर्ण होते हैं। जिस महाकाव्य में श्रव्य और अभिनय दोनों के लक्षण हों, वह 'मिश्र' कहलाता है; दया सकल (मृदु और मंद स्वर वाली) उक्तियों से युक्त काव्य 'प्रकीर्ण' कहा जाता है। मिश्र अभिनय (नाट्य) महाकाव्य में महाकाव्य के लिए अपेक्षित सभी तत्व तो होते हैं, साथ ही प्रसंग ऐसे ढंग से प्रस्तुत किये जाते हैं कि उनका अभिनय भी हो सकता है। 'रामचरितमानस' में अनेक प्रभावशाली और अच्छे नाटकीय प्रसंग संवाद दृश्य आदि हैं। रामलीला में तो 'मानस' का ही अधिकतर प्रयोग होता है। रामनगर (काशी) की रामलीला के समान कहीं-कहीं अन्यत्र भी खुले मैदानों में और रंगमंचों पर भी उसी का आश्रय लिया जाता है। अब उसका उपयोग रेडियो से प्रसारित रूपकों में भी हो रहा है। अतएव उसे इसी कोटि का महाकाव्य कहा जाना चाहिये, भले ही वह संस्कृत के महाकाव्य की शैली में नहीं रचा गया। उसकी पद्मावत, रामचंद्रिका आदि की तथा हिंदी के अन्य प्राचीन और अनेक आधुनिक महाकाव्यों की रचना संस्कृत महाकाव्य उपर्युक्त सभी लक्षणों के अनुरूप नहीं हुई है।

टास्क श्रव्यकाव्य पर संक्षिप्त प्रकाश डालें।

कुछ और भेद

अन्य दृष्टियों से भी काव्य के दो भेद किये जा सकते हैं–(1) कुछ काव्यों में कवि की भावनाओं और अनुभूतियों का वर्णन होता है और (2) कुछ में जाति और युग की चिरंतन भावनाओं और अनुभूतियों का उल्लेख किया जाता है। ये दूसरे प्रकार के काव्य मानव मात्र के शाश्वत और चिरंतन भावों और उद्गार को अभिव्यक्त करने के कारण अधिक स्थायी और सार्वजनिक होते हैं। इन आत्मानुभूति-निरूपक और सार्वजनिक भावों के प्रदर्शक काव्य को क्रमशः भाव प्रदर्शक और विषय-निरूपक काव्य भी कहा जा सकता है। इनके अतिरिक्त (3) वर्णनात्मक काव्य भी होते हैं। कुछ अंग्रेजी विद्वान (4) कला-काव्य और (5) शक्ति-काव्य की भी कल्पना करते हैं। कला-काव्य आनंद देता और मनबहलाव करता है और शक्ति काव्य लोक की प्रवृत्ति का संचालन करता है।

ध्वनि, गुणीभूत व्यंग्य और चित्र या अलंकार काव्य

नोट

इन भेदों के अतिरिक्त रमणीयता के अनुसार काव्य के तीन प्रकार माने जाते हैं–

1. जिस कविता में शब्दों के साधारण अर्थ की अपेक्षा उनसे निकलने वाले व्यंग्य में अधिक चमत्कार हो, उसे 'ध्वनि-काव्य' कहते हैं। जैसे–प्राण त्याग कर रहे जटायु से राम ने कहा कि –

   सीता हरन तात जनि कहेउ पिता सन जाइ।
   जो मैं राम तो कुल सहित कहिहि दसानन आइ॥ *(मानस) (3/31)*

   इसमें व्यंग्य यह है कि मैं रावण और उसके समस्त कुल का शीघ्र ही अंत कर दूँगा अर्थात् उस अकेले को ही नहीं, उसके कुटुंब भर को मारूँगा। इस प्रकार मैं उससे सीता-हरण का बदला लेकर अपने स्वर्गस्थ पिता को दिखा दूँगा कि मैं उनका सपूत हूँ। तभी मेरा नाम (राम) सार्थक होगा। इस ध्वनि के कारण इस उक्ति में राम के शौर्य की पूरी झलक देखने को मिलती है। इससे आनंद का असाधारण संचार होता है।

2. जहाँ–(क) व्यंग्यार्थ की प्रधानता न हो या (ख) शब्दों का साधारण अर्थ और व्यंग्यार्थ दोनों ही समान हों या (ग) व्यंग्यार्थ साधारण (वाच्य) अर्थ से न्यून हो वह गुणीभूत व्यंग्य होता है। इसमें व्यंग्य गुणीभूत अर्थात् अप्रधान होता है; जैसे–धनुषयज्ञ के मंडप में श्रीराम को देखकर–

   प्रभुहि देखि सब नृप हिय हारे, जनु राकेश उदय भएँ तारे।
   अस प्रतीत सबके मन माही, राम चाप तोरब सक नाहीं॥
   बिनु भंजेहु भव धनुष बिसाला, मेलिहि सिय राम उर माला।
   अस विचारि गवनहु घर भाई, जसु प्रतापु बलु तेजु गँवाई।
   बिहसे अपर भूप सुनि बानी, जे अविवेक अंध अभिमानी।
   तोरेहु धनुष ब्याह अवगाहा, बिनु तोरे को कुँअरि विहाहा।
   एक बार कालहु किन होऊ, सिय हित समर जितब हम सोऊ।
   यह सुनि अवर महिप मुसुकाने, धरमशील हरिभगत सयाने॥

   (मानस, 1/245/108)

   धनुष तोड़ सकने में ही नहीं, उठा सकने तक में असमर्थ अविवेकांध, अभिमानी राजाओं का यह कहना कोरी कल्पना थी कि राम धनुष तोड़ने पर भी सीता से ब्याह न कर पायेंगे। हम सीता के लिए एक बार काल को भी जीत लेंगे। मूर्खतापूर्ण इस डींग के प्रति घृणा और तिरस्कार का सूचक गुणीभूत अप्रकट व्यंग्य धर्मात्मा राजाओं के 'मुसकाने' में हैं।

3. जिसमें केवल शब्दों के अर्थ का चमत्कार हो, केवल शब्दों की सजावट (जैसे–अनुप्रास, यमक आदि अलंकार) का ध्यान हो वह चित्र व अलंकार काव्य कहलाता है। इसे अवर (अधम) काव्य भी कहते हैं।

चित्र काव्य के अंतर्गत ऐसी रचनाएँ भी होती हैं जिनमें अक्षर इस ढंग से लिखे हैं कि उनका आकार कमल, कामधेनु, धनुष, खड्ग आदि कुछ वस्तुओं का-सा बन जाता है। ऐसा होने से उक्ति के अर्थ की सुंदरता की ओर ध्यान नहीं जाता, केवल उसके शब्दों की सजावट तक रह जाता है।

इन भेदों में 'ध्वनि काव्य उत्तम', गुणीभूत 'व्यंग्य' मध्यम और 'चित्र', 'अलंकार' या 'अवर' काव्य निम्न कोटि का माना जाता है।

आगे शब्द-शक्ति के प्रकरण में इन तीनों प्रकारों को समझने में सहायता मिलेगी।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. मैथिलीशरण गुप्त का काव्य है '........................ वध'।
   (क) जयद्रथ (ख) दुर्योधन (ग) दशासन (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. 'वीथी में' .... की अधिकता रहती है।
   (क) शृंगार रस (ख) वीर रस (ग) हास्य रस (घ) रौद्र रस
7. नाटिका में .... होते हैं।
   (क) दो अंक (ख) चार अंक (ग) छह अंक (घ) एक अंक
8. पद्यात्मक या गीतों वाले नाटक .... कहलाते हैं।
   (क) गीति-नाट्य (ख) भाव-नाट्य (ग) चतुष्पथ (घ) इनमें से कोई नहीं।

9.4 सारांश (Summary)

- सुंदरता में सहज आकर्षण होता है। किसी भी सुंदर वस्तु की ओर सब स्वतः अनायास ही खिंच जाते हैं। उसे देखकर जो मानसिक तृप्ति मिलती है, जिस आनंद का अनुभव होता है, वह लाख चेष्टा करने पर भी ज्यों का त्यों यथा-अनुभूत न तो वाणी से कहा जा सकता है और न लेखनी से ही प्रकट किया जा सकता है।
- किसी मनभावनी उक्ति को बार-बार सुनने या पढ़ने से मन थकता नहीं, प्रत्युत उसमें बार-बार नया रस मिलता है। इस प्रकार की रचना, चाहे गद्य में हो, चाहे पद्य में, सुनते या पढ़ते ही हृदय में ऐसा आनंद उत्पन्न करती है जो कहा नहीं जा सकता, वर्णनातीत होता है। ऐसी कर्ण-सुखद, अर्थ-सौष्ठव से पूर्ण प्रभावशाली व हृदयस्पर्शी उक्ति ही 'कविता' कहला सकती है।
- सरल और सरस शब्दों में व्यक्त, मन को मुग्ध करने वाले ऐसे उच्च भावों को कविता कहते हैं जिनमें श्रोता या पाठक के विचार देश या काल की सीमा को लाँघकर सृष्टि के सभी पदार्थों से तादात्म्य का अनुभव करने लगे।
- काव्य के अंतर्गत उन्हीं रचनाओं की गणना होती है जिनमें ऊपर कहे गये शब्द और अर्थ से युक्त कवित्व के मूल तत्व विद्यमान हों। ऐसी रचनाएँ गद्य और पद्य दोनों में हो सकती हैं। महाकवि तुलसी का पद्यात्मक 'रामचरितमानस' या श्री मैथिलीशरण गुप्त का 'जयद्रथ-वध' काव्य हैं।
- प्रयोजन अथवा स्वरूप के विचार से काव्य के–(1) दृश्य और श्रव्य दो भेद किये जाते हैं। श्रव्य केवल सहृदय के मन पर प्रभाव डालता है, परंतु दृश्य काव्य सामान्य जन के हृदय-पटल पर भी अपनी छाप अंकित करता है।
- शैली भेद से श्रव्य काव्य को गद्य और पद्य दो विभागों में बाँटा जा सकता है। गद्य काव्य के अंतर्गत कथा, कहानी, आख्यायिका, उपन्यास, निबंध आदि आते हैं।
- प्रबंध की दृष्टि से पद्य काव्य के (1) मुक्तक, और (2) प्रबंध ये दो भेद किये जाते हैं। 'मुक्तक' काव्य ऐसी रचना को कहते हैं जिसके एक छंद का भाव दूसरे से 'मुक्त' या 'निरपेक्ष' हो उसमें किसी भाव दशा या विचार का पूरा-पूरा उल्लेख हो जाता है।
- प्रबंध के विस्तार की दृष्टि से प्रबंध काव्य के दो भेद किये जाते हैं–(1) खंडकाव्य, और (2) महाकाव्य।

नोट

9.5 शब्दकोश (Keywords)

मनमोहक – मन को मोहने वाला

नयनाभिराम – नेत्रों को अच्छा लगने वाला

भावाभिव्यक्ति – भावों की अभिव्यक्ति

9.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. काव्य किसे कहते हैं? काव्य के रूपों का वर्णन कीजिए।
2. काव्य के भेदों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. रूपक के संस्कृत साहित्य में कितने भेद हैं? उल्लेख कीजिए।
4. प्रबंध-काव्य के भेद-खंडकाव्य और महाकाव्य का वर्णन कीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. पर्यायवाचक	2. आकर्षण	3. पद्य-बद्ध	4. अपरिमित
5. (क)	6. (क)	7. (ख)	8. (क)।

9.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*
2. मुग्धबोध हिंदी व्याकरण–*कृष्ण नारायण प्रसाद मागध।*
3. हिंदी व्याकरण की अभ्यास पुस्तिका–*जी.पी. शर्मा, ओरिएंट ब्लैक स्वान।*

नोट

इकाई–10 : महाकाव्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
10.1 महाकाव्य के संबंध में विभिन्न दृष्टिकोण
10.2 संस्कृत के महाकाव्य
10.3 प्राकृत एवं अपभ्रंश के महाकाव्य
10.4 हिंदी के महाकाव्य
10.5 सारांश (Summary)
10.6 शब्दकोश (Keywords)
10.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
10.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- महाकाव्य के संबंध में विभिन्न दृष्टिकोणों को जानने में।
- संस्कृत एवं अपभ्रंश के महाकाव्य को जानने में।
- हिंदी के महाकाव्य को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'महाकाव्य' शब्द ही 'महत्' और 'काव्य' इन दो शब्दों के समास से व्युत्पन्न है। भारतीय साहित्य के काव्य के साथ 'महत्' विशेषण का प्रयोग सर्वप्रथम वाल्मीकिकृत रामायण के उत्तरकांड में मिलता है, जहाँ राम ने लव-कुश से प्रश्न किया था।

किंप्रमाणमिदं काव्यं का प्रतिष्ठा महात्मनः।
कर्त्ता काव्यस्य महतः क्व चासौ मुनिपुँगवः॥

अर्थात् यह काव्य कितना बड़ा है और किस महात्मा की प्रतिष्ठा है? इस महत् काव्य के रचयिता श्रेष्ठ मुनि कहाँ हैं? यहाँ 'कर्त्ता काव्यस्य महतः' महाकाव्य शब्द की ओर संकेत करता है। साथ ही इसमें महाकाव्य के तीन मूल लक्षणों की भी ध्वनि मिलती है–(1) आकार-प्रकार में बड़ा होता है। (2) उसमें किसी महात्मा या महापुरुष की प्रतिष्ठा का चित्रण किया जाता है और (3) उसका रचयिता कोई श्रेष्ठ मुनि या उच्चकोटि का साधक कवि होता है।

10.1 महाकाव्य के संबंध में विभिन्न दृष्टिकोण

भारतीय दृष्टिकोण

संस्कृत आचार्यों में महाकाव्य के स्वरूप की सर्वप्रथम विस्तृत व्याख्या करने का श्रेय आचार्य भामह को है, जिन्होंने अपने 'काव्यालंकार' में बंध की दृष्टि से काव्य के पाँच भेद किये हैं–1. सर्गबद्ध, 2. नाटक,

नोट

3. आख्यायिका, 4. कथा और 5. अनिबद्ध (मुक्तक) काव्य। सर्गबद्ध का ही दूसरा नाम महाकाव्य है। उनके मतानुसार इसमें किसी महान विषय का निरूपण होना चाहिए। उनमें ग्राम्य शब्दों का परिहार, अर्थ का सौंदर्य, अलंकारों का प्रयोग और सच्ची या उच्चकोटि की कहानी का वर्णन होना आवश्यक है। उसमें राजदरबार, दूत, आक्रमण, युद्ध आदि का चित्रण होता है तथा अंत में नायक का अभ्युदय दिखाया जाता है। नाटक की पाँचों संधियों का आयोजन भी उसमें किया जाता है। साथ ही उसका कथानक उत्कर्षपूर्ण होते हुए भी अधिक व्याख्या की अपेक्षा नहीं करता। उसमें काव्यगत सौंदर्य के साथ चारों वर्गों–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का निरूपण होता है, फिर भी प्रधानता अर्थ को दी जाती है। उसके वर्णन में 'लोक-स्वभाव' या स्वाभाविकता का गुण विद्यमान रहता है तथा उसमें सभी रसों का पृथक्-पृथक् निरूपण होता है। प्रारंभ में नायक का कुल, शक्ति प्रतिभा या विद्वत्ता के आधार पर उत्कर्ष दिखाकर अंत में किसी अन्य पात्र की सफलता के निमित्त उसका वध दिखाना अनुचित है। यदि नायक को सर्वाधिक प्रभावशाली या अंत में उसे सफल सिद्ध नहीं किया गया तो उसके प्रारंभिक अभ्युदय का कोई महत्त्व नहीं है, अतः महाकाव्य के अंत में नायक को विजयी दिखाना आवश्यक है। (काव्यालंकार–1/18-23)।

भामह के परवर्ती आचार्यों में से अनेक ने महाकाव्य के स्वरूप पर प्रकाश डाला है, किंतु उसमें अधिक मौलिकता नहीं मिलती है। प्रायः सभी ने भामह के ही लक्षणों का पिष्टपेषण किया है। दंडी ने अपने 'काव्यादर्श' में महाकाव्य के आरंभ में आशीर्वाद, नमस्क्रिया और वस्तु-निर्देश की ओर संकेत करने की नई बात कही है। आगे चलकर साहित्य-दर्पणकार विश्वनाथ ने अवश्य भामह की व्याख्या को आगे बढ़ाते हुए इसके लक्षणों की लंबी सूची प्रस्तुत की है–"जिसमें सर्गों का निबंधन हो, वह महाकाव्य कहलाता है। इसमें एक देवता या सद्वंश क्षत्रिय–जिसमें धीरोदात्तत्वादि गुण हों, नायक होता है। कहीं एक वंश के सत्कुलीन अनेक भूप भी नायक होते हैं। शृंगार, वीर और शांत में से कोई एक रस अंगी होता है, अन्य रस गौण होते हैं। सब नाटक-संधियाँ रहती हैं। इसकी कथा ऐतिहासिक या किसी लोक-प्रसिद्ध सज्जन से संबंध रखने वाली होती है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष–इनमें से कोई एक उसका फल होता है। आरंभ में आशीर्वाद, नमस्कार या वर्ण्य वस्तु का निर्देश होता है। कहीं खलों की निंदा और सज्जनों के गुणों का वर्णन होता है। कहीं-कहीं सर्ग में अनेक छंद मिलते हैं। सर्ग के अंत में अगली कथा की सूचना होनी चाहिए। इसमें संध्या, सूर्य, चंद्रमा, रात्रि, प्रदोष, अंधकार, दिन, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, षड्ऋतु, वन, समुद्र, संयोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह मंत्र, पुत्र और अभ्युदय आदि का यथासंभव सांगोपान वर्णन होना चाहिए। इसका नामकरण कवि के नाम या चरित्र के नाम अथवा चरित्र-नायक के नाम के आधार पर होना चाहिए। कहीं इनके अतिरिक्त भी नामकरण होता है, जैसे भट्टि। सर्ग की वर्णनीय कथा के आधार पर सर्ग का नाम रखा जाता है। संधियों के अंग वहाँ यथासंभव रखे जाने चाहिए। यदि एक या दो भिन्न वृत्त हों तो भी कोई हर्ज नहीं है। जलक्रीड़ा, मधुपानादिक सांगोपांग होने चाहिए। महाकाव्य के उदाहरण जैसे 'रघुवंशादि' (साहित्य-दर्पण, अध्याय 6/3 15–324)। भामह और विश्वनाथ के महाकाव्य संबंधी लक्षणों की तुलना से स्पष्ट होगा कि परवर्ती आचार्य ने केवल संख्या-विस्तार कर दिया है, महाकाव्य की मूल प्रकृति के संबंध में दोनों के दृष्टिकोणों में विशेष अंतर नहीं मिलता है। अस्तु, दोनों की व्याख्याओं का निष्कर्ष संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है–

(1) महाकाव्य की कथावस्तु का आधार व्यापक होता है जिससे उसमें जीवन, जगत और प्रकृति के विभिन्न अंगों का विस्तृत रूप में चित्रण संभव हो सके।

(2) उसका नायक एक ऐसा आदर्श और महान व्यक्ति होता है जिससे वह पाठकों की श्रद्धा प्राप्त कर सके तथा उन्हें कोई संदेश दे सके।

(3) उसमें मानव-हृदय की सभी प्रमुख चित्त-वृत्तियों, भावनाओं आदि का चित्रण होना चाहिए।

(4) सारा कथानक सर्गों में विभाजित तथा संधियों से युक्त हो जिससे उसमें प्रबंधत्व का गुण आ सके।

(5) उसकी शैली में काव्य-सौष्ठव व काव्य के सभी प्रमुख गुणों का विकास होना चाहिए।

नोट

पाश्चात्य दृष्टिकोण

पश्चात्य विद्वानों ने भी महाकाव्य (Epic) को गौरवपूर्ण स्थान देते हुए उसके स्वरूप की विभिन्न प्रकार से व्याख्या की है। प्रसिद्ध यूनानी आलोचक अरस्तू (Aristotle) ने अपने काव्य-शास्त्र (Poetics) में लिखा है कि ''महाकाव्य ऐसे उदात्त व्यापार का काव्यमय अनुकरण है: जो स्वत: गंभीर एवं पूर्ण हो, वर्णनात्मक हो, सुंदर शैली में रचा गया हो, जिसमें आद्यंत एक छंद हो, जिसमें एक ही कार्य हो जो पूर्ण हो, जिसमें प्रारंभ, मध्य और अंत हो, जिसके आदि और अंत एक दृष्टि में समा सकें, जिसके चरित्र श्रेष्ठ हों, कथा संभावनीय हो और जीवन के किसी एक सार्वभौम सत्य का प्रतिपादन करती हो।''

यद्यपि स्थूल दृष्टि से भारतीय तथा यूरोपीय महाकाव्य के लक्षणों में गहरा साम्य दृष्टिगोचर होता है, किंतु मूल प्रकृति की दृष्टि से दोनों में गहरा अंतर भी है। भारतीय महाकवियों ने जहाँ जीवन को समष्टि रूप में ग्रहण करते हुए तथा मंगलमयी भावनाओं का प्राधान्य दर्शाते हुए महाकाव्य का अंत सत्यं, शिवं तथा सुंदरम् में किया है, वहाँ पाश्चात्य काव्य-रचयिताओं ने अपने दृष्टिकोण को इहलोक की विभूति तक ही सीमित रखते हुए उसमें अनिवार्य रूप से उपस्थित होने वाले दैवी क्लेशों में ही जीवन का पटाक्षेप किया है। भारतीय जीवन में आध्यात्मिकता, आदर्शवादिता एवं समन्वयात्मकता की प्रधानता रही है। जबकि पाश्चात्य जीवन में भौतिकता, यर्थाथवादिता एवं विश्लेषणात्मकता को प्रमुखता प्राप्त है, अत: इसी के अनुरूप उनके महाकाव्यों में अंतर मिलना स्वाभाविक है। भारतीय महाकाव्यों में सत् की असत् पर विजय, पवित्र भावनाओं का विकास व नायक के उत्कर्ष तथा कथा की सुखमय परिणति पर बल दिया गया है, जबकि पाश्चात्य महाकाव्यों में इनसे विरोधी तत्वों का चित्रण मिलता है। पाश्चात्य महाकाव्यों में नायक के व्यक्तित्व की अपेक्षा जातीयता पर अधिक बल दिया गया है। पश्चिम में देवों को क्रूर माना गया है, जो मानव के उत्पीड़न से प्रसन्न होते हैं, भारतीय महाकाव्यों में उत्पीड़न केवल चरित्र की परीक्षा के लिए होता है, अकारण नहीं। अस्तु, यूरोपीय महाकाव्य की प्रकृति का पता महाकवि **होमर** के दिये गये इस संदेश से भली-भाँति चल जाता है–''निर्बल मनुष्य के लिए देवताओं ने भाग्य का यही पट बुना है, उनकी इच्छा है कि मनुष्य सदा क्लेश में जियें और वे स्वयं (देवता) सदा आनंद में रहें।''

नोट्स महाकाव्य की कथावस्तु का आधार व्यापक होता है जिससे उसमें जीवन, जगत और प्रकृति के विभिन्न अंगों का विस्तृत रूप में चित्रण हो सके।

आधुनिक दृष्टिकोण

आधुनिक युग में महाकाव्य के स्वरूप एवं लक्षणों के संबंध में हमारे आलोचकों एवं कवियों के दृष्टिकोण में पर्याप्त विकास हुआ है। **आचार्य रामचंद्र शुक्ल** ने पूर्ववर्ती संस्कृत-आचार्यों के निर्धारित लक्षणों की उपेक्षा करते हुए उसके केवल चार तत्त्वों को महत्त्व दिया है–(1) इतिवृत्त, (2) वस्तु-व्यापार वर्णन, (3) भावव्यंजना और (4) संवाद। शुक्लजी के विचारानुसार महाकाव्य का इतिवृत्त व्यापक होने के साथ-साथ सुसंगठित भी होना चाहिए। उसमें ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का वर्णन होना चाहिए जो हमारी भावनाओं को तरंगित कर सके। कवि की भावव्यंजना में हृदय को आंदोलित कर सकने की क्षमता होनी चाहिए। महाकाव्य के संवादों में रोचकता, नाटकीयता और औचित्य का गुण होना अनिवार्य है। इनके अतिरिक्त संदेश की महानता और शैली की प्रौढ़ता भी महाकाव्य के दो आवश्यक तत्व हैं–यद्यपि शुक्लजी ने इनका स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया है, किंतु उनके द्वारा की गई विभिन्न महाकाव्यों की समीक्षा से यह तथ्य प्रमाणित हो जाता है।

शुक्लजी का महाकाव्य-संबंधी मानदंड मुख्यत: तुलसीकृत 'रामचरितमानस' पर आधारित है, जो द्विवेदीयुगीन रचनाओं पर भी लागू हो जाता है; किंतु परवर्ती युगों के महाकाव्य के लिए उनका मानदंड उपयुक्त नहीं रहता। छायावादी युग की रचनाओं में कामायनी आदि ग्रंथ ऐसे हैं, जिन्हें हम महाकाव्य के नवीनतम स्वरूप के प्रतिनिधि के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। इन ग्रंथों में इतिवृत्त बिलकुल संक्षिप्त और सूक्ष्म मनोविश्लेषण एवं उनकी हृदयगत

भावनाओं में अभिव्यंजना की प्रमुखता है; बाह्य-संघर्ष के स्थान पर मानसिक संघर्ष का चित्रण है तथा प्राचीन कथानकों के आधार पर वर्तमान युग की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए महान संदेश दिया गया है। अत: इसमें कोई संदेह नहीं कि स्थूल विशेषताओं एवं शास्त्रीय लक्षणों की दृष्टि से महाकाव्य का नवीनतम रूप अपने मूल रूप से बहुत कुछ परिवर्तित हो गया है। इसी को ध्यान में रख डॉ. नगेंद्र ने महाकाव्य के देशकाल निरपेक्ष पाँच लक्षण प्रस्तुत किए हैं जो सर्वमान्य होने चाहिए–(1) उदात्त कथानक (2) उदात्त कार्य (3) उदात्त भाव (4) उदात्त चरित्र और (5) उदात्त शैली। किंतु उसकी प्रकृति का मूल गुण–महाकवि द्वारा महान-पात्र या संदेश को प्रस्फुटित करने वाली महान काव्य-रचना अब भी उसमें सुरक्षित है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. महाकाव्य के स्वरूप की सर्वप्रथम व्याख्या करने का श्रेय संस्कृत आचार्य .... को है।
2. .... महर्षि वाल्मीकि की सुंदर कृति है।
3. महाभारत .... पर्वों में विभक्त है।
4. शुक्लजी का महाकाव्य-संबंधी मानदंड तुलसीकृत .... पर आधारित है।

10.2 संस्कृत के महाकाव्य

भारतीय महाकाव्य-परंपरा का आरंभ रामायण और महाभारत से होता है, यद्यपि इनसे भी पूर्व कुछ महाकाव्य लिखे गए थे, जो अनुपलब्ध हैं। रामायण और महाभारत में पूर्ववर्ती कौन है, इसके संबंध में भी विद्वानों में मतभेद है, किंतु हम प्राचीन धारणा को स्वीकार करते हुए रामायण को ही पूर्ववर्ती मानते हैं। रामायण आदि-कवि वाल्मीकि की सुंदर कृति है, जिसमें राम के चरित्र का गुणगान सात कांडों में किया गया है। इसमें प्रबंधत्व का निर्वाह सम्यक् रूप से हुआ है तथा इसकी शैली सरल किंतु प्रौढ़ है। विद्वानों ने इसे करुण रसप्रधान बताया है, किंतु हमारे विचार से ऐसा मानना उचित नहीं। यह ठीक है कि इसके नायक राम के जीवन में अनेक दु:खद परिस्थितियों एवं घटनाओं का संयोग होता है, किंतु राम उनके समक्ष पराजित, दु:खी या निराश दिखाई नहीं पड़ते। उनमें सर्वत्र अपने प्राचीन आदर्शों की रक्षा का, मर्यादाओं के पालन का तथा विपक्षियों के संहार का उत्साह दिखाई देता है। राम पाठक की दया के आलंबन नहीं, अपितु उसकी श्रद्धा के पात्र बनते हैं। उसे पढ़कर हमें कर्तव्य-पालन की प्रेरणा मिलती है–परिस्थितियों के आगे नतमस्तक होकर भाग्य के क्रूर विधान को स्वीकार कर लेने की नहीं; अत: इस काव्य का प्रधान रस वीर है, करुण नहीं। वैसे अन्य रसों की आयोजना भी इसमें अंगी रूप में हुई है।

महाभारत आकार-प्रकार की दृष्टि से रामायण की अपेक्षा बहुत विस्तृत है तथा यह अठारह पर्वों में विभक्त है। इसकी मुख्य कथा में कौरव और पांडवों के संघर्ष का चित्रण है; किंतु प्रासंगिक रूप में कृष्ण के भी जीवन-चरित्र का वर्णन हुआ है। इसका प्रारंभ वीररस के साथ हुआ है, किंतु अंत शांत में होता है। इसके विभिन्न पर्वों में अनेक उपाख्यानों का संग्रह किया गया है, जिनमें 'नल-दमयंती', 'सवंरण-तप्ता' आदि के उपाख्यान श्रृंगाररस से ओतप्रोत हैं। रामायण की-सी सुसंबद्धता इसमें नहीं मिलती। यद्यपि कला की दृष्टि से रामायण और महाभारत प्रारंभिक काव्य ही हैं, किंतु परवर्ती साहित्य को इन्होंने जिस मात्रा में प्रभावित किया, उतना किसी अन्य रचना ने नहीं किया।

आगे चलकर संस्कृत में अनेक महाकाव्य लिखे गए जिनमें अश्वघोष का 'बुद्धचरित', कालिदास के 'कुमारसंभव' और 'रघुवंश', भारवि का 'किरातार्जुनीय', माघ का 'शिशुपाल वध' श्रीहर्ष का 'नैषधीय चरित' उल्लेखनीय हैं। इन महाकाव्यों में वे प्राय: सभी विशेषताएँ मिलती हैं, जिनके आधार पर विभिन्न आचार्यों ने महाकाव्य के लक्षण निर्धारित किए हैं। अश्वघोष और कालिदास के महाकाव्यों में रससृष्टि के निमित्त भाव-व्यंजना को प्रमुखता प्राप्त है, जबकि परवर्तीयुगीन रचनाओं में आलंकारिकता और ज्ञान प्रदर्शन की प्रवृत्ति मिलती है। कथानक की जैसी

नोट

रोचकता, सुसंबद्धता एवं प्रबंधत्व का जैसा निर्वाह वाल्मीकिकृत रामायण में मिलता है, उसका इन महाकाव्यों में अभाव है। कालिदास से लेकर श्रीहर्ष तक संस्कृत के सभी महाकवियों को कथावस्तु की कोई चिंता नहीं है; उसे अपने भाग्य पर छोड़कर ये धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं। जहाँ अश्वघोष कालिदास प्रत्येक चरण पर सूक्ष्म भावानुभूतियों की व्यंजना में तल्लीन हो जाते हैं, वहाँ भारवि, माघ और श्रीहर्ष प्रत्येक पंक्ति में अलंकारों की झड़ी लगा देते हैं, वस्तुत: संस्कृत के परवर्ती महाकवियों का ध्यान विषय-वस्तु की अपेक्षा शैली के चमत्कार की ओर अधिक है और यही कारण है कि उनमें यथार्थ जीवन की परिस्थितियों, पात्रों के सहज-स्वभाविक रूप और वास्तविक घटनाओं का चित्रण नहीं मिलता है।

10.3 प्राकृत और अपभ्रंश के महाकाव्य

प्राकृत और अपभ्रंश में महाकाव्य-परंपरा और आगे बढ़ी। प्राकृत के महाकाव्यों में 'रावण वही' (रावण वध), 'लीलाबाई' (लीलावती), सिरिचिह्नकव्वं (श्रीचिह्नकाव्य), उसाणिरुद्ध (उषानिरुद्ध), कंस वही (कंस वध) आदि उल्लेखनीय हैं। अपभ्रंश में जैन कवियों द्वारा भी उच्च कोटि के महाकाव्य लिखे गए जिनमें कुछ ये हैं–स्वयंभू (9वीं सदी ई.) के 'पद्मचरित' और 'रिट्ठणेमिचरिउ' में क्रमश: रामायण और महाभारत से कथानक ग्रहण किया गया है। पुष्पदंत (10वीं शती ई.) ने 'महापुराण', 'नागकुमारचरित', 'यशोधराचरित' में अनेक जैनधर्मानुयायी महापुरुषों के चरित्र का गान किया है। आगे चलकर पद्मकीर्ति, धनपाल, वीर, नयनंदि, कनकामर मुनि आदि ने भी पुष्पदंत का अनुकरण करते हुए अनेक चरित्रकाव्य लिखे, जिनमें से कुछ में महाकाव्य की संज्ञा से भूषित होने की क्षमता है। प्राकृत और अपभ्रंश के महाकाव्य मुख्यत: धार्मिक उद्देश्यों से प्रेरित हैं। उनका लक्ष्य जन-साधारण की श्रद्धा को अपने तीर्थंकरों व पौराणिक पात्रों की ओर उन्मुख करना है। अत: उनमें कथानक की रोचकता, पात्रों का औदात्य, सांप्रदायिक शिक्षणों का प्रचार और शैली की सरलता मिलती है। ये महाकाव्य माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों की भाँति कोरे विद्वानों के मनन की ही वस्तु नहीं है, साधारण शिक्षित व्यक्ति भी उनका रसास्वादन कर सकता है।

10.4 हिंदी के महाकाव्य

प्राकृत और अपभ्रंश की महाकाव्य परंपरा हिंदी में और भी अधिक पल्लवित, पुष्पित और विकसित हुई। हमारे कुछ विद्वानों की मान्यता है–"हिंदी में यद्यपि लंबे आकार के अनेक सर्गबद्ध काव्य-ग्रंथों की रचना हुई, किंतु उनमें से केवल कुछ को ही महाकाव्य कहा जा सकता है और सच्चे अर्थ में तो महाकाव्य का प्राय: अभाव ही समझना चाहिए। वास्तव में हिंदी भाषा के संपूर्ण विकास-काल में महाकाव्य की रचना के लिए उपयुक्त वातावरण का अभाव रहा है।" वस्तुत: यह धारणा कुछ निजी भ्रांतियों पर आधारित है, अन्यथा जिस काल में महाराणा प्रताप, शिवाजी, छत्रसाल, गोविंदसिंह, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी, सुभाषचंद्र बोस और जवाहरलाल नेहरू जैसे महापुरुषों का आविर्भाव हुआ, उसे महाकाव्य की रचना के अनुपयुक्त बताना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता। यदि शुष्क निराशावादी दृष्टिकोण को लेकर न चला जाए तो हिंदी में हमें अनेक महाकाव्य–पद्मावत, रामचरितमानस, कामायनी, कुरुक्षेत्र आदि दृष्टिगोचर होंगे, जिन पर किसी भाषा का साहित्य गर्व कर सकता है।

हिंदी के प्रारंभिक काल, आदिकाल या वीरगाथा काल का तो अस्तित्व ही संदिग्ध है। इस युग में रचित मानी जाने वाली रचनाओं में अधिकांश अप्रामाणिक या परवर्ती हैं। इसी कोटि की रचनाओं में 'पृथ्वीराज रासो' भी एक है, जो महाकाव्य की सी महत्ता से संपन्न है। इस ग्रंथ का यह दुर्भाग्य था कि अभी वह साहित्यगगन में पूर्णत: उद्‌भासित भी न हो पाया था कि कुछ इतिहासकारों की क्रूर दृष्टि इस पर पड़ गई फलत: यह ऐतिहासिकता, प्रामाणिकता व स्वाभाविकता आदि ग्रहों की काली छाया से आवृत्त होकर आभा-शून्य हो गया। यदि विशुद्ध साहित्यिक दृष्टिकोण से देखें तो किसी भी रचना का महत्त्व इस बात में नहीं है कि वह किस युग में किस कवि के द्वारा रची गई, अपितु उसकी भावनाओं को तरंगित करने की शक्ति, उसमें निहित काव्य-गुणों की व्यापकता तथा उसकी शैली की प्रौढ़ता में है। यदि 'रामचरितमानस' का रचयिता तुलसी के स्थान पर और कोई सिद्ध हो

जाए और उसके रचनाकाल में दो-तीन शताब्दियाँ आगे-पीछे होने का प्रमाण मिल जाए तो क्या इससे उसका महत्त्व न्यून हो जायेगा? मानस का महत्त्व तुलसी के कारण नहीं, अपितु तुलसी का महत्त्व मानस के कारण है। अत: रासो के रचयिता भी चंद हो या कोई अन्य, वह बारहवीं सदी में रचित हो या सत्रहवीं में—महाकाव्य की दृष्टि से उसके महत्त्व में विशेष अंतर नहीं पड़ता।

क्या आप जानते हैं रामायण आदि कवि वाल्मीकि की सुंदर कृति है जिसमें राम के चरित्र का गुणगान सात कांडों में किया गया है।

'पृथ्वीराज रासो' के विभिन्न आकारों के अनेक संस्करण मिलते हैं, जिनमें सबसे बड़ा संस्करण 69 सर्गों में विभाजित तथा लगभग अढ़ाई हजार पृष्ठ का है। परंपरा के अनुसार इसके रचयिता चंदबरदायी माने जाते हैं, जो चरित-नायक पृथ्वीराज राठौर के मंत्री और सेनापति भी थे। महाकाव्य के प्राचीन लक्षणों के अनुसार इसमें नायक के गौरव को अक्षुण्ण रखने के लिए ऐतिहासिक इतिवृत्त में पर्याप्त परिवर्तन एवं परिवर्द्धन किया गया है। जीवन के व्यापक स्वरूप एवं प्रकृति और जगत् के विस्तृत क्षेत्र को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से इसके रचयिता ने अनेक मौलिक घटनाओं की कल्पना की है, जिससे यह मध्यकालीन जीवन का एक वृहत् चित्रपट बन गया है। यही कारण है कि इसमें तत्कालीन जीवन का सामंती वैभव, सामाजिक आचार-व्यवहार, धार्मिक विधि-विधान एवं उस युग के विभिन्न पर्व, त्योहार और उत्सवादि के उल्लसित दृश्य सजीव रूप में चित्रित हैं। सन् संवत्, राजनीतिक घटनाओं व युद्ध आदि से संबंध रखने वाले इतिहास की स्थूल रेखाएँ इसमें नहीं मिलतीं, किंतु अपने युग के सामाजिक जीवन का सूक्ष्म रूप-रंग इसमें पूर्णत: विद्यमान है। वस्तुत: मध्यकालीन संस्कृति के जिज्ञासुओं के लिए जितनी सामग्री इस ग्रंथ में उपलब्ध होती है, उतनी किसी अन्य साधन से दुष्प्राप्य है।

काव्यत्व की दृष्टि से भी रासो का महत्त्व न्यून नहीं है। वैसे तो इसमें प्राय: सभी रसों का चित्रण कहीं-न-कहीं हुआ है, किंतु वीर, रौद्र और श्रृंगार की व्यंजना में तो कवि ने अद्भुत सफलता प्राप्त की है। युद्ध-संबंधी दृश्यों के चित्रण में तो कवि की निजी अनुभूतियों का योग दृष्टिगोचर होता है—

वज्जि घोर निसान राँन चौहान चहौं दिस।
सकल सूर सामंत समरि बल लंत्र मंत्र तिस॥
उट्‌ठि राज पृथ्वीराज बग्ग लग्गा मनौं बी नट।
कढत तेग मनोवेग लगत मनौं बीज झट्‌ठ घट्‌ठ।

\+ \+ \+

नच्चै कूह कूहं बहै सार सारं, चमक्कै चमक्के करारं सुधामं।
भभक्कै भभक्कै बहै रत्त धारं, सनक्कै सनक्के ब बान भारं॥

यहाँ अक्षरों के द्वित्व, शब्दों की आवृत्ति और वाक्य-विन्यास की विलक्षणता के द्वारा ओज गुण की सृष्टि कर दी गई है जिससे रण क्षेत्र का वातावरण सजीव रूप में प्रस्तुत हो जाता है। इसी प्रकार श्रृंगार की अभिव्यक्ति में कवि ने विषय के अनुरूप कोमल एवं मधुर शब्दावली का प्रयोग किया है—

''बेई आवास जुग्गानि पुरह, बेई सहचरि मंडलिय।
संजोग पयंपति कंत बिन, मुहि न कछू लग्गत रलिय॥''

अर्थात् सब कुछ—घर, योगिनीपुर, सहचरियों के समूह आदि—वही हैं, किंतु प्रिय पति के संयोग के बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

वस्तुत: युग-चित्रण की व्यापकता, भावों की सफल अभिव्यक्ति एवं शैली की प्रौढ़ता की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो एक उच्चकोटि का काव्य है, जिसमें महाकाव्य के प्राय: सभी लक्षण मिल जाते हैं। कुछ विद्वानों का कथन है कि इसमें ऐसा कोई व्यापक संदेश—राष्ट्रीय एकता जैसा—नहीं मिलता, अत: इसे महाकाव्य की कोटि में रखना उचित नहीं, किंतु हम उनसे सहमत नहीं हो सकते। सामंती युग में जैसा संदेश एक कवि दे सकता है, वैसा इसमें

नोट

भी दिया गया है–अपनी मान-मर्यादा की रक्षा करते हुए प्राणों का उत्सर्ग कर देना ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है! सारा काव्य इसी संदेश की ध्वनि से गुंजित है। किंतु जो लोग एक मध्ययुगीन कवि से आधुनिक युग की सी राष्ट्रीय एकता का संदेश पाने की आशा करते हैं, उन्हें अवश्य इससे निराश होना पड़ता है।

हिंदी के पूर्व-मध्य युग (भक्तिकाल) के महाकाव्यों में मलिक मुहम्मद जायसी कृत 'पद्मावत' का भी बहुत ऊँचा स्थान है, जो प्रेमाख्यान-परंपरा का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है। इस काव्य-परंपरा के संबंध में अनेक भ्रांतियों का प्रचार होता रहा है, जैसे यह परंपरा फारसी मसनवियों से प्रभावित है, इसके कवियों का उद्देश्य सूफी धर्म का प्रचार करना था तथा इसमें आध्यात्मिक प्रेम का चित्रण किया गया है आदि-आदि। वास्तव में इस परंपरा का संबंध भारत की उस प्राचीन प्रेमाख्यानक काव्य-परंपरा से है, जिसका आरंभ सुबंधु की 'वासवदत्ता', बाण की 'कादंबरी' और दंडी के 'दशकुमारचरित' से होता है। संस्कृत कवि गद्य में प्रेमाख्यान लिखते थे, जबकि प्राकृत और अपभ्रंश के कवियों ने पद्य में लिखने की परिपाटी को जन्म दिया तथा आगे चलकर हिंदी, पंजाबी और गुजराती कवियों ने भी पद्य का ही प्रयोग किया। कथानक की रूढ़ियों, प्रेम के स्वरूप एवं विकास शैलीगत विशेषताओं की दृष्टि से अपभ्रंश, हिंदी और गुजराती के प्रेमाख्यानों में गहरा साम्य है तथा इसके अतिरिक्त हमारे पास अनेक ऐसे ठोस प्रमाण हैं, जिनके आधार पर यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि हिंदी के प्रेमाख्यान फारसी मसनवियों से नहीं, अपितु पूर्ववर्ती भारतीय प्रेम तथा साहित्य से संबंधित हैं। 'पद्मावत' के रचयिता ने भी ऐसे पूर्ववर्ती ग्रंथों में भारतीय प्रेमाख्यानों का ही उल्लेख किया है–फारसी मसनवियों का नहीं।

'पद्मावत' का इतिवृत्त अर्द्ध-ऐतिहासिक है; कवि ने भारतीय प्रेमाख्यानों की रूढ़ियों को गुंफित करने के लिए उसके ऐतिहासिक इतिवृत्त में पर्याप्त परिवर्तन एवं परिवर्द्धन कर लिया है। नायक रत्नसेन द्वारा नायिका पद्मावती को प्राप्त करने तक की कहानी, जिसे इस ग्रंथ का पूर्वार्द्ध कहा जाता है, काल्पनिक है; किंतु फिर भी वह उत्तरार्द्ध से अधिक महत्त्वपूर्ण है। पूर्वार्द्ध के अंत में जाकर कहानी समाप्त सी हो जाती है, किंतु आगे चलकर इस ढंग से उसका पुनरुत्थान किया गया है कि वह कवि की प्रबंध-कुशलता का परिचायक बन गया है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के दो स्वतंत्र कथानकों को इस सफलता से संबद्ध कर दिया गया है कि पाठक को इस जोड़ का पता तक नहीं चलता।

पात्रों की विविधता का भी 'पद्मावत' में अभाव नहीं है। यह ठीक है कि जायसी ने प्रत्येक पात्र की किसी एक ही चरित्रगत विशिष्टता को उभारा है, जैसे–रत्नसेन की प्रणय-विह्वलता, पद्मावती की सौंदर्य एवं कामजन्य मदांधता, राघवचेतन की शटता, अलाउद्दीन की कूटनीतिज्ञता, गोरा-बादल की शूरवीरता आदि, किंतु इस क्षेत्र में उनकी प्रतिस्पर्धा कोई अन्य कवि नहीं कर सकता। चारित्रिक प्रवृत्तियों के चित्रण में उनका दृष्टिकोण वैचित्र्य के स्थान पर एकत्व का रहा है, इसी से उनके पात्रों में मनोवृत्तियों की जटिलता न मिलकर गंभीरता के दर्शन होते हैं। विभिन्न भावों की व्यंजना में पद्मावत के रचयिता ने एक महाकवि की सी क्षमता का परिचय दिया है, विशेषतः प्रेम और विरह की अभिव्यक्ति में तो असाधारण सफलता मिली है।

'पद्मावत' के दार्शनिक पक्ष के साथ सबसे अधिक अन्याय उन विद्वानों के द्वारा हुआ है, जो पहले से ही यह मानकर चलते हैं कि इस ग्रंथ में सूफी मत का प्रतिपादन किया गया है। वे 'पद्मावत' के रूपक को जायसी के संकेतों के आधार पर न समझकर सूफी मत के आधार पर उसकी व्याख्या करने का प्रयास करते हैं; फलतः वे कथानक के साथ रूपक की संगति बैठाने में सफल नहीं होते। अब तो यहाँ तक कहा जाने लगा है कि पद्मावत की वे पंक्तियाँ, जिनमें इसके रूपक के प्रतीकार्थों का संकेत दिया गया है–प्रक्षिप्त हैं। किंतु जैसाकि हमने अपने शोध-प्रबंध (हिंदी में शृंगार-परंपरा और महाकवि बिहारी) में स्पष्ट किया है, इसके रूपक में हिंदू दर्शन के अनुसार सात्विक ज्ञान द्वारा मोक्ष-प्राप्ति का संदेश दिया गया है। रत्नसेन 'मन' हैं, और पद्मिनी, 'बुद्धि' या ज्ञान का प्रतीक है–किंतु हमारे विद्वान रत्नसेन को आत्मा और पद्मिनी को परमात्मा मानकर व्याख्या करते हैं जो कि कवि के संकेतों (तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुद्धि पद्मिनी चीन्हा।) से असंबद्ध होने के कारण उचित नहीं। जिस प्रकार से सांसारिक कर्मजाल रूपी इड़ा के चक्कर में फँसा हुआ कामायनी का मनु (मन) हृदय पक्ष से संबंधित श्रद्धा की सहायता से आनंद प्राप्त करता है, ठीक उसी प्रकार नागमती रूपी 'दुनिया-धंधा' में आसक्त रत्नसेन रूपी मन, गुरु के उपदेश से सात्विक ज्ञान–हृदयवासिनी बुद्धि (हिय सिंघल बुधि पद्मिनी चीन्हा)–या श्रद्धा (पद्मिनी) को प्राप्त करता है और अंत में आसुरी वृत्तियों का दमन करके मोक्ष

नोट

प्राप्त करता है। कामायनी और पद्मावत के पात्रों में गहरी समानता है—दोनों में मन के प्रतीक क्रमश: मनु और रत्नसेन; सांसारिक बुद्धि के इड़ा और नागमती, हृदयवासिनी बुद्धि या श्रद्धा और पद्मिनी : आसुरी वृत्तियों के किराताकुलि और राघव-चेतन व अलाउद्दीन हैं। अत: जिस प्रकार कामायनी का संदेश सांसारिक कर्मों की आसक्ति को त्यागकर आनंद प्राप्ति का है, वैसे ही पद्मावत का मोक्ष-प्राप्ति का है। संभवत: कुछ लोग इस बात पर आश्चर्य करेंगे कि मुसलमान होकर भी जायसी ने हिंदू-दर्शन को क्यों अपनाया, किंतु उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि सारी 'पद्मावत' में ही हिंदू-संस्कृति, हिंदू-सभ्यता और हिंदू धर्म का चित्रण हुआ है, अत: उसमें हिंदू दर्शन की अभिव्यक्ति हो तो अस्वाभाविकता क्या है?

जहाँ तक युग की परिस्थितियों एवं लोक-जीवन के चित्रण का प्रश्न है, पद्मावत को हम अपने युग का एक सच्चा दर्पण कह सकते हैं, जिसमें तत्कालीन समाज की विभिन्न रीति-रिवाजों और प्रथाओं का, लोक-विश्वास और लोक-विचारों का, विभिन्न पर्वो व उत्सवों का, दीवाली, होली, वसंत आदि त्योहारों का सजीव प्रतिबिंब देखने को उपलब्ध होता है। साथ ही इसमें शैली की प्रौढ़ता, अलंकारों का वैभव और उपमानों का भंडार भी विद्यमान है; अत: इसमें उन सभी प्रमुख गुणों का समन्वय हो जाता है, जिनके आधार पर कोई रचना 'महाकाव्य' पद की अधिकारिणी होती है।

अवधी भाषा और दोहा-चौपाई शैली में प्रबंध-लेखन की जिस परंपरा का प्रवर्त्तन प्रेमाख्यान के रचयिताओं द्वारा हुआ था, उसका परिष्कृत रूप हमें महाकवि तुलसी द्वारा रचित 'रामचरितमानस' में उपलब्ध होता है। 'रामचरित' किसी एक युग, एक भाषा और किसी एक कला का विषय नहीं है, अपितु विभिन्न युगों और विभिन्न भाषाओं व कलाओं में पुरुषोत्तम राम के दिव्य-जीवन का चित्रण होता रहा है। गुप्तजी की यह उक्ति 'राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है।' संभवत: इसी तथ्य की ओर संकेत करती है, किंतु तुलसी के महाकाव्य का अध्ययन करते समय इस भ्रांति से बचना उचित होगा। यह महाकाव्य एक ऐसी प्रतिभा, शक्ति और सूक्ष्म दृष्टि को लेकर हिंदी काव्य क्षेत्र में अवतरित हुआ है कि रामचरित का प्राचीन विषय भी एक नवीन सौंदर्य, नये आकर्षण और एक नयी अभिव्यक्ति से संपन्न हो गया।

'रामचरितमानस' के कथानक को अनेक भूमिकाओं द्वारा प्रस्तुत किया गया है। सारी कथा अनेक वक्ताओं और अनेक श्रोताओं के माध्यम से व्यक्त होती है, किंतु फिर भी इसकी प्रबंधात्मकता को कहीं कोई ठेस नहीं लगती। निर्झरिणी की भाँति कहानी अनेक प्राचीन और नवीन कथाओं की पर्वतीय शाखाओं, दुर्गम घाटियों और अडिग चट्टानों में प्रवेश करती हुई आगे बढ़ती है। उसकी राह में अनेक समतल और विषम स्थल, हरे भरे वन-प्रदेश और शुष्क मरुस्थल भी उपस्थित होते हैं, किंतु तुलसी की मानव-सरिता का प्रवाह कहीं भी अवरुद्ध क्षीण या भंग नहीं होता। तुलसी अपने पात्रों के जन्म-जन्मांतरों तक की घटनाएँ सुना देते हैं, किंतु ऐसा करने से पूर्व वे उपयुक्त वातावरण और समय की भी खोज कर लेते हैं। तुलसी की काव्यकला के इस विराट् ढाँचे और विस्तृत रूप को देखते हुए, उसमें शिल्पगत दो-चार त्रुटियों को ढूँढ़ निकालना विशेष महत्त्व नहीं रखता।

'रामचरितमानस' के पात्रों में कुछ ऐसी विशिष्टता, स्वाभाविकता और भव्यता मिलती है, जो अनायास ही पाठक की बुद्धि और कल्पना को केंद्रित कर लेती है। दशरथ की तीनों रानियों और उनके चारों पुत्रों में से प्रत्येक के चरित में कुछ ऐसा स्पष्ट अंतर है जिसमें हम उन्हें एक-दूसरे से पृथक् कर सकते हैं। इसी प्रकार रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण तीनों राक्षस कुलोत्पन्न होते हुए भी वैयक्तिक विशिष्टता से संपन्न हैं। कहीं-कहीं पात्रों के चरित्र का विकास भी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक आधार पर दिखाया गया है; जैसे—पति-परायण कैकेयी का कुलघातिनी बन जाना। सुग्रीव जैसे सरल व्यक्ति का राज्य-प्राप्ति के अनंतर भोग-विलास में लीन हो जाना या विभीषण का भ्रातृद्रोह के लिए विवश होना। विभिन्न अवसरों पर पात्रों के संवाद—'परशुराम-लक्ष्मण संवाद', 'मंथरा-कैकेयी-संवाद', 'अंगद-रावण-संवाद' आदि—सर्वत्र मर्यादित न होते हुए भी स्वाभाविक, रोचक एवं नाटकीय हैं। उनमें पात्रानुकूल भावनाओं एवं विचारों की अभिव्यक्ति हुई है।

'रामचरितमानस' में प्राय: सभी प्रमुख रसों की व्यंजना प्रसंगानुसार हुई है, यद्यपि इसमें प्रमुखता भक्ति और शांत रस की है। मानव हृदय की सूक्ष्मातिसूक्ष्म वृत्तियों का भी चित्रण महाकवि तुलसी ने सफलतापूर्वक किया है। भाव-दशा के विकास में वे एक ही साथ अनेक संचारियों और अनुभवों का आयोजन करने में समर्थ हैं, उदाहरण

नोट

के लिए दशरथ की शोक-विह्वल दशा का चित्रण द्रष्टव्य है–

धरि धीरजु उठि बैठ भुआलू, कहु सुमंत्र कहँ राय कृपालू।
कहाँ लखन कहँ राम सनेही, कहँ प्रिय पूत्रवधू वैदेही॥
+ + +
सो तनु राखि करब मैं काहा, जेहि न प्रेम पनु मोर निबाहा।
हा रघुनंदन प्रान पिरीते, तुम्ह बिन जिअत बहुत दिन बीते॥

'रामचरितमानस' का भाव-पक्ष जितना गंभीर है, उसकी शैली भी उतनी ही प्रौढ़ है। सभी दृष्टिकोणों से इसमें काव्य-कला के महत् रूप का दर्शन होता है। जहाँ तक युग-धर्म और संदेश का संबंध है, यह ग्रंथ समस्त उत्तरी भारत में एक पवित्र धर्म-ग्रंथ की भाँति आदृत होता रहा है। अपने युग की विभिन्न धार्मिक एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान इसमें प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि इसकी कुछ त्रुटियाँ भी बताई गई हैं, जैसे–इसमें पौराणिकता का प्रभाव अत्यधिक मात्रा में होने के कारण अवांतर कथाओं तथा प्रसंगों का आधिक्य है तथा माहात्म्य, स्तोत्र, देवताओं की पुष्पवर्षा के वर्णन, सैद्धांतिक विवेचन और प्रचारात्मक उपदेशों की भी अधिकता है, किंतु फिर भी इसकी विशेषताओं को देखते हुए इसे उच्चकोटि का महाकाव्य मानना उचित है।

हिंदी के उत्तर-मध्ययुग (रीतिकाल) में प्रबंध-काव्य तो अनेक लिखे गए, किंतु उनमें काव्यत्व की वह प्रौढ़ता या गंभीरता नहीं मिलती जिससे उन्हें 'महाकाव्य' की संज्ञा दी जा सके। इनमें से केशव की **'रामचंद्रिका'** को कुछ विद्वान **'महाकाव्य'** मानने के पक्ष में रहे हैं और इसमें कोई संदेह नहीं कि महाकाव्य के स्थूल लक्षणों की पूर्ति करने का प्रयास इसमें किया गया है। पूरी कथा 39 सर्गों में विभाजित है तथा पुरुषोत्तम राम इसके चरित्र नायक हैं, किंतु इसमें अनेक ऐसे दोष मिलते हैं, जिनसे यह महाकाव्य की महत्ता से वंचित हो जाती है। कवि का मूल लक्ष्य पांडित्य-प्रदर्शन, विभिन्न छंदों और अलंकारों का आयोजन करना रहा है जिससे वह मानव-जीवन के विभिन्न पक्षों का उद्घाटन नहीं कर सका। केशव की कल्पना इतनी विराट् नहीं कि वह समस्त युग और समाज के सब रूपों को सजीव रूप में प्रस्तुत कर सके। इसका कथानक शिथिल और गति शून्य-सा और वस्तु-वर्णन देश-काल के औचित्य से शून्य है। अनावश्यक वर्णनों की भरभार, अत्यधिक वस्तु-परिगणना की प्रवृत्ति, नाना प्रकार के छंदों के प्रभावहीन प्रयोग एवं शैली की क्लिष्टता के कारण इसमें काव्य-सौंदर्य की सृष्टि नहीं हो सकी। अत: महाकाव्य तो क्या, इसे एक सफल प्रबंध-काव्य स्वीकार करना भी कठिन है।

आधुनिक युग में अनेक ऐसे प्रबंध-काव्य लिखे गए हैं, जो आकार-प्रकार की विशालता एवं स्थूल लक्षणों की दृष्टि से महाकाव्य की कोटि में आ सकते हैं, किंतु सूक्ष्म गुणों की दृष्टि से इनमें केवल तीन ही प्रमुख हैं– (1) साकेत, (2) कामायनी और (3) कुरुक्षेत्र। 'साकेत' राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का सर्वोत्कृष्ट काव्य माना जाता है। इसमें रामायण की पुनीत कथा को नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हुए उपेक्षित उर्मिला एवं कैकेयी को विशेष महत्त्व दिया गया है, किंतु प्रत्येक महान रचना 'महाकाव्य' नहीं कहला सकती। कालिदास का 'मेघदूत' कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, किंतु उसे महाकाव्य नहीं कहा जा सकता। वस्तुत: 'साकेत' में उस व्यापक दृष्टिकोण, जीवन के विराट् रूप; भावक्षेत्र की गंभीरता एवं युग-संदेश की महत्ता का अभाव है, जो महाकाव्य के लिए अपेक्षित है। इसमें मुख्यत: जीवन का एक खंडरूप–राम-लक्ष्मण वनवास और उर्मिला का विरह ही प्रस्फुटित हुआ है। अपने दु:ख भार की शिला को नेत्रों के जल से तिल-तिलकर काटने वाली उर्मिला के प्रति हमें पूरी सहानुभूति है, किंतु उसे आराध्या-रूप में स्वीकार करने में हम असमर्थ हैं। गुप्तजी अवश्य उसे कताई-बुनाई के प्रशिक्षण में दीक्षित करके समाज-नेत्री के पद पर प्रतिष्ठित करना चाहते थे, किंतु इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। शेष पात्रों में से भी किसी का व्यक्तित्व इतना अधिक प्रभावशाली नहीं बन सका कि उसे हम महाकाव्य का नायक कह सकें। वास्तव में 'साकेत' का गौरव 'विरह-काव्य' के रूप में है; महाकाव्य सिद्ध न होने से भी उसके महत्त्व में विशेष अंतर नहीं पड़ता।

'कामायनी' कविवर जयशंकर प्रसाद की सर्वश्रेष्ठ कृति मानी जाती है, जिसे हिंदी के आधुनिक-गीत प्रबंध-काव्यों में शीर्ष स्थान प्राप्त है। इसके कथानक की रूप रेखाएँ सूक्ष्म, अस्पष्ट एवं अस्वाभाविक होते हुए भी मानव-जाति के समस्त इतिहास को समेटने का प्रयत्न किया है। प्रलय से लेकर आधुनिक युग तक की कहानी को इसमें गुंफित किया गया है। समस्त काव्य में स्थूल घटनाएँ तीन-चार ही हैं; वे भी श्रद्धा और मनु के बार-बार

मिलने और बिछुड़ने पर, मनु और इड़ा के मिलने और बिछुड़ने तक सीमित है। अत: प्रबंध-काव्य की सी इतिवृत्तात्मकता एवं रोचकता का इसमें अभाव है, किंतु मानव-हृदय की सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावनाओं का जैसा मार्मिक, विस्तृत एवं गंभीर चित्रण किया गया है, वह इसके सारे अभावों की पूर्ति कर देता है। कथानक का आरंभ शोक से करते हुए इसमें क्रमश: शृंगार, वीर, रौद्र, विस्मय एवं शांत रस की आयोजना की गई है। मानवीय सौंदर्य की अभिव्यंजना इसमें प्रकृति के मनोहर रूप-रंग की आभा में वेष्टित करके की गई है; इसकी नायिका श्रद्धा की मंजुल-मनोहर छवि पर भारतीय साहित्य की समस्त नायिकाओं–उर्वशी, तिलोत्तमा, शकुंतला, दमयंती, पद्मावती आदि–के सौंदर्य को शत-शत बार न्योछावर किया जा सकता है। नारी के व्यक्तित्व के सभी स्थूल और सूक्ष्म गुणों का समन्वित रूप प्रथम बार हमें 'कामायनी' की नायिका में उपलब्ध होता है। उसकी केवल एक वृत्ति–लज्जा को लेकर पूरे सर्ग की रचना कर देना कामायनीकार की काव्य प्रतिभा का प्रमाण है।

काव्यत्व की दृष्टि से कामायनी जितनी प्रौढ़ है, जीवन-दर्शन और युग संदेश की दृष्टि से वह उतनी ही महान भी है। इसमें मानव-जीवन की उन चिरंतन समस्याओं का चित्रण किया गया है, जो स्थूल भौतिक जगत की घटनाओं से नहीं, अपितु मस्तिष्क और हृदय की सूक्ष्म वृत्तियों द्वारा उपस्थित होती हैं। संघर्ष और युद्ध का कारण कोई जाति-विशेष, देश-विदेश या वाद-विशेष नहीं है, अपितु हमारी ही अपनी चित्तवृत्तियाँ हैं। सुख की लालसा से भटकता हुआ मानव किस प्रकार स्वार्थ-वृत्ति के मायाजाल में फँस जाता है जिससे उसका जीवन अनेक असंगतियों का केंद्र बन जाता है। अस्तु, मानव-जीवन में सुख और शांति का मूल-मंत्र कामायनीकार के शब्दों में 'ज्ञान', क्रिया और इच्छा' में उचित समन्वय स्थापित करना है। आज के युग में बुद्धि या ज्ञान का एकांगी विकास हो रहा है, जो समस्त मानव-जाति के लिए अशुभ एवं घातक है।

'कुरुक्षेत्र' श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' की उत्कृष्ट रचना है। इसका इतिवृत्त कामायनी से भी लघु, संक्षिप्त एवं घटना-विहीन है, फिर भी उसमें रोचकता का अभाव नहीं है। महाकाव्य के स्थूल लक्षण इस पर लागू नहीं होते, किंतु काव्य की गरिमा और आदर्श की महानता इसमें मिलती है। युधिष्ठिर की मानसिक अवस्था का क्रमिक विकास इसमें मर्मस्पर्शी रूप में दिखाया गया है। युधिष्ठिर और भीष्म के रूप में मानो शांत और वीर रस में वाद-विवाद प्रस्तुत किया गया है। प्राचीन पात्रों के माध्यम से इसमें शांति की समस्या पर प्रकाश डाला गया है। षष्ठ सर्ग में कामायनीकार की भाँति इसमें भी आधुनिक युग की अति-बौद्धिकता का विरोध किया गया है। अंत में कवि का संदेश है–"शांति नहीं तब तक, जब तक नर का सुख-भाग न सम होगा।" जो युग की आवश्यकता के अनुरूप है। यद्यपि शास्त्रीय दृष्टि से कामायनी और कुरुक्षेत्र–दोनों में ही महाकाव्य की अनेक विशेषताएँ नहीं मिलतीं, किंतु महाकाव्य की-सी महत्ता और उदात्तता अवश्य इनमें है।

उपर्युक्त महाकाव्यों के अतिरिक्त भी इस युग में रचित शताधिक प्रबंधकाव्य इस प्रकार के मिलते हैं, जिन्हें 'महाकाव्य' के रूप में ही रचा गया है, पर वे अधिक प्रचलित नहीं हो सके; यथा–'नल-नरेश' (प्रतापनारायण; 1933), 'नूरजहाँ' (गुरुभक्त सिंह; 1935); 'सिद्धार्थ' (अनूप शर्मा; 1937), 'कृष्णायन' (द्वारकाप्रसाद मिश्र; 1943), 'साकेत-संत' (बलदेवप्रसाद मिश्र; 1946), 'अंगराज' (आनंदकुमार; 1950), 'वर्द्धमान' (अनूप शर्मा; 1951), 'देवार्चन' (करील; 1952), 'रावण' (हरदयालु सिंह; 1952), 'पार्वती' (रामानंद तिवारी; 1955); 'झाँसी की रानी' (श्यामनारायण प्रसाद; 1955), 'मीरा' (परमेश्वर द्विरेफ; 1957), 'एकलव्य' (डॉ. रामकुमार वर्मा; 1958), 'उर्मिला' (बालकृष्ण शर्मा; 1958) 'उर्वशी' (दिनकर; 1961) आदि प्रमुख हैं। इनमें से यहाँ कुछ रचनाओं का परिचय प्रस्तुत किया जाता है।

द्वारकाप्रसाद मिश्र का 'कृष्णायन' (1943 ई.) 'रामचरितमानस' के अनुकरण पर रचित कृष्ण संबंधी प्रबंध-काव्य है जो सात कांडों में विभक्त है–(1) अवतरण कांड (2) मथुरा कांड (3) द्वारका कांड (4) पूजा कांड (5) गीता कांड (6) जय कांड और (7) आरोहण कांड। इसकी भाषा अवधी तथा शैली दोहा-चौपाई की है। विभिन्न पात्रों के–मुख्यत: कृष्ण के चरित्र को चित्रित करने में कवि को पर्याप्त सफलता मिली है। कृष्ण को अत्यंत दिव्य एवं उदात्त रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। महाकाव्य के विभिन्न लक्षणों का भी निर्वाह हुआ है।

बलदेवप्रसाद मिश्र का 'साकेत संत' (1946 ई.) भरत के चरित्र पर प्रकाश डालनेवाला सफल प्रबंध काव्य है। इसका नाम गुप्तजी के 'साकेत' की स्मृति करवाना है। वस्तुत: जिस प्रकार साकेतकार का लक्ष्य उपेक्षित

नोट

उर्मिला के चरित्र को ऊँचा उठाना रहा है, वैसे ही इसमें भरत के चरित्र को उठाने का लक्ष्य रहा है। इसमें घटनाओं की अपेक्षा पात्रों के चित्रण का ध्यान अधिक रहा है। भरत, मांडवी, कैकेयी को अत्यंत नवीन रूप में प्रस्तुत किया गया है। रचना अत्यन्त भावपूर्ण, गंभीर एवं प्रौढ़ है, एक नमूना द्रष्टव्य है–

कुलवधू कब रहती स्वच्छंद, उसे बस अपना भवन पसन्द।
आपके रहें अचल सुख-साज, उसे प्रिय अपना स्वजन समाज॥

गुरुभक्तसिंह 'भक्त' के दो ऐतिहासिक महाकाव्य **'नूरजहाँ'** (1935 ई.) और **'विक्रमादित्य'** (1947 ई.) उल्लेखनीय हैं। इनमें से पहले काव्य में रोमांस की प्रमुखता होने के कारण इसे आदर्शवादी तो नहीं कहा जा सकता, किंतु विषय-वस्तु की अन्य विशेषताओं एवं प्रतिपादन शैली की दृष्टि से इसे यहाँ स्थान दिया जा सकता है। यह अठारह सर्गों में विभक्त है तथा महाकाव्य के लिए अपेक्षित प्राय: सभी शास्त्रीय लक्षणों का समावेश इसमें मिलता है, फिर भी भावनाओं के जिस औदात्य एवं संदेश की जिस गरिमा की महाकाव्य में अपेक्षा होती है, उसका इसमें अवश्य अभाव है। नूरजहाँ के प्रति जहाँगीर के अतिशय अनुराग की अभिव्यक्ति इसमें सफलतापर्वूक हुई है।

'विक्रमादित्य' चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के ऐतिहासिक वृत पर आधारित है, पर इसमें उसके जीवन के उदात्त पक्ष को कम तथा शृंगारिक रूप को अधिक लिया गया है। कवि का मूल लक्ष्य चंद्रगुप्त और ध्रुवदेवी के प्रणय का अंकन करना ही दिखाई पड़ता है। यह भी विचित्र बात है कि कवि ने अपने दोनों ही काव्यों में ऐसी नायिकाओं को लिया है, जिनका पहला विवाह अन्यत्र हो जाता है तथा उनके प्रेमी उन्हें प्राप्त करने के लिए उनके पतियों का वध करते हैं। लगता है, भक्तजी का उद्देश्य विवाह की मर्यादाओं की अपेक्षा प्रेम का अधिक महत्त्व स्थापित करना रहा है या दूसरे शब्दों में वे प्रेम को ही विवाह का वास्तविक आधार सिद्ध करना चाहते हैं, जो किसी सीमा तक ठीक भी है।

अनूप शर्मा ने विभिन्न धर्म प्रवर्तकों को लेकर दो महाकाव्य–**'सिद्धार्थ'** (1937 ई.), एवं **'वर्द्धमान'** (1951 ई.) प्रस्तुत किए हैं। 'सिद्धार्थ' की कथावस्तु अश्वघोष के 'बुद्ध-चरित्र' एवं मैथ्यू आर्नल्ड के 'लाइट आफ एशिया' से प्रभावित है तथा अठारह सर्गों में विभक्त है। गौतम बुद्ध की पत्नी यशोधरा को भी इसमें पर्याप्त महत्त्व दिया गया है। बुद्ध को अवतार पुरुष के रूप में चित्रित करते हुए उनके चरित्र को बहुत ऊँचा उठाया गया है। अन्य पात्रों के भी चरित्र-चित्रण पर यथेष्ट ध्यान दिया गया है। प्रकृति-वर्णन तथा विभिन्न भावों की व्यंजना में कवि को अच्छी सफलता मिली है।

'वर्द्धमान' में जैन धर्म के प्रवर्त्तक महावीर का चरित्र सत्रह सर्गों में प्रस्तुत किया गया है। इसमें महावीर के जन्म से लेकर ज्ञान-प्राप्ति तक के पूरे जीवन को अंकित किया गया है। इसकी शैली पर हरिऔध के 'प्रियप्रवास' का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। उसी के अनुरूप इसमें संस्कृत के वर्णिक छंदों का जैसे वंशस्थ, मालिनी, द्रुतबिलंबित आदि का प्रयोग किया गया है। तथापि काव्य में मूलत: शांत-रस का प्रतिपादन किया गया है; किंतु प्रसंगानुसार अन्य रसों के भी समावेश का यत्न किया गया है।

श्यामनारायण पांडेय का राजपूतकालीन इतिहास से संबंधित महत्त्वपूर्ण प्रबंध-काव्य 'हल्दीघाटी' (1949 ई.) उल्लेखनीय है। इसमें हिंदू गौरव महाराणा प्रताप के चरित्र को सत्रह सर्गों में अंकित किया गया है। इसके नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें केवल हल्दीघाटी के युद्ध की घटना का ही वर्णन किया गया होगा, किंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। इस दृष्टि से यह नाम दोषपूर्ण है। महाराणा के शौर्य, त्याग एवं आत्म-बलिदान की व्यंजना में कवि को पूरी सफलता मिली है। पांडेय जी की शैली में ओज और प्रवाह का गुण अपेक्षित मात्रा में मिलता है; यहाँ कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

सावन का हरित् प्रभात रहा, अंबर पर थी घनघोर घटा।
फैलाकर पंख थिरकते थे, मन हरती थी वन-मोर छटा॥

पड़ रही फुही, झींसी झिन-झिन पर्वत की हरी वनाली पर।
''पी कहाँ!'' पपीहा बोल रहा, तरु-तरु की डाली-डाली पर॥

वारिद के उर में दमक-दमक, तड़-तड़ बिजली की तड़क रही।
रह-रहकर जल था बरस रहा, रणधीर भुजा थी फड़क रही॥

मोहनलाल महतो 'वियोगी' ने 'पृथ्वीराज रासो' के प्रसिद्ध कथानक के आधार पर **'आर्वादर्त्त'** (1943) नामक प्रबंध-काव्य प्रस्तुत किया है। जैसा कि इसकी भूमिका में कहा गया है कवि ने इसे महाकाव्य बनाने का प्रयास करते हुए संस्कृत के तत्संबंधी विभिन्न लक्षणों का समावेश किया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वियोगी जी ने पृथ्वीराज और चंदबरदाई के जीवन-चरित्र को पूरी सहृदयता से प्रस्तुत किया है। वैसे आलोचकों ने इसकी अनेक न्यूनताओं को उद्घाटन करते हुए इसके महाकाव्य को अस्वीकार किया है–हमारे विचार से महाकाव्य न सही, एक प्रबंध-काव्य के रूप में यह सफल रचना है।

इस युग में क्रूर, दुष्ट एवं नीच समझे जाने वाले पात्रों को भी ऊँचा उठाने का प्रयास अनेक प्रबंध-काव्य-रचयिताओं ने किया है। इनमें हरदयालसिंह का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने **'दैत्यवंश'** (1940 ई.) और **'रावण'** (1952 ई.) नामक दो प्रबंधकाव्य प्रस्तुत किए हैं। दैत्यवंश ब्रजभाषा में रचित है। इसमें 'हिरण्यकशिपु', 'बलि', 'बाणासुर' आदि दैत्यों के चरित्र को पौराणिक आधार पर प्रस्तुत किया गया है। इसका मुख्य रस तो वीर है किंतु अन्य रसों को भी प्रसंगानुसार स्थान दिया गया है। काव्य में एक स्थान पर अनेक नायक होने के कारण इसमें अपेक्षित एकोन्मुखता एवं अनिवार्यता नहीं आ पाई। इसकी शैली में पर्याप्त प्रवाह और ओज मिलता है।

'रावण' में लंकापति दशानन के चरित्र को पूर्ण सहानुभूति के साथ अंकित करने का प्रयास किया गया है। यह काव्य सत्रह सर्गों में विभक्त है तथा इसकी कथावस्तु मूलत: वाल्मीकि रामायण पर आधारित है, किंतु बीच-बीच में कवि ने अपनी मौलिक सर्जन-शक्ति से भी अपेक्षित कार्य किया है। रावण के चरित्र को ऊँचा उठाते हुए उसे एक अत्यंत पराक्रमी, उत्साही, त्यागी, शूरवीर के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रावण के अतिरिक्त अन्य राक्षसों को भी उच्च रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। प्रकृति-वर्णन, नारी-सौंदर्य-चित्रण तथा विभिन्न भावनाओं की व्यंजना में कवि को पर्याप्त सफलता मिलती है।

इस युग के अनेक कवियों का ध्यान राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के जीवन-चरित्र की ओर भी आकृष्ट हुआ है। सन् 1946 ई. से लेकर अब तक अनेक कवियों ने गाँधी के चरित पर विशालकाय प्रबंध-काव्य लिखे हैं, जिनमें से तीन यहाँ विवेच्य हैं–(1) 'महामानव' (1946 ई.) (2) 'जननायक' (1949 ई.) और (3) 'जगदालोक' (1952 ई.)। महामानव की **रचना ठाकुरप्रसाद सिंह** द्वारा हुई है। यह पंद्रह सर्गों में विभक्त है। गांधी जी के चरित्र की विभिन्न विशेषताओं के उद्घाटन का प्रयास कवि ने किया है; किंतु यथोचित घटनाओं के अभाव में वह भली-भाँति सफल नहीं हो सका। प्रबंधत्व की दृष्टि से भी इसमें शिथिलता है। दूसरा काव्य 'जननायक' **रघुवीरशरण मित्र** द्वारा विरचित है। यह विशालकाय काव्य लगभग छ: सौ पृष्ठों में पूरा हुआ है तथा इकतीस सर्गों में विभक्त है। इसकी अधिकांश घटनाएँ महात्मा गांधी का 'आत्मकथा' पर आधारित हैं। गांधी के चरित एवं चरित्र को अत्यंत श्रद्धा के साथ प्रस्तुत किया गया है। इनकी शैली अत्यंत सरल और प्रवाहपूर्ण है। उदाहरण के लिए कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं–

धन्य! सुदामापुरी जहाँ पर मनमोहन ने जन्म ले लिया।
माता-पिता धन्य! वे जिनको प्रभु ने दिव्य प्रकाश दे दिया।
जिसमें चित्र लिखे मोहन के उस मिट्टी का प्यार धन्य है!
जिसमें जन्म लिया मोहन ने वह गांधी-परिवार धन्य है!!

महात्मा गांधी के चरित्र पर आधारित तीसरा प्रबंध-काव्य **'जगदालोक'** है जिसकी रचना **ठाकुर गोपालशरण सिंह** ने 1952 ई. में की है। इसमें गांधी जी के जन्म, शिक्षा, इंग्लैंड यात्रा आदि से लेकर उनके बलिदान तक की प्राय: सभी प्रमुख घटनाओं को बीस सर्गों में वर्णित किया गया है। इसके कतिपय प्रसंग अत्यंत सरस एवं सजीव हैं। महात्मा गांधी की चारित्रिक महत्ता को उभारने का कवि ने विशेष प्रयत्न किया है।

महाभारत के विभिन्न प्रसंगों एवं पात्रों को लेकर भी अनेक कवियों ने सुंदर प्रबंध-काव्य प्रस्तुत किए हैं, जिनमें वीर कर्ण से संबंधित **'अंगराज'** (1950 ई.) **आनंदकुमार** द्वारा विरचित है, जिसमें कर्ण के चरित्र को उज्ज्वल रूप में उपस्थित किया गया है। पूरा काव्य 25 सर्गों में विभक्त है। कर्ण के साथ-साथ महाभारत के अन्य पात्रों–युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, द्रोपदी आदि के चरित्र पर भी मौलिक रूप में प्रकाश डाला गया है। कर्ण के चरित्र को ऊँचा उठाने के लिए पांडव-पक्ष के पात्रों को नीचे गिराना आवश्यक समझा गया है, जो ठीक नहीं कहा जा

नोट

सकता। इसका प्रमुख रस वीर है किंतु साथ ही विभिन्न स्थलों पर श्रृंगार, करुण, शांत की भी व्यंजना की गई है। भाव-व्यंजना एवं शैली की दृष्टि से रचना प्रौढ़ है तथा तात्विक दृष्टि से इसे महाकाव्य के रूप में मान्यता दी गई है।

एकलव्य (1958 ई.) **डॉ. रामकुमार वर्मा** द्वारा रचित प्रबंध-काव्य है जिसमें एकलव्य की गुरुभक्ति की व्यंजना चौदह सर्गों में की गई है। नायक के चरित्र-चित्रण में कवि को पर्याप्त सफलता मिली है, तथा इसकी अभिव्यंजना शैली भी पर्याप्त प्रौढ़ एवं सशक्त है; अस्तु, यह एक सफल प्रयास है। इसी प्रकार 1960 में प्रकाशित नरेंद्र शर्मा का 'द्रोपदी' काव्य भी प्रबंध के क्षेत्र में नया प्रयोग है। इसके विभिन्न पात्र विभिन्न तत्त्वों के प्रतीक हैं; तथा–युधिष्ठिर आकाश-तत्त्व के, भीम प्राण-तत्त्व के, अर्जुन अग्नितत्त्व के, नकुल जल-तत्त्व के और सहदेव भूमि-तत्त्व के। इसी प्रतीकात्मकता के कारण काव्य में बौद्धिकता का संचार अनपेक्षित रूप में हो गया है, फिर भी द्रोपदी के कुछ चित्र अत्यंत प्रभावोत्पादक रूप में प्रस्तुत हुए हैं। कवि का लक्ष्य संभवत: नारी के त्याग, बलिदान एवं शक्ति की महत्ता का बोध कराना रहा है। इसकी प्रबंधात्मकता एवं भावव्यंजना के संबंध में डॉ. सावित्री सिन्हा के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'जिस प्रकार घटनाएँ क्षिप्र गति से आती हैं और चली जाती हैं, उसी प्रकार विभिन्न भावनाओं के पूर्ण परिपाक की झलक मिलती है और समाप्त हो जाती है। आह्लाद और विषाद की अनेक मन:स्थितियों का चित्रण इसमें सजीवता के साथ हुआ है।'

हिंदी के कुछ कवियों और साहित्यकारों पर भी अनेक प्रबंध-काव्य प्रस्तुत हुए हैं, जिनमें 'तुलसीदास' (निराला: 1939 ई.), 'देवार्चन' (करील: 1952 ई.), मीरा (परमेश्वर द्विरेफ : 1957 ई.) और 'युगस्रष्टा प्रेमचंद' (द्विरेफ : 1959 ई.), उल्लेखनीय हैं। 'तुलसीदास' एक सौ छंदों में रचित है तथा इसमें तुलसी की विभिन्न मानसिक परिस्थितियों एवं भाव-चेतना के विकास-क्रम की अत्यंत प्रौढ़ एवं सशक्त से 'देवार्चन' में कवि करील के द्वारा प्रस्तुत किया है। यह काव्य सत्रह सर्गों में विभक्त है तथा नायक के जीवन की विभिन्न घटनाओं को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। इसके कुछ प्रसंग अत्यंत भावपूर्ण एवं मार्मिक हैं। परमेश्वर 'द्विरेफ' के दोनों प्रबंध-काव्यों में क्रमश: मीरा और प्रेमचंद के वेदना एवं व्यथापूर्ण जीवन को अंकित करने का सफल प्रयास किया गया है। मीरा का चरित्रांकन अत्यंत कुशलता से किया गया है तथा विभिन्न भावों की व्यंजना में भी कवि ने पूर्ण सहृदयता का परिचय दिया है। 'युगस्रस्टा प्रेमचंद' भी उच्चकोटि का काव्य है, जिसमें नायक के व्यक्तित्व, चरित्र एवं जीवन-दर्शन को व्यक्त करने का सुंदर प्रयास किया गया है।

1857 ई. की प्रसिद्ध राष्ट्रीय क्रांति पर भी अनेक प्रबंध-काव्य उपलब्ध हैं, जैसे 'झाँसी की रानी' (श्यामनारायण प्रसाद: 1955), 'तात्या टोपे' (लक्ष्मीनारायण कुशवाहा : 1957), 'झाँसी की रानी' (आनंद मिश्र: 1959)। श्यामनारायण प्रसाद की कृति में महारानी लक्ष्मीबाई के शौर्य, त्याग एवं आत्मबलिदान की व्यंजना 23 सर्गों में सफलतापूर्वक की गई है। कवि की शैली में ओजस्विता एवं प्रवाहपूर्णता के गुण विद्यमान हैं। यहाँ कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं–

लग गई हृदय में रिपु-गोली,
सो गए भूमि के आँचल पर।

लिख दी मारुत ने वीर-कथा,
तरु-तरु के कंपित दल-दल पर॥

यह सुनकर रानी उछल पड़ी,
सिंहनी सदृश वह तड़प उठी।

अरि-हृदय-रक्त की प्यासी असि,
लेकर बिजली-सम कड़क उठी॥

इसी प्रकार **लक्ष्मीनारायण कुशवाहा** का 'तात्या टोपे' भी वीररस एवं राष्ट्रीय क्रांति के भावों से ओत-प्रोत अत्यंत सशक्त रचना है। यह 31 आहुतियों (सर्गों) में विभाजित है। कवि का आदर्श है–

पुण्य चरित्रों को गा करके कलम पुण्य हो जाती है।
कवि कर्तव्य निभा जाता है, कलम धन्य हो जाती है॥

नोट

'तात्या टोपे' में इसी आदर्श की उपलब्धि हुई है। कवि के कृतित्व को सफलता घोषित करने के लिए इसकी कुछ पंक्तियों का दिग्दर्शन पर्याप्त होगा–

जगे देश के सकल सूर में क्रांति-शंख का नाद हुआ।
देश-वेदिका पर मिटने को जन-जन में उन्माद हुआ।
सकल शत्रु विध्वंस करेंगे, सिंह देश के गरज चले,
जननि-सपूत जननि की खातिर, पूरा करने फरज चले॥

टास्क 'एकलव्य' किसके द्वारा रचित प्रबंध-काव्य है।

1958 ई. में प्रकाशित प्रबंध-काव्यों में **रामानंद तिवारी** का 'पार्वती', **बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'** का 'उर्मिला' एवं **गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'** का 'तारक-बध' उल्लेखनीय है। 'पार्वती' की रचना मुख्यत: कालिदास के 'कुमार-संभव' के आधार पर हुई है। पूरा काव्य 27 सर्गों में विभक्त है। परंपरागत कथानक में आधुनिक दृष्टि से अपेक्षित संशोधन-परिष्कार करते हुए विभिन्न पात्रों को सजीव रूप में प्रस्तुत किया गया है। तिवारी जी की शैली भी प्रौढ़ एवं सुविकसित है। 'नवीन' जी का 'उर्मिला' काव्य संभवत: 'साकेत' की सफलता से प्रेरित है। इसमें छ: सर्गों में उर्मिला-लक्ष्मण की कहानी को प्रभावोत्पादक शैली में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार 'गिरीश' जी का 'तारक-वध' भी पौराणिक कथावस्तु पर आधारित तथा उन्नीस सर्गों में विभक्त है। कथावस्तु के प्रस्तुतीकरण, पात्रों के चरित्र-चित्रण, भावव्यंजना, विचारों के औदात्य व शैली की प्रौढ़ता की दृष्टि से इसे एक सफल महाकाव्य माना गया है। कवि ने इसमें कार्तिकेय के द्वारा तारकासुर-वध को दैवी प्रवृत्तियों द्वारा आसुरी प्रवृत्तियों के दमन के रूप में प्रस्तुत किया है।

दिनकर जी ने 'उर्वशी'–(1961) में काम और प्रेम की समस्या को वैदिक युगीन कथानक–उर्वशी और पुरुरवा की कथा; ऋग्वेद दसवाँ मंडल–के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इनमें सौंदर्य, प्रेम और बिरह की व्यंजना सफल रूप में हुई है। अब तक दिनकर को केवल कठोर भावों एवं क्रांति का ही कवि माना जाता था, 'उर्वशी' की रचना ने सिद्ध कर दिया कि यह मधुर भावों एवं कोमल अनुभूतियों में किसी से पीछे नहीं है। कदाचित् स्वयं कवि ने इसी चुनौती को ध्यान में रखकर ही अपनी नई रचना प्रस्तुत की है। जब राजनीति के क्षेत्र में भी क्रांति के नेता सत्ता के भोग में लीन हो गए थे, ऐसे वातावरण में 'कुरुक्षेत्र' का कवि उर्वशियों का चित्रण करे तो अस्वाभाविक भी नहीं कहा जा सकता। अस्तु, कवि का प्रेरणा स्रोत चाहे जो हो, पर इसमें संदेह नहीं कि यह रचना कवि के गौण व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करती है; हिंदी कविता में 'कवि दिनकर' के नाम से जिस साहस, शौर्य एवं क्रांति का बोध होता है, उस कवि के अनुरूप यह कृति नहीं है। फिर भी नारी-व्यक्तित्व की गौरवपूर्ण प्रतिष्ठा, सौंदर्य के आकर्षक चित्रण, एवं कोमल भावनाओं की मधुर, व्यंजना की दृष्टि से यह उच्चकोटि का काव्य है। पुरुष के त्याग, संयम एवं चारित्रिक दृढ़ता का आख्यान वे बहुत पहले कर चुके थे; इसमें उसकी दुर्बलता और असहायता का उद्घाटन हुआ है–

चाहिए देवत्व पर इस आग को धर दूँ कहाँ पर
कामनाओं को विसर्जित व्योम में कर दूँ कहाँ पर
\+ \+ \+
बुद्धि बहुत करती बखान सागर तट की सिकता का
पर तरङ्ग-चुंबित सैकत में कितनी कोमलता है।

वस्तुत: 'उर्वशी' को अनेक दृष्टियों से 'कामायनी' के अनंतर इस युग का दूसरा प्रौढ़ महाकाव्य कहा जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी में महाकाव्य-परंपरा अभी तक अविच्छिन्न रूप में प्रवाहित है, यह दूसरी बात है कि इस परंपरा के सभी काव्य महाकाव्यत्व के उत्कर्ष को प्राप्त नहीं करते। फिर भी इनके द्वारा जीवन, समाज

नोट

एवं साहित्य में उच्च मानवता के उदात्त आदर्शों की प्रतिष्ठा का सुंदर प्रयास हुआ है। अत: इनका महत्त्व अक्षुण्ण है। यह दुर्भाग्य की बात है कि हिंदी के आलोचकों ने इनके प्रति उपेक्षात्मक दृष्टिकोण अपनाकर इनके साथ बड़ा अन्याय किया है, जिसका प्रतिकार अब हो जाना चाहिए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. 'कुमारसंभवम' .... की रचना है।

   (क) तुलसीदास (ख) विद्यापति (ग) कालिदास (घ) सूरदास

6. 'रावणवही' .... भाषा का महाकाव्य है।

   (क) संस्कृत (ख) प्राकृत (ग) अपभ्रंश (घ) हिंदी

7. चंदबरदायी, पृथ्वीराज चौहान के मंत्री और .... भी थे।

   (क) राजगुरु (ख) सिपहसालार (ग) सेनापति (घ) सलाहकार

8. महाकाव्य 'पद्मावत' कवि .... की रचना है।

   (क) चंदबरदायी (ख) बाण (ग) दिनकर (घ) जायसी।

10.5 सारांश (Summary)

- 'महाकाव्य' शब्द ही 'महत्' और 'काव्य' इन दो शब्दों के समास से व्युत्पन्न है। भारतीय साहित्य के काव्य के साथ 'महत्' विशेषण का प्रयोग सर्वप्रथम वाल्मीकिकृत रामायण के उत्तरकांड में मिलता है।
- संस्कृत आचार्यों में महाकाव्य के स्वरूप की सर्वप्रथम विस्तृत व्याख्या करने का श्रेय आचार्य भामह को है, जिन्होंने अपने 'काव्यालंकार' में बंध की दृष्टि से काव्य के पाँच भेद किये हैं–1. सर्गबद्ध, 2. नाटक, 3. आख्यायिका, 4. कथा और 5. अनिबद्ध (मुक्तक) काव्य। सर्गबद्ध का ही दूसरा नाम महाकाव्य है।
- पश्चात्य विद्वानों ने भी महाकाव्य (Epic) को गौरवपूर्ण स्थान देते हुए उसके स्वरूप की विभिन्न प्रकार से व्याख्या की है। प्रसिद्ध यूनानी आलोचक अरस्तू (Aristotle) ने अपने काव्य-शास्त्र (Poetics) में लिखा है कि "महाकाव्य ऐसे उदात्त व्यापार का काव्यमय अनुकरण है: जो स्वत: गंभीर एवं पूर्ण हो, वर्णनात्मक हो, सुंदर शैली में रचा गया हो, जिसमें आद्यंत एक छंद हो, जिसमें एक ही कार्य हो जो पूर्ण हो, जिसमें प्रारंभ, मध्य और अंत हो, जिसके आदि और अंत एक दृष्टि में समा सकें, जिसके चरित्र श्रेष्ठ हों, कथा संभावनीय हो और जीवन के किसी एक सार्वभौम सत्य का प्रतिपादन करती हो।"
- आधुनिक युग में महाकाव्य के स्वरूप एवं लक्षणों के संबंध में हमारे आलोचकों एवं कवियों के दृष्टिकोण में पर्याप्त विकास हुआ है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने पूर्ववर्ती संस्कृत-आचार्यों के निर्धारित लक्षणों की उपेक्षा करते हुए उसके केवल चार तत्त्वों को महत्त्व दिया है–(1) इतिवृत्त, (2) वस्तु-व्यापार वर्णन, (3) भावव्यंजना और (4) संवाद।
- भारतीय महाकाव्य-परंपरा का आरंभ रामायण और महाभारत से होता है, यद्यपि इनसे भी पूर्व कुछ महाकाव्य लिखे गए थे, जो अनुपलब्ध हैं।
- रामायण आदि-कवि वाल्मीकि की सुंदर कृति है, जिसमें राम के चरित्र का गुणगान सात कांडों में किया गया है। महाभारत आकार-प्रकार की दृष्टि से रामायण की अपेक्षा बहुत विस्तृत है तथा यह अठारह पर्वों में विभक्त है। आगे चलकर संस्कृत में अनेक महाकाव्य लिखे गए जिनमें अश्वघोष का 'बुद्धचरित', कालिदास के 'कुमारसंभव' और 'रघुवंश', भारवि का 'किरातार्जुनीय', माघ का 'शिशुपाल वध' श्रीहर्ष का 'नैषधीय चरित' उल्लेखनीय हैं।

नोट

- प्राकृत और अपभ्रंश में महाकाव्य-परंपरा और आगे बढ़ी। प्राकृत के महाकाव्यों में 'रावण वही' (रावण वध), 'लीलाबाई' (लीलावती), सिरिचिह्नकव्वं (श्रीचिह्नकाव्य), उसाणिरुद्ध (उषानिरुद्ध), कंस वही (कंस वध) आदि उल्लेखनीय हैं। अपभ्रंश में जैन कवियों द्वारा भी उच्च कोटि के महाकाव्य लिखे गए जिनमें कुछ ये हैं–स्वयंभू (9वीं सदी ई.) के 'पद्मचरित' और 'रिट्ठणेमिचरिउ' में क्रमश: रामायण और महाभारत से कथानक ग्रहण किया गया है।
- प्राकृत और अपभ्रंश की महाकाव्य परंपरा हिंदी में और भी अधिक पल्लवित, पुष्पित और विकसित हुई। हिंदी में हमें अनेक महाकाव्य–पद्मावत, रामचरितमानस, कामायनी, कुरुक्षेत्र आदि दृष्टिगोचर होंगे, जिन पर किसी भाषा का साहित्य गर्व कर सकता है।

10.6 शब्दकोश (Keywords)

आख्यायिका – सिलसिलेवार कहानी या वृतांत, वह आख्यान जिसमें पात्र अपने मुँह से अपना चरित कहते हैं।

सर्गबद्ध – सर्गों में विभक्त महाकाव्य।

धीरोदात्त – आत्मश्लाघा से रहित, क्षमाशील, विनम्र एवं दृढ़व्रत नायक।

10.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. महाकाव्य के संबंध में विभिन्न दृष्टिकोणों की व्याख्या करें।
2. संस्कृत के महाकाव्यों पर प्रकाश डालें।
3. 'रामचरितमानस' किसी एक युग, एक भाषा और एक कला का विषय नहीं बल्कि विभिन्न युगों, भाषाओं और कलाओं में चित्रित होता रहा है। इस कथन की विवेचना करें।
4. जायसी रचित हिंदी महाकाव्य 'पद्मावत' प्रेमाख्यान परंपरा का श्रेष्ठ ग्रंथ है, विश्लेषण करें।
5. हिंदी महाकाव्य पर निबंध लिखें।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. भामह	2. रामायण	3. अठारह	4. 'रामचरितमानस'
5. (ग)	6. (ख)	7. (ग)	8. (घ)।

10.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. सरल हिंदी व्याकरण और रचना–*वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. परिष्कृत हिंदी व्याकरण–*बद्रीनाथ कपूर, प्रभात प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*

नोट

इकाई–11 : पौराणिक प्रबंध काव्य की परंपरा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
11.1 पौराणिक प्रबंध-काव्यों की पूर्व परंपरा
11.2 प्रारंभिक कवि
11.3 तुलसीदास और उनका काव्य
11.4 प्रमुख विशेषताएँ एवं महत्त्व
11.5 सारांश (Summary)
11.6 शब्दकोश (Keywords)
11.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
11.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्रारंभिक कवियों को जानने में।
- तुलसीदास और उनके काव्य को जानने में।
- आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

हिंदी के मध्यकालीन काव्य के अंतर्गत शताधिक ऐसे प्रबंध-काव्य मिलते हैं, जिनकी विषय-वस्तु पौराणिक ग्रंथों पर आधारित है। पर साथ ही उनमें काव्यात्मकता का भी अभाव नहीं है। वस्तुतः विषय-वस्तु के विस्तार, पात्रों के वैविध्य एवं शैली की प्रौढ़ता की दृष्टि से इस वर्ग की रचनाएँ उच्चकोटि की सिद्ध होती हैं, जिन्हें हम 'पौराणिक प्रबंध-काव्य-परंपरा' शीर्षक के अंतर्गत स्थान दे सकते हैं, इनमें राम, कृष्ण, सुदामा, प्रद्युम्न, अर्जुन, प्रह्लाद, ध्रुव आदि विभिन्न पौराणिक पात्रों के चरित्र का अंकन किया गया है, किंतु दुर्भाग्य से हिंदी के प्रचलित इतिहास-ग्रंथों में इस परंपरा को 'राम-भक्ति-शाखा' या 'राम-काव्य-परंपरा' की संज्ञा दे दिए जाने के कारण केवल राम-विषयक कतिपय प्रबंधों को छोड़कर शेष को 'फुटकल खाते' में ही स्थान प्राप्त हो सका। यह भी विचित्र बात है कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे प्रौढ़ समीक्षक ने 'राम-भक्ति-शाखा' की स्थापना करते हुए तुलसी से उसका आरंभ माना है और उन्हीं से उसकी समाप्ति मानी है, क्योंकि 'गोस्वामी जी की प्रतिभा का प्रखर प्रकाश सौ डेढ़ सौ वर्ष तक ऐसा छाया रहा राम-भक्ति की और रचनाएँ उनके सामने ठहर न सकीं।' यहाँ तुलसी की जिस विशेषता की दाद दी गई, बिहारी के प्रसंग में भी उसी विद्वान ने इससे बिलकुल विपरीत बात के लिए प्रशंसा की है। वहाँ वे लिखते हैं कि बिहारी सतसई को लेकर इतने व्यक्तियों ने उनका अनुकरण किया कि 'बिहारी संबंधी अलग साहित्य ही खड़ा हो गया है, इतने से ही इस ग्रंथ की सर्वप्रियता का अनुमान हो सकता है।' एक समर्थ आलोचक

किस प्रकार दो विरोधी बातों को भी एक जैसी सिद्ध कर सकता है, इसका यह उत्कृष्ट उदाहरण है। पर वास्तविकता यह है कि एक प्रबंध-काव्य, दो नाटकों और मुक्तक-संग्रहों के आधार पर स्थापित 'राम-काव्य-परंपरा' परंपरा या शाखा कहलाने योग्य नहीं है, क्योंकि एक जैसी काव्य-शैली एवं काव्य-रूपों वाली कम-से-कम आठ-दस रचनाएँ हों तो उसे 'परंपरा' का नाम दिया जा सकता है। अस्तु, हम 'राम-भक्ति-शाखा' जैसे अनुपयुक्त एवं संकीर्ण नाम का बहिष्कार करते हुए इस परंपरा को 'पौराणिक प्रबंध-काव्य-परंपरा' के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास करते हैं जिससे कि इस युग के सभी पौराणिक प्रबंधों को यथोचित स्थान दिया जा सके।

11.1 पौराणिक प्रबंध-काव्यों की पूर्व परंपरा

धार्मिक महापुरुषों को लेकर प्रबंध-काव्य लिखने की परंपरा का प्रवर्तन प्राचीनकाल में ही संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश में हो गया था। जहाँ वाल्मीकि ने 'रामायण', अश्वघोष ने 'बुद्धचरित' की रचना संस्कृत में की, वहाँ अनेक जैन कवियों ने प्राकृत एवं अपभ्रंश में विभिन्न तीर्थंकरों एवं धार्मिक नेताओं के चरित्र का अंकन काव्यात्मक शैली में किया। प्राकृत में चरित 'पउम चरिय' (विमल सूरि : 60 ई), 'चउपन्न महापुरिस चरिय' (शीलाचार्य; 868 ई), 'सुपास्सनाह चरिय' (श्री पार्श्वनाथ चरित्र), 'महावीर चरित', 'सुमतिनाथ चरित' आदि तथा अपभ्रंश में रचित 'पउम चरिउ' (पद्म चरित्र : स्वयंभू), 'रिट्ठणेमि चरिउ' (स्वयंभू), 'तिसट्ठी महापुरिस गुणालंकार' (पुष्पदंत), 'जसहर चरिउ' (पुष्पदंत), 'जंबुसामि चरिउ' (वीर कवि), 'पास चरिउ' (पार्श्व चरित: पद्मकीर्ति), 'जिणदत्त चरिउ' (लक्खन), 'णेमिणाह चरिउ' (नेमिनाथ चरित लक्ष्मणदेव), 'वर्द्धमान चरिउ' (जयमित्र) आदि उल्लेखनीय हैं। जैन-कवियों द्वारा विकसित यही धार्मिक चरित काव्य-परंपरा सीधी हिंदी में भी पहुँची है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण एक तो यह है कि इस परंपरा का प्रथम हिंदी कवि सुधारु अग्रवाल जैन ही था उसने 'प्रद्युम्न चरित' की रचना में जैन कवियों के ही दृष्टिकोण, विषय-वस्तु एवं शैली का अनुकरण किया है; दूसरे **हिंदी के अधिकांश प्रबंध-काव्य 'चरित' संज्ञक हैं** यहाँ तक कि तुलसीदास ने भी अपने प्रबंध का नाम 'रामायण' न रखकर 'रामचरितमानस' रखा है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि अपभ्रंश में प्रेम-कथाओं को भी 'चरित' की संज्ञा दी जाती है, जबकि हिंदी में ऐसा नहीं किया गया।

हिंदी के पौराणिक प्रबंध-काव्यों के विकास में जैन-चरित-काव्यों की परंपरा के अतिरिक्त दक्षिण के पौराणिक प्रबंध-काव्यों की परंपरा का भी गहरा योगदान संभव है। जैसा कि अन्यत्र बताया गया है, तमिल, मलयालम, कन्नड़ एवं मराठी में वैष्णव पुराणों के विभिन्न पात्रों को लेकर प्रबंध-काव्य लिखने की एक सुदृढ़ परंपरा का प्रवर्त्तन एवं विकास हिंदी की इस परंपरा के विकास से पूर्व हो चुका था, अत: यह बहुत संभव है कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में इन परंपराओं में पारस्परिक संबंध हो। पर अभी इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन के अभाव में इस संबंध में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है।

नोट्स अपभ्रंश में प्रेम-कथाओं को भी 'चरित' की संज्ञा दी जाती है।

प्रेरणास्रोत एवं उद्‌गम-स्रोत–हिंदी में इस परंपरा के काव्य प्राय: धार्मिक प्रेरणा से ही रचित हैं, किंतु उनमें संप्रदाय-विशेष की कट्टरता परिलक्षित नहीं होती। जिस प्रकार संत-काव्य, कृष्ण-काव्य, रसिक-भक्ति-काव्य, संप्रदाय-विशेष के धार्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हैं, वहाँ यह बात इन पर लागू नहीं होती। इनमें संप्रदाय के प्रचार की भावना कम है, अपने आराध्य या उसके भक्तों के गुण-गान की ही प्रवृत्ति अधिक है। वस्तुत: इनका धर्म के क्षेत्र में समन्वयात्मक एवं व्यापक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

पौराणिक प्रबंध-काव्यों में से बहुसंख्यक काव्य वैष्णव पुराणों से संबंधित हैं, यद्यपि अपवाद-स्वरूप जैन और शैव मत से संबंधित पुराण-कथाओं पर भी कुछ प्रबंध अवलंबित हैं। वैष्णव-वर्ग के काव्य मुख्यत: रामायण, महाभारत एवं भागवत पुराण पर आधारित हैं, गौण रूप से कुछ अन्य पुराणों से भी संबंधित हैं। सामान्यत: इन्हीं ग्रंथों को इस परंपरा के मूल स्रोतों के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

नोट

11.2 प्रारंभिक कवि

इस परंपरा के उपलब्ध हिंदी ग्रंथों में सर्वप्रथम 'प्रद्युम्न चरित' का नाम आता है जिसके रचयिता सुधारु अग्रवाल थे। सुधारु जैन धर्म में दीक्षित थे, अत: उन्होंने प्रद्युम्न के आख्यान को जैन परंपरा के अनुसार प्रस्तुत करते हुए अंत में अपने धर्म की महत्ता का प्रतिपादन किया है। इस दृष्टि से प्रस्तुत काव्य को हिंदी के वैष्णव प्रबंध काव्यों की अपेक्षा अपभ्रंश के जैन-काव्यों की परंपरा में स्थान देना अधिक उचित होगा! किंतु भाषा की दृष्टि से ऐसा करना संभव नहीं। जैसा कि पीछे स्पष्ट किया गया है, हिंदी के वैष्णव कवियों ने यह परंपरा अपभ्रंश के जैन कवियों से ही अपनाई थी, सुधारु का 'प्रद्युम्न चरित' बीच की वह कड़ी है, जो अपभ्रंश और हिंदी के पौराणिक काव्यों को परस्पर संबद्ध करती है तथा इस विनिमय को प्रमाणित करती है। अत: सांप्रदायिक दृष्टि से यह रचना पौराणिक काव्यों के प्रतिकूल होती हुई भी, काव्य रूप, विषय-वस्तु एवं प्रतिपादन-शैली की दृष्टि से इस परंपरा की आदि हिंदी रचना सिद्ध होती है।

'प्रद्युम्न-चरित' का प्रारंभिक अध्ययन एवं इसके कुछ अंशों का प्रकाशन डॉ. शिवप्रसाद सिंह के द्वारा उनके शोध प्रबंध 'सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य' के अंतर्गत हो चुका है जिससे इसके संबंध में अनेक तथ्यों का पता चलता है। कवि ने अपभ्रंश के चरित काव्यों की शैली का अनुकरण करते हुए काव्य का आरंभ सरस्वती की स्तुति, इष्टदेव की वंदना, रचना के प्रयोजन एवं रचनाकाल के निर्देश के साथ किया है, यथा–

(क) सरस्वती की स्तुति :

सारद विष्णु मति कवितु न होइ,
मकु आखर णवि बुझइ कोइ।
सो सादर पणमइ सुरसती,
तिन्हि कहुँ बुधि होइ कत हुती॥ 1॥

(ख) रचना का प्रयोजन :

सरस कथा रस उपजइ घणउ।
निसुणहु चरित पदूमह तणउ।

(ग) रचना-काल का निर्देश :

सम्मत चउदह सौ हुइ गयौ।
ऊपर अधिक एगारह भयौ।
भादव बदी पंचमी सो सारू।
स्वाति नक्षत्र सनीचर वारू॥

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि रचनाकाल संबंधी यह उल्लेख गणना के द्वारा भी शुद्ध साबित हुआ है। डॉ. हरीलाल की जाँच के अनुसार उपर्युक्त तिथि ईसवी सन् 1354 के 9 अगस्त शनिवार को पड़ती है तथा नक्षत्र भी इस दिन स्वाति ही पड़ता है, अत: इस तिथि को असंदिग्ध रूप से 'प्रद्युम्न चरित' के रचनाकाल के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

क्या आप जानते हैं हिंदी ग्रंथों में सर्वप्रथम 'प्रद्युम्न चरित' का नाम आता है जिसके रचयिता सुधारु अग्रवाल थे।

कथा का आरंभ नारद के कृष्ण के यहाँ पहुँचने की घटना से होता है। कृष्ण की पटरानी सत्यभामा अपने उपेक्षापूर्ण व्यवहार से नारद को अप्रसन्न कर देती है जिससे वे इसका बदला लेने के लिए कृष्ण-रुक्मिणी के विवाह की आयोजना करते हैं। सत्यभामा और रुक्मिणी में सौतिया डाह एवं प्रतिद्वंद्विता का भाव जाग्रत होता है

नोट

तथा वे शर्त लगाती हैं कि जिसके पहले पुत्र उत्पन्न होगा, वही प्रधान होगी। दोनों के साथ-साथ पुत्र होते हैं किंतु रुक्मिणी-पुत्र प्रद्युम्न को एक दैत्य उठा ले जाता है, किंतु दैवयोग से बच जाता है तथा सोलह वर्ष के पश्चात् सोलह प्रकार की उपलब्धियों एवं दो प्रकार की विद्याओं के साथ पुन: लौटता है तथा नारद की प्रेरणा से सत्यभामा को भाँति-भाँति के कष्ट पहुँचाता है। फलत: बलराम और प्रद्युम्न में संघर्ष होता है तथा आगे कृष्ण और प्रद्युम्न में भी युद्ध होता है। प्रद्युम्न अनजान से अपनी माँ रुक्मिणी का भी अपहरण कर लेता है, किंतु नारद के द्वारा रहस्योद्घाटन हो जाने पर कृष्ण एवं प्रद्युम्न में मेल-मिलाप हो जाता है। प्रद्युम्न अनेक विवाह करता है तथा कृष्ण की मृत्यु व यादवों के नाश के पश्चात् वह जैन धर्म की दीक्षा ले लेता है और अंत में कैवल्य पद प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार इस कथा का स्रोत मुख्यत: जैन पुराण ही है, वैष्णव पुराणों से इसका कोई मेल नहीं है। अपभ्रंश में प्रद्युम्न के चरित को लेकर अनेक प्रबंध-काव्यों की रचना की गई थी, प्रस्तुत काव्यों का कथानक भी उन्हीं पर आधारित है।

पूरा ग्रंथ लगभग सात सौ चौपाइयों में समाप्त हुआ है। विभिन्न प्रसंगों के आयोजन एवं प्रस्तुतीकरण तथा भावानुभूतियों की व्यंजना में कवि को पर्याप्त सफलता मिली है।

चौदहवीं शताब्दी के दूसरे कवि, जो इस परंपरा में आते हैं, जाखू मणियार हैं, जिन्होंने 'हरिश्चंद्र पुराण' की रचना चैत्र मास की दशमी रविवार, 1453 वि. (1396 ई.) में की थी। इसका निर्देश स्वयं कवि ने इस प्रकार दिया है–

चौदह सै तिरपनैं विचार, चैतमास दिन आदित वार।
मन माँहि सुमिर्‌यो आदीत, दिन वसराहे कियो कवीत॥

काव्य का आरंभ गणेश एवं शारदा की स्तुति के साथ करते हुए रचनाकाल, प्रेरणास्रोत एवं आधारभूत ग्रंथ का भी निर्देश कर दिया गया है। कवि के उल्लेख के अनुसार उसकी मूल कथा ऋषि कृष्ण द्वैपायन (व्यास) द्वारा वर्णित है। वस्तुत: इसका आधार महाभारत ही है–

किस्न दीपायन भारत कीयो, आश्रम छाँडि रिषि नीस यो।
जनमेजय के रावलि गयो, भेट्यो राउ हरिषि मन भयो॥

\+ + +

किस्न दीपायन क्रिपा अब करौ, बेगि मोहि भारत उच्चरौ॥

यद्यपि इस काव्य की कथावस्तु सत्यवादी हरिश्चंद्र के परंपरागत पौराणिक इतिवृत्त पर ही आधारित है, किंतु जैसा कि डॉ. शिवप्रसाद सिंह ने संकेत किया है–'कवि ने अपनी मौलिक उद्‌भावना के बल पर कई प्रसंगों को काफी भावपूर्ण एवं मार्मिक बनाने का प्रयास किया है।' इसकी एक हस्तलिखित प्रति श्री अगरचंद नाहटा के ग्रंथालय में सुरक्षित है तथा पूरा ग्रंथ लगभग 600 छंदों में समाप्त हुआ है। मुख्यत: इसमें चौपाई छंद ही प्रयुक्त है, किंतु बीच-बीच में कुछ छंद–'वस्तु', 'अठतालौ' आदि–भी प्रयुक्त हैं। यह रचना अभी तक अप्रकाशित है, किंतु इसके जो अंश प्रकाश में आये हैं, उन्हें देखने से यह पर्याप्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है। विभिन्न भावों की व्यंजना में–विशेषत: करुण रस के प्रसंग में–कवि ने सच्ची सहृदयता का परिचय दिया है, यथा रोहिताश्व की मृत्यु पर शैय्या का विलाप द्रष्टव्य है–

विप्र पुँछि वन भीतर जाइ, रानी अकेली खरी बिलखाई।
सुत! सुत?' कहै चयण उचरइ, नयण नीर जिमि पाउस झरइ॥
हा ध्रिग! हा ध्रिग! करैं संसारा, फाटइ हियो अति करइ पुकारा।
तोड़इ लट अरु फाड़इ चीर, देखै मुख अरु चौवे नीर॥
दीठै पड़ियो जीवन आधारा, सनौ आज भयौ संसारा।

वस्तुत: अनुभूति को गंभीरता एवं शैली की प्रौढ़ता की दृष्टि से उच्चकोटि का काव्य है। इसका अध्ययन पूर्ववर्ती एवं परवर्ती पौराणिक काव्यों की अनेक प्रथाओं एवं रूढ़ियों को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध हो सकता है, किंतु दुर्भाग्य से यह रचना अभी तक अप्रकाशित है।

नोट

अनेक पौराणिक प्रबंध काव्यों के रचयिता विष्णुदास तो अभी तक हिंदी के सूरदास एवं तुलसीदास जैसे महान कवियों के भी पथप्रदर्शक सिद्ध होते हैं। मध्यकाल के दोषपूर्ण विभाजन के कारण न तो वे राम-काव्य की संकीर्ण सीमा में बँध पाते थे और न ही कृष्ण-काव्य के ढाँचे में ही, फलत: वे इतिहास में कोई स्थान पाने से वंचित रहे। अन्यथा उनकी रचनाओं का विवरण काशी नागरी प्रचारिणी सभा की 1906-8, 1912 एवं 1926-28 की खोज रिपोर्ट में प्रकाशित हो चुका था, अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल को उनका पता नहीं था।

विष्णुदास ग्वालियर नरेश राव डूगेंद्रसिंह के राज्यकाल (आरंभ 1424 ई.) में वर्तमान थे तथा उनकी पाँच रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं–(1) महाभारत कथा (2) रुक्मिणी मंगल, (3) स्वर्गारोहण, (4) स्वर्गारोहण पर्व और (5) स्नेह-लीला। इनमें तीसरी और चौथी एक ही प्रतीत होती है, अत: इनकी चार रचनाएँ ही मानी जानी चाहिए। ये सभी रचनाएँ प्रबंधात्मक शैली में रचित होने के कारण प्रस्तुत परंपरा में आती हैं। 'महाभारत कथा' में पांडवों का चरित प्रस्तुत किया गया है, जो 1465 ई. की रचित मानी गई है। इसमें धार्मिक दृष्टिकोण की प्रमुखता है, क्योंकि कवि ने लिखा है–

पांडु चरित जो मन दै सुनै, नासै पाप विष्णु कवि भनै।
एक चित्र सुनैं दैं कान, ते पावैं अमरापुर थान॥

पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि यह काव्यात्मकता से शून्य है। वस्तुत: धार्मिक दृष्टिकोण की प्रधानता होते हुए भी यह काव्यात्मक रचना है। उदाहरणार्थ इसकी कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

विनसै धर्म कियि पाखंडू विनस नासिर गेह परचंडू।
विनसे रांडु पढ़ाये पांडे विनसै खेले ज्वारी डाँडे॥
विनसै नीच तनै उपजारू, विनसै सूत पुराने हारू।
विनसै माँगनी जरैजु लाजै, विनसै जूझ नोय बिन साजै॥

यहाँ 'विनसै' की आवृत्ति का चमत्कार है, जो लगभग चालीस पंक्तियों में चलता है। आवृत्ति की यह प्रवृत्ति अपभ्रंश के जैन कवियों में भी प्रमुख रूप से मिलती है, जिसका विकास दूसरी ओर हिंदी के रोमांसिक कथा-काव्यों में भी मिलता है।

'स्वर्गारोहण' या 'स्वर्गारोहण पर्व' में पांडवों के स्वर्ग-गमन की कथा दी गई है, जो दोहा-चौपाई छंदों में प्रस्तुत है। कदाचित् यह कल्पना की जा सकती है कि प्रस्तुत काव्य कवि की 'महाभारत कथा' का ही एक अंश होगा। किंतु वस्तुत: यह स्वतंत्र ग्रंथ है जिसका प्रमाण निम्नांकित मंगलाचरण है–

गवरी नंदन सुमति दै गन नायक बरदान।
स्वर्गारोहण ग्रंथ के वरणों तत्व बखान।

यहाँ 'ग्रंथ' का उल्लेख इसके स्वतंत्र अस्तित्व का द्योतक है। रचना-शैली की दृष्टि से यह ग्रंथ भी उनकी 'महाभारत कथा' के स्तर का प्रतीत होता है, नमूने के रूप में कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

सुतहु भीम कह धर्म नरेसा। बार बार सुन ले उपदेसा।
अब यह राज तात तुम लेहू। कै भैया अर्जुन कहँ देहू।
राज सकल अरु यह संसारा। मैं छाँड़ौं यह कहै भुवारा।
बंधु चार ते लये बुलाई। तिन सों कहीं बात यह राई।

काव्यत्व की दृष्टि से इनकी अपेक्षा 'रुक्मिणी मंगल' में कवि को अधिक सफलता मिली है। इस काव्य में एक स्थान पर कवि ने अपने-आपको 'भाषा-काव्य' बनाने के लिए कोसा भी है–

तुछ मत मोरी थोरी सी बौराइ भाषा काव्य बनाई।
रोम रोम रसना जो पाऊँ महिला वर्ण नहिं जाई।

'रुक्मिणी मंगल' प्रबंधात्मक शैली में रचित है, फिर भी इसके बीच-बीच में विभिन्न राग-रागिनियों के पदों और गीतों का आयोजन किया गया है।

नोट

वस्तुतः जिस प्रकार दोहा-चौपाई शैली में 'स्वर्गारोहण' काव्य को प्रस्तुत करके विष्णुदास ने परवर्ती पौराणिक प्रबंध-रचयिताओं (जिनमें गोस्वामी तुलसीदास भी आ जाते हैं) का पथप्रदर्शन किया, वहाँ उन्होंने कृष्ण-भक्ति-विषयक पद लिखकर कुंभनदास, सूरदास आदि के लिए भी नई परंपरा का प्रवर्तन किया। अतः काव्यत्व की दृष्टि से विष्णुदास भले ही बहुत उच्चकोटि के कवि सिद्ध न हों, किंतु ऐतिहासिक दृष्टि से उनका महत्त्व बहुत अधिक है।

ईसा की पंद्रहवी सदी के अंतिम भाग में एक अन्य महत्त्वपूर्ण कवि ईश्वरदास हुए, जिन्होंने अनेक पौराणिक कथाओं को काव्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया, जैसे–'सत्यवती कथा' 'स्वर्गारोहिणी कथा', 'एकादशी कथा' एवं 'भरत मिलाप'। इनमें 'सरस्वती कथा' का आधार पौराणिक होते हुए भी इसका प्रस्तुतीकरण रोमांसिक शैली में हुआ है। शेष रचनाओं के नाम से धार्मिकता एवं पौराणिकता का आभास स्पष्ट रूप में मिलता है, किंतु इसमें काव्यात्मकता का अभाव नहीं है, अतः वे यहाँ विवेच्य हैं। 'स्वर्गारोहिणी कथा' पांडवों के स्वर्गारोहण-प्रसंग से संबंधित है। इसका आरंभ गणपति एवं शारदा की वन्दना, इष्टदेव की स्तुति, पूर्व कवियों के प्रति कृतज्ञता-प्रकाशन, सज्जन एवं दुर्जन की प्रशंसा-निंदा, रचनाकाल के निर्देश, तत्कालीन नरेश के उल्लेख, अपने कुल के परिचय, काव्य-स्रोत एवं काव्य-प्रयोजन के निर्देश के साथ किया है, इससे जहाँ काव्य-रूप संबंधी विभिन्न प्रवृत्तियों का पता चलता है, वहाँ कवि ईश्वरदास एवं उसके काव्य से संबंधित विभिन्न तथ्यों पर भी प्रकाश पड़ता है। काव्यारंभ में की गई इष्टदेव की वंदना केवल रूढ़िनिर्वाह मात्र जैसी प्रतीत नहीं होती, उसमें भक्ति-भाव की सच्ची प्रेरणा परिलक्षित होती है, यथा–

राम नाम कवि नरक नेवारा, तेहि सेवा मनु लागु हमारा।
संख चक्र घरु सारंग पानी, दया करहु कुछु कहौं बखानी।
मरम न जानौ केसव तोरा, तुम्हरे चरन चितु लागै मौरा।
राम नाम भाव दिन राती, अछर मेरवहु निरमल मोती।
राम नाम ईसर कवि गाए, सुनहु लोग तुम मन चितु लाए।

कवि का प्रयोजन मुख्यतः पाठकों की धार्मिक भावनाओं का उद्‌बोधन करते हुए उन्हें पाप से मुक्ति दिलवाना ही है–

अछर तीनि बखानौं, भारत कथा चित लाइ।
कहै ईसर जे सुनितौ, ताकर पाप छै (क्षय) जाइ।

सारी कथा दोहा-चौपाई शैली में प्रस्तुत है। वस्तुतः काव्य-रूप एवं उसकी विभिन्न रूढ़ियों एवं प्रवृत्तियों की दृष्टि से यह तुलसी के 'रामचरितमानस' का पूर्व विकसित पूर्व रूप है। प्रारंभ की जिन विशेषताओं का उल्लेख हमने अभी किया है; वे सभी 'मानस' में भी मिलती हैं। इस दृष्टि से प्रस्तुत काव्य का विशेष महत्त्व है।

धार्मिक दृष्टिकोण के होते हुए भी, ईश्वरदास कोरे कथाकार नहीं हैं, उनमें कवित्व शक्ति भी पर्याप्त मात्रा में है। इसीलिए उन्होंने उपर्युक्त कथा को शुष्क इतिवृत्त होने से बचा लिया। अनेक स्थानों पर वस्तु निरूपण एवं भावों की व्यंजना सफलतापूर्वक की गई है, यथा–

(क) अर्जुन का युद्ध कौशल–

जस बिजुली कै मारत, परबत फाट अघात।
तस अरजुन के वानन्ह, कोरौ भये निपात॥

(ख) युधिष्ठिर का शोक–

बंधु सोग मैं सहैं न पारौं, बंधु बिना जग जीवन हारौं।
बंधु वर्ग मारा सुख लागी, सोग हिदै बारत है आगी।

इनकी दूसरी पौराणिक रचना 'एकादशी कथा' भी काव्यात्मकता से शून्य नहीं है। यद्यपि इसका आरंभ उतने विधि-विधानों के साथ नहीं किया गया, किंतु बीच-बीच में नगर-वर्णन, नारी-सौंदर्य, सौंदर्याकर्षण, शोकानुभूति, निर्वेद आदि का निरूपण जिस सरस एवं भावोत्पादक शैली में किया गया है, वह इसे उत्कृष्ट काव्यकृति सिद्ध करता है, कुछ प्रसंग देखिए–

नोट

(क) मोहिनी का रूप-सौंदर्य–

जहँ लगु होइ सजल संसारु, काढ़ि लेहु सब कर रूप सुढ़ारू।
एकै करता काढ़ि लेदु रासी, विसु काव्य लै बैठु संडासी।

(ख) मोहिनी का सौंदर्याकर्षण–

नैन कटोरन्ह चितवै नारी, हरि हर ब्रह्मा रहे निहारी।
देखि रिषै सबै अकुलाई, देखि कामिनि तन दरसे आई।
ध्यान छूट रिषै देख जागी, जानहु एक चित्र होइ लागी।
नर गंधर्व देखहिं चित लाई, नारि देखि सब गये मुरछाई।

ईश्वरदास की एक अन्य रचना 'भरत मिलाप' बताई जाती है जो काफी विवादास्पद है। इसकी विभिन्न प्रतियाँ प्राप्त हैं जिनमें परस्पर गहरा पाठ-भेद मिलता है तथा रचयिता का नाम भी उनमें अलग-अलग है। सामान्यत: इनमें तीन नाम आये हैं–तुलसीदास, ईश्वरदास एवं सूरजदास। डॉ. शिवगोपाल मिश्र के मतानुसार यह इन्हीं ईश्वरदास की रचना है, क्योंकि इसकी एक प्रति उन्हें ईश्वरदास की अन्य रचनाओं के साथ ही प्राप्त हुई थी तथा भाषा-शैली एवं अनेक प्रतियों के उल्लेख के अनुसार भी यह ईश्वरदास की रचना प्रतीत होती है।

वस्तुत: पौराणिक प्रबंध-काव्य-परंपरा को आगे बढ़ाने में ईश्वरदास का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भले ही हम आज जायसी एवं तुलसी के प्रौढ़ काव्यों के समक्ष इनकी रचनाओं को नगण्य एवं उपेक्षणीय समझें, किंतु इतिहास की इस धारा के विकासक्रम को समझने तथा परवर्ती काव्यों के विभिन्न उपादान-स्रोतों को जानने के लिए ईश्वरदास की रचनाओं का अध्ययन अपरिहार्य है।

परंपरा का विकास–सोलहवीं सदी के मध्य भाग से इस परंपरा का अत्यंत द्रुतगति से विकास हुआ, जिसका अनुमान इसी तथ्य से किया जा सकता है कि सोलहवीं से लेकर बीसवीं सदी के आरंभ तक रचित लगभग डेढ़ सौ पौराणिक प्रबंध काव्य अब तक उपलब्ध हो चुके हैं, जो इस परंपरा में आते हैं। इन्हें विषय-वस्तु की दृष्टि से स्थूल रूप में तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।–(1) भागवत पुराण तथा कृष्ण चरित्र पर आधारित काव्य, (2) रामायण तथा रामचरित पर आधारित काव्य और (3) महाभारत तथा कौरव-पांडव के चरित्र पर आधारित काव्य। इनके अतिरिक्त कुछ काव्य ऐसे भी हैं जिनका संबंध वैष्णव परंपरा से न होकर शैव, सिक्ख, जैन परंपराओं से है। यहाँ हम केवल रामायण तथा रामचरित पर आधारित काव्यों का ही परिचय संक्षेप में दे रहे हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. पौराणिक प्रबंध काव्यों में से बहुसंख्यक काव्य .... से संबंधित हैं।
2. सुधारु .... में दीक्षित थे।
3. हिंदी के अधिकांश प्रबंध-काव्य .... हैं।
4. 'हरिश्चंद्र पुराण' की रचना .... ने की है।

11.3 तुलसीदास और उनका काव्य

रामचरित से संबंधित हिंदी का प्रथम प्रबंध-काव्य संभवत: ईश्वरदास कृत 'भरतमिलाप' है, जो सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में लिखा गया था। इसकी विवेचना की जा चुकी है। इसके अनंतर गोस्वामी तुलसीदास जी के विभिन्न प्रबंध-काव्य आते हैं, जो इस परंपरा की सर्वोत्कृष्ट रचनाएँ माने जाते हैं। वस्तुत: तुलसीदास समस्त मध्यकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि के रूप में स्वीकार किए जाते हैं अत: इनके साहित्य पर यहाँ अपेक्षाकृत अधिक विस्तार से विचार किया जाता है।

नोट

तुलसीदास के नाम पर वैसे तो लगभग पच्चीस रचनाएँ प्रचलित हैं, किंतु उनके द्वारा रचित वास्तविक ग्रंथ ये बारह माने जाते हैं–(1) रामचरितमानस, (2) रामलला नहछू, (3) वैराग्य संदीपिनी, (4) बरवै रामायण, (5) पार्वतीमंगल, (6) जानकीमंगल, (7) रामाज्ञा प्रश्न, (8) दोहावली, (9) कवितावली, (10) गीतावली, (11) श्रीकृष्ण गीतावली, (12) विनयपत्रिका। इनके अतिरिक्त इनकी दो प्रामाणिक रचनाएँ और मानी जाती हैं–'हनुमान बाहुक' एवं 'कलि धर्माधर्म निरूपण'। इनमें से 'हनुमान बाहुक' को तो 'कवितावली' के अंतर्गत ही सम्मिलित कर लिया जाता है, जबकि दूसरी रचना को डॉ. रामकुमार वर्मा तथा कुछ अन्य विद्वान ही प्रामाणिक मानते हैं।

काव्य-रूप की दृष्टि से तुलसीदास की प्रामाणिक रचनाओं को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है– (1) प्रबंध-काव्य–रामचरितमानस, रामलला नहछू, पार्वतीमंगल, जानकीमंगल। (2) गीति काव्य–गीतावली, श्रीकृष्ण गीतावली और विनयपत्रिका। (3) मुक्तक काव्य–वैराग्य संदीपिनी, बरवै रामायण, रामज्ञा प्रश्न, दोहावली, कवितावली, हनुमान बाहुक एवं कलि धर्माधर्म निरूपण। यहाँ केवल प्रबंध-काव्य ही विवेच्य हैं, अत: हम क्रमश: इन्हीं का विवेचन करते हैं, शेष वर्ग की रचनाओं पर अन्यत्र प्रसंगानुसार प्रकाश डाला जाए।

रामचरितमानस–तुलसीदास की सर्वश्रेष्ठ रचना 'रामचरितमानस' है, जिसकी रचना उन्होंने भगवान राम की जन्म-भूमि अयोध्या में राम की जन्म-तिथि को संवत् 1631 वि. (1574 ई.) में आरंभ की थी। इसका निर्देश स्वयं कवि ने इस प्रकार किया है–

संवत सोरह सै इकतीसा, करौं कथा हरिपद धरि सीसा।
नौमी भौमवार मधुमासा, अवधपुरी यह चरित प्रकासा॥

रामचरित से संबंधित काव्यों को प्राय: 'रामायण' कहे जाने की परंपरा रही है; किंतु तुलसीदास ने अपने काव्य को 'रामचरितमानस' के नाम से पुकारा है जिसका विशेष कारण यह है कि कवि ने इसे मानस रूपी सरोवर के रूपक के रूप में प्रस्तुत किया है। सारी कथा चार वक्ताओं के माध्यम से सात कांडों में प्रस्तुत की गई है। ये चार वक्ता ही इसके चार घाट हैं तथा सात कांड इसके सात सोपान हैं। वैसे इस रूपक के और भी कई अंग हैं; जैसे राम की महिमा इसके जलाशय की गंभीरता है, उपमादि इसकी तरंगें हैं, छंदादि इसके कमल हैं, अनुपम अर्थ, भाव, भाषा आदि पराग, मकरंद और सुगंध हैं। वस्तुत: यह रूपक इसके नामकरण की सार्थकता सिद्ध करता है। यह दूसरी बात है कि यह इतना अधिक विस्तृत एवं बौद्धिक हो गया है कि जिससे इसमें काव्यात्मक आकर्षण बहुत कम रह गया है।

'मानस' की रचना में कवि ने संस्कृत, प्राकृत आदि के विभिन्न पौराणिक एवं साहित्यिक ग्रंथों का उपयोग सम्यक् रूप से किया है। कथा का मूल आधार वाल्मीकीय रामायण है, किंतु उनमें अनेक स्थलों पर परिवर्तन एवं परिवर्द्धन भी पर्याप्त मात्रा में किया गया है, जिसमें कवि की मौलिक दृष्टि का उन्मेष मिलता है। इसके अतिरिक्त अध्यात्म रामायण, श्रीमद्भागवत, विष्णुपुराण, शिवपुराण, हनुमन्नाष्टक, प्रसन्न राघव, रघुवंश, उत्तर रामचरित आदि ग्रंथों का भी प्रभाव इस पर विभिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होता है। जैसा कि स्वयं कवि ने 'नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद् रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि' कहकर स्वीकार किया है इसमें विभिन्न स्रोतों की सामग्री का उपयोग स्वतंत्रतापूर्वक किया गया है।

'रामचरितमानस' की रचना केवल धार्मिक दृष्टि से ही नहीं हुई, उसमें काव्यात्मक लक्ष्य भी कवि के सामने स्पष्ट रूप से विद्यमान था। इसकी ध्वनि निम्नांकित उक्तियों से मिलती है–

तैसेहिं सुकवि कवित बुध कहहिं। उपजहिं अनत अनत कवि लहहिं।
\+ \+ \+
जदपि कवित रस एको नाहीं। राम प्रताप प्रकट यहि मांही।
\+ \+ \+
जे प्रबंध नहिं बुध आदरहीं। सो श्रम बादि बाल कवि करहीं।
\+ \+ \+
कीन्हे प्राकृत जन गुन गाना। सिर-धुनि गिरा लाग पछिताना।

नोट

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि, कविता एवं काव्यात्मकता का उल्लेख इस बात का प्रमाण है कि कवि ने भले ही शिष्टता एवं विनम्रता के नाते अपनी रचना को काव्यत्व से शून्य कह दिया है, किंतु उसकी आंतरिक इच्छा अपनी रचना को काव्यात्मक दृष्टि से भी सफल बनाने की अवश्य रही है। इतना ही नहीं, अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने उन कवियों के प्रयास को निंदनीय बताया है, जो प्राकृत व्यक्तियों का गुणगान करने में अपनी कवित्व-शक्ति का अपव्यय करते हैं। ऐसी स्थिति में यह स्वीकार किया जा सकता है कि तुलसीदास में धार्मिक भावनाओं की प्रबलता के होते हुए भी वे अपनी रचना की काव्यात्मकता के प्रति सचेत थे। इतना ही नहीं, 'रामचरितमानस' एवं अन्य रचनाओं के आधार पर उनके काव्य-दर्शन की पूरी रूप-रेखा तैयार की जा सकती है। यहाँ संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि तुलसी काव्य के क्षेत्र में 'महत्' के उपासक थे, वे महान् वस्तु एवं महान् लक्ष्य को लेकर चलने वाले कवि थे, इसीलिए उनकी दृष्टि में वही कला सफल कला थी, जो सौंदर्ययुक्त होने के साथ-साथ सबके लिए हितकारी भी हो।

गोस्वामी तुलसीदास का राम-विषयक एक अन्य प्रबंधात्मक काव्य 'रामलला नहछू' है जो केवल 20 छंदों में समाप्त हो गया है। यह सोहर छंद में रचित है जो अवध और बिहार के लोकगीतों–विशेषत: पुत्र-जन्म, नामकरण, विवाहादि से संबंधित गीतों–में प्रयुक्त होता है। इसमें राजा दशरथ के चारों पुत्रों के यज्ञोपवीत-संस्कार का वर्णन है। यज्ञोपवीत से पूर्व 'नख क्षौर' (नाखून काटने) किए जाने का विधान है, तथा इसी 'नख क्षौर' का अपभ्रष्ट रूप 'नहछुर' या 'नाहछू' बना है। कुछ विद्वानों ने इसे विवाह संबंधी गीत मान लिया है, किंतु जैसा कि पं. रामगुलाम द्विवेदी एवं डॉ. विमल कुमार जैन से अपने तुलसी-विषयक ग्रंथों में सिद्ध किया है, इसका संबंध यज्ञोपवीत संस्कार से ही है।

तुलसीदास की महत्ता–तुलसीदास की प्रबंधात्मक रचनाओं के संबंध में यहाँ सामान्य रूप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उनकी कीर्ति का अमर आधार 'रामचरितमानस' ही है। इसे न केवल इस परंपरा का अपितु समस्त हिंदी काव्य का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है। हमारे विचार से जब तक 'पद्मावत', 'कामायनी' आदि से इसकी सम्यक् तुलना नहीं हो जाती, तब तक इसे हिंदी का सर्वश्रेष्ठ काव्य कहना तो उचित नहीं होगा, किंतु इसमें कोई संदेह नहीं कि पौराणिक प्रबंध-काव्य परंपरा में इसका स्थान सर्वोच्च है।

समग्र रूप में तुलसीदास की महत्ता के विभिन्न आधार माने गये हैं, कुछ लोग उन्हें धर्मोपदेशक के रूप में, कुछ भक्त के रूप में और कुछ लोक-नायक के रूप में सर्वोच्च मानते हैं। अवश्य ही वे अपने युग के सबसे बड़े धर्मात्मा भक्त एवं लोकनायक थे किंतु ये सारे पद एवं विशेषण किसी के काव्यत्व की महत्ता का बोध नहीं करवाते। यदि ऐसा ही होता तो हम महात्मा गाँधी को सबसे बड़ा कवि भी मान लेते। हमारे विचार से कवि तुलसीदास की महत्ता का सबसे बड़ा आधार उनमें काव्यत्व की व्यापकता एवं गंभीरता–दोनों का उचित समन्वय का होना है। जहाँ उन्होंने काव्य के विभिन्न रूपों, प्रवृत्तियों एवं शैलियों को अपनाकर व्यापकता का परिचय दिया है, वहाँ जीवन के उदात्त आदर्शों एवं गंभीर भावों के प्रस्तुतीकरण के द्वारा अपने दृष्टिकोण की गंभीरता को भी प्रमाणित किया है। उनके काव्य में सौंदर्य का चित्र है, किंतु उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है औदात्य की आकर्षक व्यंजना। काव्य की दृष्टि से उनकी समस्त धार्मिकता, नैतिकता एवं दार्शनिकता का सबसे अधिक महत्त्व इस बात में है कि ये सब उसमें औदात्य की प्रतिष्ठा एवं व्यंजना में सहायक सिद्ध होते हैं। इसी औदात्य को रस-सिद्धांत की शब्दावली में प्रत्यक्ष आनंद-स्वरूप शांत रस के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

केशवदास की 'रामचंद्रिका'–राम संबंधी प्रबंध-काव्य की परंपरा में एक महत्त्वपूर्ण रचना केशवदास मिश्र द्वारा रचित 'रामचंद्रिका' है। इसकी रचनाकाल स्वयं कवि के उल्लेख के अनुसार 1658 वि. या 1601 ई. है। केशवदास राज्याश्रित शृंगारी कवि थे, अत: यह विषय उनकी रुचि के बहुत अनुकूल नहीं था फिर भी 17 वर्ष पूर्व तुलसी द्वारा रचित 'रामचरितमानस' की प्रसिद्धि ने संभवत: उन्हें इस ओर आकर्षित किया। केशवदास किसी का अनुसरण करने वाले कवि नहीं थे, अत: उन्होंने अपनी रचना में तुलसी के आदर्श, शिल्प एवं रचना-शैली को स्वीकार नहीं किया। इस दृष्टि से वे तुलसी के अनुवर्ती या अनुकर्ता नहीं हैं अपितु उनके प्रतिद्वंदी हैं। कदाचित् इसीलिए उन्होंने अपने सारे काव्य में तुलसीदास का कहीं उल्लेख न करके अपना संबंध सीधे वाल्मीकि से स्थापित किया है। कवि ने अपने प्रेरणास्रोत के रूप में स्वप्न में वाल्मीकि द्वारा दिये गये आदेश की चर्चा की है। पूरा ग्रंथ केवल सात कांडों में नहीं, अपितु उनतालीस प्रकाशों में विभक्त है। आरंभ में गणेश, सरस्वती और

राम की वंदना की गयी है तथा अपने वंश, रचनाकाल, काव्य-प्रयोजन आदि का निर्देश किया गया है। सारा ग्रंथ दो भागों–**पूर्वार्द्ध** एवं **उत्तरार्द्ध**–में विभक्त है। प्रथम भाग में 20 प्रकाश हैं जिनमें राम के बचपन से लेकर रावण-वध तक की घटनाएँ वर्णित हैं, जबकि द्वितीय भाग में राम-भरत-मिलाप, तिलकोत्सव, राम-राज्य-वर्णन, शम्बूक-वध, लवणासुर-वध, लव-लक्ष्मण-युद्ध, राम-सीता मिलन आदि का निरूपण किया गया है। इसके अतिरिक्त उत्तरार्द्ध में राम के राज्य-वैभव एवं राजसी जीवन का चित्रण भी विस्तार से किया गया है। डॉ. विजयपाल सिंह के अध्ययन के अनुसार, ''केशवदास जी ने पूर्वार्द्ध की अपेक्षा उत्तरार्द्ध में अधिक मौलिकता का परिचय दिया है।''

पूर्ववर्ती आलोचकों ने 'रामचंद्रिका' पर अनेक आक्षेप आरोपित किये हैं, जिनमें से कुछ ये हैं–(1) प्रबंध-पटुता एवं संबंध-निर्वाह की क्षमता केशव में नहीं थी जिससे 'रामचंद्रिका' अलग-अलग लिखे हुए वर्णनों के संग्रह-सी जान पड़ती है। (2) कथा के मार्मिक एवं गंभीर स्थलों की पहचान 'रामचंद्रिका' के रचयिता को नहीं थी। वैसे स्थलों को या तो छोड़ गये हैं या यों ही इतिवृत्त मात्र कहकर चलता कर देते हैं। (3) दृश्यों की स्थानगत विशेषता इसमें नहीं मिलती। इन आक्षेपों के आधार पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल का निष्कर्ष है–''सारांश यह कि प्रबंध-काव्यरचना के योग्य न तो केशव में अनुभूति ही थी, न शक्ति। परंपरा से चले आते हुए कुछ नियत विषयों के (जैसे, युद्ध, सेना-तैयारी, उपवन, राजदरबार के ठाट-बाट तथा श्रृंगार और वीर रस) फुटकल वर्णन ही अलंकारों की भरमार के साथ वे करना जानते थे। इसी से बहुत से वर्णन यों ही, बिना अवसर का विचार किए, वे भरते गये हैं। वर्णन के लिए करते थे, न कि प्रसंग या अवसर की अपेक्षा से। रामचंद्रिका के लंबे और चौड़े वर्णनों को देखने से स्पष्ट लक्षित होता है कि केशव की दृष्टि जीवन के गंभीर और मार्मिक पक्ष पर न थी। उनका मन राजसी ठाठ-बाट, तैयारी, नगरों की सजावट, चहल-पहल आदि के वर्णन में ही विशेषत: लगता था।''

इसमें कोई संदेह नहीं कि केशवदास को प्रबंधत्व की दृष्टि से 'रामचंद्रिका' में अधिक सफलता नहीं मिली है, तथा आचार्य शुक्ल के अनेक आक्षेप सर्वथा यथार्थ हैं। किंतु साथ ही यह भी स्पष्ट है कि आचार्य शुक्ल ने केशव के दृष्टिकोण, लक्ष्य एवं वातावरण को समझने का प्रयास भी बहुत गंभीरता से नहीं किया, अन्यथा यह स्पष्ट हो जाता कि केशवदास जिस लक्ष्य एवं वातावरण से प्रेरित थे, उसमें यही संभव था। जैसाकि डॉ. विजयपाल सिंह ने उपर्युक्त आक्षेपों का उत्तर देते हुए अपने शोध प्रबंध में स्पष्ट किया है, ''केशवदास तुलसी की भाँति भक्त और धार्मिक कवि नहीं थे, अपितु दरबारी कवि थे, अत: दोनों को एक ही कसौटी से परखना उचित नहीं। केशव कोर्ट के कवि थे, भला कुटिया के पैमाने से कोर्ट को कैसे नापा जा सकता है? केशव के मार्मिक स्थल कोर्ट के थे और उनमें उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। कुटिया और कोर्ट में सदैव से अंतर चला आया है और सदैव रहेगा। अत: तुलसी के मापदंड द्वारा केशव की कटु आलोचना करना महान् कवि के साथ अन्याय करना है।''

सत्रहवीं सदी के आरंभिक कवियों में प्राणचंद चौहान का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने सन् 1610 ई. (1667 वि.) में 'रामायण महानाटक' की रचना की थी। वस्तुत: यह नाटक न होकर पद्यबद्ध संवादों के रूप में रचित प्रबंध-काव्य ही है। उदाहरण के लिए इसकी शैली का एक नमूना प्रस्तुत है–

श्रवन बिना सो अस बहुगुना। मन में होइ सु पहले सुना।
देखै सब पै आहि न आँखी। अंधकार चोरी के साखी।।

इसी प्रकार हृदयराम भल्ला का 'हनुमन्नाटक' (1623 ई.) भी वस्तुत: नाटक न होकर 14 अंकों में विभक्त प्रबंध-काव्य ही है। इसका मूलाधार संस्कृत का 'हनुमन्नाटक' होने के कारण ही इसे यह संज्ञा दी गई है, अन्यथा कवि ने इसे दूसरा नाम 'रामचंद्र गीत' भी दिया है। श्री चंद्रकांता बाली ने अपने 'पंजाब प्रांतीय हिंदी साहित्य का इतिहास' में इस काव्य का विस्तृत परिचय प्रस्तुत करते हुए इसके संबंध में अनेक नये तथ्यों पर प्रकाश डाला है। श्री बाली के अनुसार हृदयराम पंजाबी थे, तथा उनके 'हनुमन्नाटक' को गुरु गोबिंद सिंह सदा अपने पास रखते थे, इससे सिक्खों में भी इसका बड़ा सम्मान है। पूरा ग्रंथ लगभग डेढ़ हजार छंदों में समाप्त हुआ है। यद्यपि इसमें संस्कृत के 'हनुमन्नाटक' की पूरी छाया ग्रहण की गई है, किंतु यह मौलिकता से भी शून्य नहीं है। इसमें हनुमान का चरित नहीं, अपितु राम का जीवन-वृत्त जानकी स्वयंवर से लेकर राज्याभिषेक तक प्रस्तुत किया गया है, इस दृष्टि से इसे 'रामचंद्र गीत' कहना ही अधिक उचित होगा।

नोट

हृदयराम के अतिरिक्त भी पंजाब के अनेक कवियों ने हिंदी में राम संबंधी प्रबंध-काव्यों की रचना की है, जिनमें कुछ ये हैं–(1) **गुरुगोबिंदसिंह** कृत 'रामावतार' (1745 वि.), (2) **सोढ़ी मिहरवान** कृत 'रामायण' (1740 वि.), (3) **कृष्णलाल** कृत 'रामचरित' (1884 वि.), (4) **गुलाबसिंह** कृत 'अध्यात्म रामायण' (1846 वि.), (5) **हरिसिंह** कृत 'अध्यात्म रामायण' (19वीं सदी), (6) **कीरतसिंह** कृत 'कीरत रामायण' (1917 वि.), (7) **संतोषसिंह** कृत 'वाल्मीकि रामायण' (1894 वि.), (8) **निहाल कवि** कृत 'रामचंद्रोदय' (1902 वि.), (9) **रत्नहरि** कृत 'ललित ललाम' (1917 वि.), (10) **बीरसिंह** कृत 'सुधासिंधु रामायण' (1909 वि.)।

अठारहवीं-उन्नीसवीं सदी में 'अद्भुत रामायण' संज्ञक अनेक रचनाएँ लिखी गई थीं, जिनके रचयिताओं में **शिवप्रसाद** (रचनाकाल 1773 ई.), **बेनीराम** (14वीं सदी), **भवानीलाल** (1800 ई.) और **नवलसिंह** (1834 ई.) का नाम उल्लेखनीय है। इसमें सीता की एक काल्पनिक एवं अद्भुत कथा को प्रस्तुत किया गया है जिसमें रावण का वध राम के द्वारा न दिखाकर सीता के द्वारा दिखाया गया है। काव्यत्व की दृष्टि से साधारण कोटि की यह रचना है।

सीता संबंधी काव्य–सीता या जानकी के विवाह; अपहरण आदि प्रसंगों को लेकर इस काल में अनेक प्रबंध-काव्य लिखे गये जिनसे ये उपलब्ध हैं–(1) गोस्वामी **तुलसीदास** : 'जानकी मंगल' (16वीं सदी), (2) **कर्मण** : 'सीताहरण' (1548 ई.), (3) **मंडन** : 'जानकी जू को विवाह' (1659 ई.), (4) **प्रसिद्ध कवि** : 'जानकी विजय' (1756 ई.), (5) **मून** : सीताराम विवाह; (1803 ई.), (6) **प्रियादास** : 'महाराजा सीता मंगल' (1817 ई.), (7) **नवलसिंह कायस्थ** : 'सीता स्वयंवर' (1831 ई.), (8) **बलदेवदास** : 'जानकी विजय' (1834 ई.)। वस्तुत: इस प्रकार के काव्यों की परंपरा का प्रवर्त्तन गोस्वामी तुलसीदास के द्वारा 'रुक्मिणी मंगल', 'रुक्मिणी विवाह' जैसे कृष्ण संबंधी काव्यों की प्रेरणा या प्रतिद्वंद्विता से हुआ। तुलसीदास ने अपने काव्य के लिए वाल्मीकीय रामायण, अध्यात्म रामायण, हनुमन्नाटक, प्रसन्नराघव आदि संस्कृत काव्यों को आधार बनाया, जबकि परवर्ती कवियों ने सामान्यत: तुलसीदास का ही अनुकरण किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. हृदयराम भल्ला का 'हनुमन्नाटक' नाटक न होकर .... है।

   (क) प्रबंध-काव्य (ख) काव्य (ग) आधार काव्य (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 17 वीं सदी के आरंभिक कवियों में .... का नाम उल्लेखनीय है।

   (क) रामचंद (ख) प्राणचंद चौहान (ग) प्राणनाथ (घ) तुलसीदास

7. प्राणचंद चौहान ने .... में 'रामायण महानाटक' की रचना की।

   (क) 1610 ई. (ख) 1710 ई. (ग) 1810 ई. (घ) 1910 ई.

8. केशवदास की महत्त्वपूर्ण रचना है ....।

   (क) रामचंद्र (ख) रामचंद्रिका (ग) कसौटी (घ) सीता-स्वयंवर

11.4 प्रमुख विशेषताएँ एवं महत्त्व

प्रस्तुत काव्य-परंपरा से संबद्ध बहुसंख्यक कवि धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, जिन्होंने अपनी धार्मिक भावनाओं एवं अनुभूतियों की प्रेरणा से काव्य-रचना की। इस युग की कतिपय अन्य धर्माश्रित काव्य-परंपराओं की भाँति यह परंपरा किसी संप्रदाय विशेष के आश्रय में या किसी विशेष आचार्य के निर्देशन में पोषित एवं विकसित नहीं हुई अपितु विभिन्न कवियों ने स्वतंत्र रूप में ही आत्म-प्रेरणा से काव्यरचना की थी। इस तथ्य की घोषणा गोस्वामी तुलसीदास ने 'स्वांत: सुखाय' कहकर की है। संप्रदाय विशेष पर आश्रित न होने के कारण इन कवियों के दृष्टिकोण में सांप्रदायिक संकीर्णता या कट्टर मतवादिता दृष्टिगोचर नहीं होती। इन्होंने धर्म के प्रति व्यापक दृष्टिकोण का परिचय दिया है तथा विभिन्न संप्रदायों में एकता एवं समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया है।

दृष्टिकोण की इसी व्यापकता के कारण इनके काव्य की विषय-वस्तु के क्षेत्र में भी पर्याप्त व्यापकता आ गई है। राम, कृष्ण, शिव आदि से लेकर जैन-सिख आदि विभिन्न धर्मों के महापुरुषों को इनके काव्य में स्थान मिला है। जनता की धार्मिक चित्तवृत्ति को जागृत रखने के लिए उन्होंने अवतारों, महापुरुषों एवं भक्तों के आदर्श चरित का गान श्रद्धापूर्ण शब्दों में किया है जिसमें पाठकों के हृदय में सच्ची भक्ति का उद्‌बोधन होता है। इन्होंने भक्ति के नाम पर श्रद्धाशून्य रति भावना या कोरी रसिकता का प्रतिपादन नहीं किया, अपितु उसमें श्रद्धा मिश्रित अनुरक्ति का चित्रण किया है, जिसे हम भक्ति का वास्तविक रूप मान सकते हैं। धर्म के नाम पर होने वाले विभिन्न कृत्रिम प्रयोगों, खंडन-मंडन एवं बाह्य-प्रदर्शनों से भी ये दूर हैं, इतना ही नहीं, उन्होंने धर्म के विभिन्न रूपों, उपासना के विभिन्न भेदों एवं भक्ति की विभिन्न पद्धतियों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया है। इस समन्वयवादिता का सर्वोत्कृष्ट रूप इस परंपरा के सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास में देखा जा सकता है।

अब तक प्राय: यह भ्रांति प्रचलित रही है कि मध्यकाल में कृष्ण-भक्त कवियों ने गीति शैली का प्रयोग किया है तथा प्रबंध-शैली का प्रयोग केवल राम-भक्त कवियों द्वारा हुआ है, किंतु वास्तविकता यह नहीं है।

प्रस्तुत काव्य-परंपरा में भावना की गंभीरता एवं विविधता तथा शैली की बहुरूपता भी दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि इनके काव्य का मूल भाव सामान्यत: भक्ति-भाव ही है, किंतु इनके अंतर्गत चरित-नायक की परिस्थिति के अनुरूप श्रृंगार, वीर, रौद्र, भयानक, अद्‌भुत आदि की भी व्यंजना सफल रूप से हुई है।

काव्य-रूप की दृष्टि से इस परंपरा के सभी काव्यों को 'प्रबंध' कहा जा सकता है, किंतु इन सभी का रूप, विस्तार एवं विधान एक जैसा नहीं है। कुछ अत्यंत संक्षिप्त है तो कुछ विस्तृत। कुछ में सर्ग-पद्धति मिलती है तो कुछ में उसका अभाव है। छंदों की दृष्टि से प्रारंभ में दोहा-चौपाई शैली का प्रचलन अधिक रहा, किंतु आगे चलकर छंद वैविध्य की प्रवृत्ति बढ़ती गई।

वस्तुत: यह परंपरा ग्रंथों की संख्या, विषय-क्षेत्र की व्यापकता, भावनाओं की विविधता एवं शैली बहुरूपता की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। न केवल काव्य-संख्या एवं स्थूल परिमाण की दृष्टि से अपितु काव्य-स्तर की उच्चता एवं काव्य-सौष्ठव के विकास की दृष्टि से भी यह परंपरा कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। तुलसीदास जैसा महाकवि इस काव्य-परंपरा के उच्च गौरव को सूचित करता है। इस परंपरा के कवियों ने धर्म और समाज के क्षेत्र में अपने व्यापक समन्वयवादी दृष्टिकोण, महापुरुषों के आदर्श चरित एवं भक्ति के व्यापक रूप की स्थापना करके एक ओर धर्म-रक्षा, लोकहित एवं समाज के उत्थान में योग दिया है, दूसरी ओर काव्य का उदात्त, उत्कृष्ट एवं लोक मंगलकारी रूप प्रदान करने का स्तुत्य कार्य किया है। अत: प्रत्येक दृष्टि से इस परंपरा का हिंदी साहित्य के मध्यकालीन इतिहास में अत्यंत गौरवपूर्ण स्थान है।

टास्क 'संत सिपाही' के आदर्श-नायक कौन थे?

11.5 सारांश (Summary)

- हिंदी के मध्यकालीन काव्य के अंतर्गत शताधिक ऐसे प्रबंध-काव्य मिलते हैं, जिनकी विषय-वस्तु पौराणिक ग्रंथों पर आधारित है। पर साथ ही उनमें काव्यात्मकता का भी अभाव नहीं है।
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे प्रौढ़ समीक्षक ने 'राम-भक्ति-शाखा' की स्थापना करते हुए तुलसी से उसका आरंभ माना है और उन्हीं से उसकी समाप्ति मानी है, क्योंकि 'गोस्वामी जी की प्रतिभा का प्रखर प्रकाश सौ डेढ़ सौ वर्ष तक ऐसा छाया रहा राम-भक्ति की और रचनाएँ उनके सामने ठहर न सकीं।'
- धार्मिक महापुरुषों को लेकर प्रबंध-काव्य लिखने की परंपरा का प्रवर्तन प्राचीनकाल में ही संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश में हो गया था। जहाँ वाल्मीकि ने 'रामायण', अश्वघोष ने 'बुद्धचरित' की रचना संस्कृत में

नोट

की, वहाँ अनेक जैन कवियों ने प्राकृत एवं अपभ्रंश में विभिन्न तीर्थंकरों एवं धार्मिक नेताओं के चरित्र का अंकन काव्यात्मक शैली में किया।

- इस परंपरा के उपलब्ध हिंदी ग्रंथों में सर्वप्रथम 'प्रद्युम्न चरित' का नाम आता है जिसके रचयिता सुधारु अग्रवाल थे। सुधारु जैन धर्म में दीक्षित थे।
- रामचरित से संबंधित हिंदी का प्रथम प्रबंध-काव्य संभवत: ईश्वरदास कृत 'भरतमिलाप' है, जो सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में लिखा गया था। इसके अनंतर गोस्वामी तुलसीदास जी के विभिन्न प्रबंध-काव्य आते हैं, जो इस परंपरा की सर्वोत्कृष्ट रचनाएँ माने जाते हैं।
- काव्य-परंपरा से संबद्ध बहुसंख्यक कवि धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, जिन्होंने अपनी धार्मिक भावनाओं एवं अनुभूतियों की प्रेरणा से काव्य-रचना की।

11.6 शब्दकोश (Keywords)

सर्वप्रिय – सबका प्रिय

शताधिक – सौ से अधिक

पौराणिक – पुराणों का जानकार

11.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. पौराणिक प्रबंध काव्यों की पूर्व परंपरा का वर्णन कीजिए।
2. तुलसीदास द्वारा रचित वास्तविक बारह ग्रंथों का उल्लेख कीजिए।
3. सुधारु अग्रवाल रचित 'प्रद्युम्न चरित' पर प्रकाश डालें।
4. केशवदास की 'रामचंद्रिका' पर टिप्पणी लिखें।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. वैष्णव पुराणों	2. जैन धर्म	3. 'चरित' संज्ञक	4. जाखू मणियार
5. (क)	6. (ख)	7. (क)	8. (ख)।

11.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण एवं रचना–*डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. हिंदी व्याकरण–*बृजकिशोर प्रसाद सिंह, नमन प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण–*डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन।*

नोट

इकाई–12 : आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
12.1 आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य
12.2 श्री उदयभानु हंस
12.3 क्या आधुनिक कविता में गत्यावरोध है?
12.4 सारांश (Summary)
12.5 शब्दकोश (Keywords)
12.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
12.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य को जानने में।
- श्री उदयभानु हंस को जानने में।
- आधुनिक कविता में गत्यावरोध को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

नि:संदेह आधुनिक हिंदी साहित्य में गद्य का प्राचुर्य रहा और उसकी नाना विधाओं का क्षिप्र गति से विकास हुआ तथा हो रहा है। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल में मुक्तक-काव्य की विपुल राशि की सृष्टि हुई है किंतु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि प्रस्तुत काल में प्रबंध काव्यधारा नितांत सूख गई या बिलकुल विलुप्त हो गई है। वस्तुस्थिति तो यह है कि प्रबंध काव्यों की यह धारा रामचरितमानस, पद्मावत, साकेत, प्रिय-प्रवास, कामायनी, कृष्णायन, कुरुक्षेत्र, साकेत का संत, लोकायतन, उर्वशी और मानवेंद्र तक भी एक रूप में सदा अजस्र गति से प्रवाहमान रही है। सच तो यह है कि कोई भी युग उसका साहित्य प्रबंधकाव्यों के बिना पूर्णता को प्राप्त नहीं हो सकता है।

12.1 आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्य

प्रत्येक युग का जीवन प्रबंध काव्यों के विराट फलक पर ही पूर्णतया अंकित हो सकता है। साहित्य की यही विधा मनुष्यता की क्रमागत प्रगति और उसके भावात्मक विकास-मार्ग की सूचिका है। दिनकर जी के शब्दों में-''विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति मार्ग में मील के पत्थरों के समान होते हैं, वे व्यंजित करते हैं, कि मनुष्य किस युग में, कहाँ तक प्रगति कर सका है।'' भारतेंदु युग में मुक्तक शैली का ही प्रयोग हुआ, जबकि द्विवेदी युग में काव्यक्षेत्र में बहुधा प्रबंधात्मक शैली को प्रतिष्ठा मिली। इस काल में इतिवृत्तात्मकता प्रधान शताधिक प्रबंध काव्यों

नोट

की रचना हुई। द्विवेद्वी युग प्रबंध काव्यों में आवश्यकतानुसार काव्यशास्त्रीय लक्षणों को अपनाते हुए भी प्रबंधकारों ने अपनी रचनाओं में युगानुकूल आधुनिकता को भी प्रतिबिंबित किया है। इस युग के काव्यों में चारित्रिक दृष्टि से भी एक महान् परिवर्तन लक्षित होता है। इन प्रबंध काव्यों में चित्रित दैवी पात्र राम और कृष्ण आदि आदर्श मानव के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। इनकी राधा और सीता नारी जाति का प्रतिनिधित्व करती हुई आदर्श नारियों के रूप में आई हैं। उर्मिला, कैकयी, रावण, नकुल तथा एकलव्य, भरत जैसे उपेक्षित पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं को प्रकाश में लाना भी इन प्रबंध काव्यों की एक विशेषता है। प्रसाद युग में इतिवृत्तात्मकता के स्थान पर भावात्मकता को प्रश्रय दिया गया। स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' आधुनिक हिंदी-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इसमें भावात्मकता, चारित्रिकता और मानवीय मनोवृत्तियों के अतिसूक्ष्म विश्लेषण के साथ दर्शन तथा आधुनिकता का हृदयावर्जक समन्वय है। प्रसाद जी ने परंपरागत काव्यशास्त्रीय लक्षणों की उपेक्षा करते हुए भावात्मक प्रबंध काव्यों की एक स्वस्थ परंपरा को प्रशस्त किया। प्रसादोत्तर काल में प्रणीत प्रबंध काव्यों में भी काव्यशास्त्र के महाकाव्य संबंधी बाह्य तत्त्वों की उपेक्षा करके उनमें राष्ट्रीय जीवन के व्यापक आदर्शों के चित्रण तथा मानवता के नये मूल्यों के अंकन पर विशेष बल दिया गया है। हम द्विवेद्वी युग और छायावादी काव्यों की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करते हुए उन युगों के प्रतिनिधि कवियों और उनके प्रबंध काव्यों का प्रासंगिक रूप से उल्लेख कर चुके हैं। यहाँ हमें प्रसादोत्तरकाल में रचित कतिपय प्रतिनिधि प्रबंध काव्यों का संक्षिप्त प्रवृत्यात्मक परिचय देना अभीष्ट है।

आधुनिक काल में रचित प्रबंध काव्यों की कितनी प्रभूत सृष्टि हुई है, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम रचयिताओं और उनकी रचनाओं की काल-निर्देशपूर्वक एक संक्षिप्त तालिका प्रस्तुत करना उचित समझते हैं–

तालिका–सर्वश्री श्रीधर पाठक–एकांतवासी योगी, उजड़ ग्राम, श्रांत पथिक, महावीर प्रसाद द्विवेद्वी–कुमारसंभव सार, मैथिलीशरण गुप्त–रंग में भंग, जयद्रथ वध, भारती, विरहिणी ब्रजांगना, वैतालिक, शकुंतला, प्लासी का युद्ध, पंचवटी, अनघ, शक्ति, त्रिपथगा, विकटभट्ट, गुरुकुल, साकेत, यशोधरा, द्वापर, सिद्धराज, नहुष, जयभारत 1952, हरिऔध–प्रिय प्रवास, पारिजात, वैदेही वनवास 39, गिरधर शर्मा–सती-सावित्री, सियारामशरण गुप्त–मौर्य विजय, नकुल, अनाथ, आत्मोत्सर्ग 33, भगवानदीन–वीरक्षत्राणी, वीर बालक, वीर पंचरत्न, लोचन प्रसाद पांडेय–मेवाड़गाथा, मृगीदुखमोचन, गोकुलचंद–प्रणवीर प्रताप, रामनरेश त्रिपाठी–मिलन, पथिक स्वप्न, रामचरित उपाध्याय–देवदूत, देवी-द्रौपदी, राष्ट्र-भारती, रामचरित चंद्रिका, रामचरित चिन्तामणि, रामचंद्र शुक्ल–बुद्ध चरित, उदयशंकर भट्ट–तक्षशिला मानसी 39, प्रतापनारायण–नलनरेश, केशरीसिंह–प्रताप चरित्र, गुरुभक्तिसिंह–नूरजहाँ, विक्रमादित्य 47, रामनाथ ज्योतिषी–रामचंद्रोदय, अनूप शर्मा–सिद्धार्थ 39, शर्वाणीय वर्द्धमान 51, तुलसीराम शर्मा–पुरुषोत्तम, निराला–सिद्धार्थ 39, श्यामनारायण पांडेय–39, जौहर 45, हरदयालुसिंह–दैत्यवंश, रावण 52, प्रद्युम्न–कृष्ण चरित मानस 41, मोहनलाल मेहतो–आर्यावर्त 43, द्वारिका प्रसाद मिश्र–कृष्णायन 43, डॉ. रामकुमार वर्मा–जौहर 43, एकलव्य 48, सुधींद्र–जौहर 43, बलदेव प्रसाद मिश्र–साकेत का संत 46, रामराज्य 60, रामधारीसिंह दिनकर–कुरुक्षेत्र 46, रश्मिरथी 57, उर्वशी 61, ठाकुरप्रसाद सिंह–महामानव 46, रघुवीरशरण मिश्र–जननायक 49 मानवेंद्र 65, आनंद कुमार–अंगराज 50, करील–देवार्चन 52, गोपालशरण सिंह–जगदालोक 52, रामानंद तिवारी–पार्वती 55, श्यामनारायण प्रसाद–झाँसी की रानी 55, लक्ष्मीनारायण कुशवाहा–तांत्या टोपे 57, अतुल कृष्ण गोस्वामी–नारी 57, परमेश्वर द्विरेफ–मीरा 57, युगद्रष्टा प्रेमचंद 59, तारादत्त हारीत–दमयंती 57, बालकृष्ण शर्मा नवीन–उर्मिला 58, गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश–तारकबध 58, लक्ष्मीनारायण मिश्र–सेनापति कर्ण 58, आनंद मिश्र–झाँसी की रानी 59, नरेंद्र शर्मा–द्रौपदी 60, वासुदेव प्रसाद खरे–देवयानी 60, रामावतार अरुण–वाणांबरी 61, रामगोपाल दिनेश–सारथी 61, डॉ. पुत्तूलाल शुक्ल–अनंग 61, नंदकिशोर झा–प्रिय मिलन 64, सुमित्रानंदन पंत–लोकायतन 64।

नोट्स कवि दिनकर के अनुसार, ''विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति मार्ग में मील के पत्थर के समान होते हैं, वे व्यंजित करते हैं कि मनुष्य किस युग में, कहाँ तक प्रगति कर सकता है।''

नोट

प्रतिपाद्य—द्वारिका प्रसाद मिश्र का अवधी भाषा में रचित कृष्णायन महाकाव्य रामचरितमानस के समान सात कांडों में विभक्त है। इसमें लेखक को कृष्ण की चारित्रिक उदात्तता के अंकन में पर्याप्त सफलता मिली है। प्रस्तुत काव्यधारा में दिनकर जी के तीन प्रबंध काव्य—कुरुक्षेत्र 46, रश्मिरथी 52 तथा उर्वशी 61 विशेष उल्लेखनीय हैं। कुरुक्षेत्र में युधिष्ठिर और भीष्म के ओजस्वी सजीव और मार्मिक वार्तालाप के माध्यम से युद्ध की समस्या पर आधुनिक युग के व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार किया गया है। रश्मिरथी महाभारत पर आधारित है जिसमें महादानी कर्ण के आदर्श एवं उदात्त चरित्र को उपन्यस्त किया गया है। कुरुक्षेत्र और रश्मिरथी में महाकाव्योचित इतिवृत्त के अभाव के होते हुए भी कवि की सहज भाव-प्रवणता ने उनमें शिथिलता नहीं आने दी है। उर्वशी ऋग्वेद के पुरुरवा और उर्वशी के संवाद पर आधृत है जिसमें कवि ने प्रेम, काम और सौंदर्य की शाश्वत समस्याओं को मार्मिक रूप में चित्रित किया है। नारी जीवन को उसके व्यापक परिपार्श्व में देखना इस काव्य की महती विशेषता है। इसमें रोमांस की अतीव कलात्मक अभिव्यंजना हुई है। नीरज के शब्दों में—''कामायनी के उपरांत बीसवीं शताब्दी की अन्यतम काव्य कृति कदाचित् उर्वशी ही है।'' बलदेवप्रसाद मिश्र का साकेत का संत एक सफल महाकाव्य है। इसमें साकेत-संत-भरत के चरित्र को अतीव उज्ज्वल एवं उदात्त रूप में अंकित किया गया है। श्यामनारायण पांडेय की दोनों रचनाएँ हल्दीघाटी तथा जौहर राजपूती इतिहास से संबद्ध हैं। हल्दीघाटी में महाराणा प्रताप के अतुल पराक्रम, शौर्य, प्रताप, साहस और बलिदान को सशक्त तथा ओजस्विनी भाषा में निबद्ध किया गया है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने महाभारत के उपेक्षित पात्र एकलव्य की गुरुभक्ति को 14 सर्गों में सफलतापर्वूक अभिव्यंजित किया है। नरेंद्र शर्मा प्रणीत द्रौपदी के माध्यम से कवि ने त्याग, बलिदान, श्रद्धा और शक्ति जैसे नारी जीवन के शाश्वत मूल्यों की कलात्मक अभिव्यक्ति की है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अनेक सेनानियों—महारानी झाँसी, तांत्या टोपे, गणेश शंकर, महात्मा गाँधी तथा नेहरू को लक्ष्य रखकर महारानी झाँसी (अनेक लेखकों के द्वारा) जगदालोक, जगनायक, महामानव (गाँधी से संबद्ध) तथा मानवेंद्र 65 (नेहरू से संबद्ध) चरितात्मक महाकाव्यों का प्रणयन हुआ है। इसके अतिरिक्त अनेक साहित्य-स्रष्टाओं द्वारा-बाण पर बाणांबरी, तुलसीदास पर तुलसीदास तथा देवार्चन और प्रेमचंद पर युगद्रष्टा नामक सफल प्रबंध काव्यों की सृष्टि हुई है।

रामावतार तरुण की प्रकाशित रचनाओं में उनकी नवीन कृति 'बाणांबरी' महत्त्वपूर्ण है। इस रचना का नामकरण कदाचित् आधुनिक हिंदी-साहित्य में प्रकाशित चिदंबरी, ऋतंबरा तथा रूपांबरा काव्यों के सादृश्य पर हुआ है अथवा बाणभट्ट की कादंबरी के मिथ्या सादृश्य के आधार पर इसे बाणांबरी कह दिया गया है।

यह एक बीस सर्गो का प्रबंध काव्य है जिसमें रससिद्ध वाणी के अवतार महाकवि बाण का चरित्र एक वृहत सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में चित्रित है। श्री तरुण ने बाण की रचनाओं—हर्ष चरित, कादंबरी के अतिरिक्त आचार्य हजारी प्रसाद की 'बाणभट्ट की आत्मकथा' तथा वासुदेव शरण अग्रवाल के 'हर्ष चरित एक अध्ययन' की सामग्री का उपयोग किया है। इसके अतिरिक्त कवि ने निजी कल्पना का भी सराहनीय प्रयोग किया है। बाणांबरी बाणभट्ट की आत्मकथा का एक पूरक ग्रंथ है जिसमें कल्पना का उपयोग करते हुए भी बड़ी सतर्कता के साथ इतिहास की रक्षा की गई है। इस प्रबंध काव्य में वर्णनात्मकता तथा कल्पना का प्राधान्य है। कलापक्ष की दृष्टि से भी यह ग्रंथ पर्याप्त सुंदर बन पड़ा है।

सामान्य प्रवृत्तियाँ—(क) प्रसादोत्तर काल में रचित प्रबंध काव्य प्रतिपाद्य की दृष्टि से अतीव व्यापक पटभूमि पर आधारित है। इनमें जहाँ एक ओर उर्वशी जैसे महाकाव्य का आधार ऋग्वेद है, वहाँ सेनापति कर्ण, द्रौपदी और एकलव्य जैसी रचनाओं का इतिवृत्त पौराणिक है, सिद्धार्थ और वर्धमान आदि धार्मिक नेताओं से संबद्ध हैं। मौर्य विजय, हल्दीघाटी, जौहर, विक्रमादित्य, महारानी झाँसी तथा तांत्या टोपे जैसे महाकाव्य इतिहास पर आधृत हैं। जगनायक जगदालोक और मानवेंद्र आदि आधुनिक युग के महामानवों—गाँधी और नेहरू जी के जीवन-चरित्रों से संबद्ध हैं और बाणांबरी, देवार्चन तथा युगद्रष्टा प्रेमचंद साहित्य स्रष्टाओं, के जीवनवृत्तों को आधार बनाकर लिखे गये हैं। इन सब महाकाव्यों का भारतीय संस्कृति के अभ्युत्थान और राष्ट्रीय जागरण में एक मूल्यवान योगदान है। इन काव्यों के कथावस्तु के चयन और उसमें युगानुरूप नवीनता का समावेश कर जहाँ इनके मनीषी प्रणेताओं ने अपनी मौलिक प्रतिभा को अक्षुण्ण बनाये रखा है वहाँ उन्होंने इनके सफल शिल्प-विधान में भी अपनी असाधारण रचना-क्षमता का परिचय दिया है।

नोट

(ख) चरित्रांकन में अभिनंदनीय मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाया गया है। इनमें जहाँ राम और कृष्ण जैसे देव पात्रों को वैज्ञानिक युग की अनुरूपता में आदर्श मानव के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है वहाँ उपेक्षित पात्रों–भरत, नकुल, कर्ण, उर्मिला और एकलव्य की चारित्रिक महत्ता को भी यथेष्ठ आलोक में लाया गया है। इसके अतिरिक्त अभी तक हेय समझे जाने वाले रावण जैसे पात्रों के चरित्र के उज्ज्वल पक्ष को अतीव सहानुभूतिपूर्वक चित्रित किया है। इन काव्यों में नारी जीवन की नानाविध समस्याओं को सहृदयता से उपन्यस्त कर उसके आदर्श रूप की प्रतिष्ठा की स्तुत्य चेष्टा की गई है।

(ग) प्रस्तुत काव्यधारा शिल्प-विधान की दृष्टि से भी अभिनंदनीय है। इन काव्यों की भाषा-शैली सरल, सुबोध तथा भावानुकूल है। नई कविता के समान इनमें कहीं भी अस्पष्ट प्रतीकों, बिंबों और जटिल अप्रस्तुत विधानों का दुराग्रह नहीं है। इनमें वास्तविक काव्य कला की मनोरम झाँकी मिलती है तथा इनमें रस परिपाक का पूर्ण ध्यान रखा गया है। इनमें काम कुंठाओं की अनावश्यक पहेलियाँ नहीं बुझाई गई हैं। इनके प्रणेताओं ने भारतीय काव्यशास्त्रीय प्रबंध-काव्यों की परंपराओं को ध्यान में रखते हुए युगानुकूल महाकाव्यों के स्वरूप विधान का स्तुत्य प्रयास किया है।

(घ) इन प्रबंध काव्यों का लक्ष्य भी परम महनीय है। इनमें भारतीय सांस्कृतिक चेतना को उनके व्यापक, यथार्थ, स्वरूप और कलात्मक रूप में प्रशस्त किया गया है। उस पर कहीं भी फ्रायड, सार्त्र और कामू की वासनात्मक रुग्णता, क्षणवाद और अनास्था आदि की अवांछनीय भावनाओं की प्रेतछाया नहीं मंडराती है। प्रो. देवीप्रसाद गुप्त के शब्दों में–

इन काव्यों में देश-प्रेम, स्वजातीय गौरव, राष्ट्रीय सम्मान, मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा तथा समसामयिक जीवनादर्शों के अनुरूप युगीन प्रश्नों के समाधान की विराट चेष्टा की गई है। समष्टि रूप में मानवतावादी जीवन-दर्शन, सांस्कृतिक निष्ठायें, उत्थानमूलक जीवनादर्श, नारी चेतना के मुखरित स्वर, जन-जागृति का उद्घोष, रचना-शिल्प की नवीनता तथा चरित्रों की युगीन संदर्भो में अवतारणा–प्रसादोत्तर काल के महाकाव्यों की ऐसी विशेषतायें हैं, जिनके आधार पर इन काव्य-ग्रंथों को माँ भारती के भंडार की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. प्रत्येक युग का जीवन .... काव्यों के विराट फलक पर ही पूर्णतया अंकित हो सकता है।
2. स्व. जयशंकर प्रसाद की .... आधुनिक हिंदी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।
3. भारतेन्दु युग में .... शैली का ही प्रयोग हुआ।
4. द्वारिका प्रसाद मिश्र का अवधी भाषा में रचित .... महाकाव्य सात कांडों में विभक्त है।

12.2 श्री उदयभानु हंस

रस सिद्ध कविश्वर श्री उदयभानु हंस ने आधुनिक हिंदी साहित्य की काव्य परंपरा में 'संत सिपाही' है, ऐसी कालजयी कृति का प्रणयन कर न केवल उक्त परंपरा को समृद्ध किया है बल्कि उसे प्रभूत रूप से महिमंडित भी किया है। कवि हंस ने अतीव सतर्कता से एक ऐसे वरेण्य इतिवृत्त का चयन किया है जो अपनी उदात्तता में स्वयं एक महाकाव्य है। 'संत सिपाही' के आदर्शनायक गुरु गोबिंद सिंह बहुआयामी व्यक्तित्व से संपन्न है।

इनकी दूसरी प्रबंधात्मक काव्य कृति है 'हरियाणा गौरव गाथा' जिसे कवि ने स्वयं वृतकाव्य कहा है। इसमें हरियाणा वीर भूमि से संबद्ध वैदिक युगों से लेकर आज तक के सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक ह्रास विकास का यह अत्यंत स्वच्छंद और सजीव दर्पण है। हंस जी जिसके कारण लोकप्रिय हुए हैं वह हैं रुबाइयाँ जिनके अनेक संस्करण हो चुके हैं। वास्तव में उन्हें रुबाई सम्राट कहना अधिक उचित होगा। वह हरियाणा के राज्य कवि भी रह चुके हैं।

नोट

क्या आप जानते हैं जयशंकर प्रसाद रचित 'कामायनी' आधुनिक हिंदी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।

12.3 क्या आधुनिक कविता में गत्यावरोध है?

अब तक हमने आधुनिक हिंदी साहित्य की कविता की विकासात्मक गतिविधियों का पर्यवेक्षण किया है। आधुनिक हिंदी-साहित्य की कविता राष्ट्रीय जागरण से लेकर अब तक के प्रयोगवादी युग तक अनेक पड़ावों पर गुजरती हुई पहुँची है। उसमें अनेक परिवर्तन आए। उसमें छायावादी युग तक भाव और कला क्षेत्र में उत्तरोत्तर विकास एवं उत्कर्ष आया। उत्तर-छायावादी प्रगतिवादी कविता भी लोकसंग्रह की भावना से सम्मिलित होकर अपनी गरिमा को बनाये रही। हिंदी साहित्य को भारतेंदु, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी, दिनकर आदि सजग मनीषी कलाकारों तथा उनकी अमर कलाकृतियों पर गर्व है जो कि सर्वथा उचित है, किंतु आधुनिक हिंदी साहित्य की कविता के विकास की कहानी को जानने वालों से यह बात छिपी नहीं है कि उत्तर-छायावादी काल में हिंदी कविता में ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियों का समावेश भी होने लग गया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पूर्व तक कविता-क्षेत्र में जिस किसी रूप में यत्किंचित उदात्तता फिर भी बनी रही, किंतु इसके अनंतर कविता अपने उच्चासन से उतरकर बालकों के खेल-खिलवाड़ में रम गई। नवीन विलक्षण प्रयासों के नाम पर उसमें असामाजिक, स्वार्थप्रेरित, अहंनिष्ठ, घोर रुग्ण व्यक्तिवाद, दमित वासनाओं और कुंठाओं, चींटियों और चप्पलों जैसे विषयों को ज्यों-के-त्यों रूप में निरुद्देश्य अभिव्यक्त करने की प्रवृत्ति को कविता में समाविष्ट कर देने को अत्यधिक प्रश्रय दिया जाने लगा है। आज की तथाकथित नयी कविता में विघटन, ध्वंसात्मकता, अति बौद्धिकता, रुचि-विहीनता आदि की दूषित प्रवृत्तियों को उनके उग्र रूप में देखा जा सकता है। आज की नयी कविता में युग में उदात्त भावनाओं और जीवन के कलात्मक अंकन का सर्वथा अभाव है। लगता है कि आज की प्रयोगवादी या नयी कविता पथभ्रष्ट होकर मणि-मुक्ताओं के स्थान पर धूलि भरे, घुन खाये घोंघों को समेटने में जा रही है। निश्चित रूप से कविता की विद्रूप अथच दयनीय दशा हिंदी जगत् के लिए महती विचारणीय समस्या है। (शिवदान सिंह)

लेकिन कविता की उक्त दशा को देखकर उसमें गत्यावरोध कहना भ्रामक होगा, क्योंकि कविता किसी एक स्थान पर आकर रुक नहीं गई है। कविता में मानव-जीवन के समान परिवर्तन, विकास एवं ह्रास की स्थितियाँ आती रहती हैं। अधिक-से-अधिक इस प्रसंग में हम कह सकते हैं कि आज की कविता ह्रासोन्मुखी है और उसमें मूल्यों के विघटन की प्रक्रिया जोरों पर है। अवरोध एक जड़ता है जो कि नितांत निंदनीय है। विकास और ह्रास चिरस्थायी नहीं होते। आज कविता में जो ह्रासोन्मुखता है वह निःसंदेह क्षणस्थायी है। आज राष्ट्रीय-जीवन में मूल्यों के विघटन की जो प्रक्रिया दृष्टिगोचर होती है वह कविता में मूल्यों के लिए उत्तरदायी है, किंतु यह निश्चित है कि राष्ट्र के जीवन में विघटन की यह प्रक्रिया जल्दी ही समाप्त हो जायेगी। शिवदान सिंह चौहान इन ह्रास के कारणों का विश्लेषण करते हुए लिखते हैं–"विश्व-मंच पर पूँजीवाद के पतन और समाजवाद के उत्थान का यह संक्रांति-युग इस समय कला-निर्माण के लिए अनुकूल नहीं सिद्ध हो रहा, लेकिन विश्व-शांति की कोई स्थायी व्यवस्था हो गई और तीसरे महायुद्ध की सर्वनाशी विभीषिका से मनुष्य-जाति बच गई तो निश्चय ही हमारे सांस्कृतिक जीवन का अगला उत्थान राष्ट्र-निर्माण का नया आशीर्वाद लेकर पैदा होगा और भारतीय साहित्य को नई उदात्त प्रेरणाओं, नई कल्पनाओं और भावनाओं से अनुप्राणित करेगा।" उस समय हिंदी कवि को समाज के साथ तादात्म्य स्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। उसकी प्रतिभा युग-निर्माणकारी तत्त्वों को संजोकर युग-जीवन के सत्यों के उद्घाटन में अपने आपको कृतकार्य समझेगी। आशा है कि साहित्य को प्रसाद जैसे युगांतर उपस्थित करने वाले, बहुमुखी, प्रतिभासंपन्न, उदारचेता कलाकार मिलेंगे। हिंदी कविता का भविष्य आशामय है। क्षणस्थायी ह्रासोन्मुखता, का अंत अवश्यंभावी है। हिंदी कविता का आने वाला रूप क्या और कैसा होगा, इस संबंध में निश्चित रूप से कुछ कह सकना खतरे से खाली नहीं होगा, किंतु इतना अवश्य दिखाई देता है कि "नये उत्थान का साहित्य व्यक्तिवाद की घोर अनास्था, अतिबुद्धिवाद और समाजद्रोही अहंमन्यता का

नोट

एकांगी, व्यक्तित्व को खंडित और कुंठित करने वाला साहित्य न होगा, बल्कि ज्ञान-विज्ञान की संचेतना को आत्मसात् करके मनुष्य के संपूर्ण अंतर्बाह्य जीवन को मूर्त कलात्मक अभिव्यक्ति देने वाला साहित्य होगा जिससे मनुष्य के व्यक्तित्व का उदात्त और नैतिक, अखंडित और मुक्त विकास प्रेरणा ग्रहण कर सकेगा। लेखक केवल अपने स्वधर्मी लोगों के लिए नहीं लिखेगा, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र और प्रकारांतर से संपूर्ण मानव-जाति के लिए लिखेगा और अपनी रचना को सबके लिए प्रेषणीय बनाने का उत्साह लेकर आगे बढ़ेगा अर्थात् स्वयं अपने रचनाशील व्यक्तित्व की गरिमा और दायित्व को पहचानेगा'' (शिवदान सिंह चौहान)। उस समय की कविता मनुष्य की वाणी में बोलने वाले विकृत मानव द्वारा निर्मित सरीसृपों का जगत् न होकर इस धरती के सचेत मानव द्वारा निर्मित मानव के हर्ष-उल्लास, रुदन और ह्रास से संपन्न दुनिया होगी। आशा है कि आधुनिक कविता प्रयोगवाद के दलदल से निकलकर जीवन-निर्माण के स्वस्थ धरातल पर शीघ्र अपने पाँव टिकायेगी और उसका लेखक निरर्थक अंधानुकरण के मोहजाल से निकलकर निजी जीवन अनुभूतियों के अंकन को प्रश्रय देगा। वह अति घोर वैयक्तिकता, अहंवादिता, कामुकता, स्वार्थपरता और अनैतिकता की अवांछनीय प्रवृत्तियों को छोड़कर उदार अखंड एवं व्यापक मानवता के लोक मंगल विधायक उद्घोष से हिंदी भारती को सप्राण उज्ज्वल एवं पुनीत बनायेगा। उसे यह याद रखना होगा कि मानवता सब आदर्शों से ऊपर है।

टास्क उदयभानु हंस का संक्षिप्त परिचय दें।

आज समूचा राष्ट्र संक्रांति के नाना दौरों से गुजर रहा है। आज प्रत्येक भारतवासी के सामने आदर्श मानव-मूल्यों तथा समृद्ध एवं उन्नत भारत के सृजन की समस्या है। इस दशा में साहित्यकार का सहयोग सर्वाधिक सुंदर और फलप्रद सिद्ध हो सकता है। किंतु खेद का विषय है कि आज का तथाकथित नया कवि नवीनता के अंधाधुंध मोह में केवल निजी विज्ञापनार्थ बरसाती मेंढकों के समान नित्य नवीन काव्य संप्रदायों की सृष्टि में व्यस्त है। सबसे बड़ी विडंबना यह है कि उसका नया काव्य जन मानस का प्रतिनिधित्व न करके अभिजात्य वर्ग के हितों का समर्थन करता है। उसकी रचनाएँ काव्योचित सहज संवेदना से शून्य तथा कृत्रिम बनती जा रही हैं। ये रचनाएँ काव्य के महनीय आदर्श से दूर होने के कारण नितांत हल्की और शिल्प प्रधान की दृष्टि से प्रायः भौंड़ी बनती जा रही हैं। आज के नवीन काव्य संप्रदायों के प्रतिपल नवाग्रही पुरोधाओं को यह स्मरण रखना होगा कि, ''कविता संपूर्ण चेतना की अखंड अभिव्यक्ति है, वह खंडित व्यक्तित्व की बौद्धिक शब्द-लीला मात्र नहीं है।'' असंबद्ध शब्द-जाल और वैचित्र्यवाद की कारीगरी से पाठक को उलझाने और वास्तविक कवि कर्म में वृहदंतर है। कविधर्म कोरे फैशन से भिन्न होता है। नया भावबोध या नयी अभिव्यक्ति के चिल्लाने मात्र से काव्य का महत्त्व नहीं बढ़ जाता। किसी काव्य की क्षमता उसमें चित्रित अनुभूति गहनता और शाश्वत मानवीय मूल्यों के प्रति सजगता में निहित है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए काव्य में हृदय के सहज उद्रेक और उसके साथ निश्छल अभिव्यक्ति का योग अनिवार्य है। एजरा पाऊंड, रिंबों और एमीलावल के भारतीय अंध श्रद्धालु भक्तों को ग्राह्य और अग्राह्य के संबंध में विवेक बुद्धि से काम लेकर निजी अनुभूतियों के सहारे जीवित रहने की कला सीखनी होगी। उन्हें अनुभूतियों के उस आयाम पर पहुँचना होगा जहाँ काव्य स्वयं प्रस्फुटित हो जाता है। कहीं ऐसा न हो कि ''कौवा चला हंस की चाल अपनी भी भूल गया'' की उक्ति नये कवि पर चरितार्थ होने लगे। केवल नवीनता ही काव्योत्कर्ष की विधायिनी शक्ति नहीं हुआ करती है। कालिदास के शब्दों में–

पुराणमित्येव न साधु सर्वम्,
न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्तरद्भजन्ते,
मूढ़ः पर प्रत्ययनेय बुद्धि। *–मा. अग्निमित्रम् 1।2*

पुरानी होने से ही न तो सब वस्तुएँ अच्छी होती हैं और न कोई वस्तु नई होने के कारण हेय एवं तुच्छ होती है। विवेकशील मनुष्य गुणों और दोषों की परीक्षा कर श्रेष्ठतर वस्तु को अपनाते हैं। मूढ़ जन दूसरों के बताने पर ग्राह्य और अग्राह्य का निर्णय किया करते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. रामावतार तरुण का प्रबंध काव्य 'बाणांबरी' .... सर्गों में विभक्त है।
   (क) पाँच (ख) सात (ग) बीस (घ) दस
6. कवि उदयभानु हंस .... राज्य के राज्यकवि भी रह चुके हैं।
   (क) बिहार (ख) हरियाणा (ग) पंजाब (घ) उत्तर प्रदेश
7. छायावादी युग तक भाव व कला क्षेत्र में उत्तरोत्तर .... एवं उत्कर्ष आया।
   (क) गिरावट (ख) महत्त्वपूर्ण (ग) विकास (घ) तीनों
8. उर्वशी जैसे महाकाव्य का आधार .... है।
   (क) ऋग्वेद (ख) सामवेद (ग) संहिता (घ) महाभारत

12.4 सारांश (Summary)

- आधुनिक हिंदी साहित्य में गद्य का प्राचुर्य रहा और उसकी नाना विधाओं का क्षिप्र गति से विकास हुआ तथा हो रहा है। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल में मुक्तक-काव्य की विपुल राशि की सृष्टि हुई है।
- साहित्य की यही विधा मनुष्यता की क्रमागत प्रगति और उसके भावात्मक विकास-मार्ग की सूचिका है। दिनकर जी के शब्दों में-''विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति मार्ग में मील के पत्थरों के समान होते हैं, वे व्यंजित करते हैं, कि मनुष्य किस युग में, कहाँ तक प्रगति कर सका है।''
- स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' आधुनिक हिंदी-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इसमें भावात्मकता, चारित्रिकता और मानवीय मनोवृत्तियों के अतिसूक्ष्म विश्लेषण के साथ दर्शन तथा आधुनिकता का हृदयावर्जक समन्वय है।
- प्रसादोत्तर काल में रचित प्रबंध काव्य प्रतिपाद्य की दृष्टि से अतीव व्यापक पटभूमि पर आधारित है। इनमें जहाँ एक ओर उर्वशी जैसे महाकाव्य का आधार ऋग्वेद है, वहाँ सेनापति कर्ण, द्रौपदी और एकलव्य जैसी रचनाओं का इतिवृत्त पौराणिक है, सिद्धार्थ और वर्धमान आदि धार्मिक नेताओं से संबद्ध हैं।
- रस सिद्ध कविश्वर श्री उदयभानु हंस ने आधुनिक हिंदी साहित्य की काव्य परंपरा में 'संत सिपाही' है, ऐसी कालजयी कृति का प्रणयन कर न केवल उक्त परंपरा को समृद्ध किया है बल्कि उसे प्रभूत रूप से महिमंडित भी किया है।
- आज समूचा राष्ट्र संक्रांति के नाना दौरों से गुजर रहा है। आज प्रत्येक भारतवासी के सामने आदर्श मानव-मूल्यों तथा समृद्ध एवं उन्नत भारत के सृजन की समस्या है। इस दशा में साहित्यकार का सहयोग सर्वाधिक सुंदर और फलप्रद सिद्ध हो सकता है।
- आज के नवीन काव्य संप्रदायों के प्रतिपल नवाग्रही पुरोधाओं को यह स्मरण रखना होगा कि, ''कविता संपूर्ण चेतना की अखंड अभिव्यक्ति है, वह खंडित व्यक्तित्व की बौद्धिक शब्द-लीला मात्र नहीं है।''

12.5 शब्दकोश (Keywords)

अभिव्यंजना – भावों को भाषा या संकेतों द्वारा स्पष्ट रूप से प्रकट करना।

अभिवंदनीय – स्तुति करने योग्य, वंदनीय।

नोट

12.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रबंध काव्यों का उल्लेख करें।
2. आधुनिक प्रबंध काव्य की रचनात्मक प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालें।
3. क्या आधुनिक कविता में गत्यावरोध है? इस कथन का समीक्षात्मक वर्णन करें।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. प्रबंध	2. 'कामायनी'	3. मुक्तक	4. कृष्णायन
5. (ग)	6. (ख)	7. (ग)	8. (क)।

12.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अभिवन हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*
7. मुग्धबोध हिंदी व्याकरण–*कृष्ण नारायण प्रसाद मागध।*
8. हिंदी व्याकरण की अभ्यास पुस्तिका–*जी.पी. शर्मा, ओरिएंट ब्लैक स्वान।*

इकाई–13 : काव्य के प्रमुख भेद–खंडकाव्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
13.1 खंडकाव्य
13.2 खंडकाव्य के तत्व
13.3 सारांश (Summary)
13.4 शब्दकोश (Keywords)
13.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
13.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- खंडकाव्य के बारे में जानने में।
- 'खंडकाव्य महाकाव्य का संकुचित रूप है' जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का ही एक विशेष रूप है। संस्कृत के आचार्यों ने प्रबंधकाव्य शब्द का प्रयोग अधिक न करके प्राय: सर्गबंध अथवा सर्गबंधकाव्य शब्द का ही प्रयोग किया है क्योंकि प्रबन्ध के भीतर ही वे सर्गबंधकाव्य के अतिरिक्त रूपक, कथा आख्यायिका आदि सभी प्रबंध रूपों को ग्रहण करते थे।

भामह और **दंडी** ने सर्गबंधकाव्य का अर्थ विशेष रूप से महाकाव्य ही लिया है और खंडकाव्य की चर्चा ही नहीं की है। **रुद्रट** ने सभी प्रबंधों को महत् और लघु दो प्रकारों में विभक्त कर उनका अंतर इस प्रकार बताया है–महाकाव्य में चतुर्वर्गों का वर्णन और सभी रसों का यथास्थान निवेश होता है और लघुकाव्य में चतुर्वर्ग में किसी एक धर्म अथवा अर्थ अथवा काम अथवा मोक्ष का और रसों में किसी एक रस का वर्णन होता है। इस प्रकार रुद्रट ने सर्वप्रथम महाकाव्य और लघु (खंड) काव्य पर मौलिक ढंग से विचार किया है।

13.1 खंडकाव्य

आनंदवर्धन ने प्रबंधकाव्य के लिए सर्गबंध काव्य शब्द का प्रयोग किया है और काव्यभेदों का वर्णन नहीं किया। **हेमचंद्र** ने श्रव्यकाव्य में कथा, आख्यायिका और चंपू के साथ केवल महाकाव्य की गणना की है। **विश्वनाथ कविराज** ने साहित्यदर्पण में महाकाव्य का लक्षण बताने के उपरान्त खंडकाव्य का उल्लेख इस प्रकार किया है–

> **''भाषा विभाषा नियमात्काव्यं सर्गमुत्थितम्।**
> **एकार्थ प्रवणै: पद्यै: संधिसामग्रय वर्जितम्।।**
> **खंडकाव्यं भवेत्काव्यस्येक देशानुसारि च।।''**

नोट

इस परिभाषा के अनुसार, ''किसी भाषा अथवा उपभाषा में सर्गबद्ध एवं एककथा के निरूपक पथग्रंथ, जिसमें सभी संधियाँ न हों, 'काव्य' कहलाता है और काव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला 'खंडकाव्य' होता है।''

क्या आप जानते हैं खंडकाव्य महाकाव्य का संकुचित रूप है।

विश्वनाथ की इस परिभाषा का अनुसरण करके हिंदी। **विश्वनाथ प्रसाद मिश्र** ने 'वाङ्मय विमर्श' में खंडकाव्य की परिभाषा इस प्रकार से दी है–

''महाकाव्य के ही ढंग पर जिस काव्य की रचना होती है पर जिसमें पूर्ण जीवन न ग्रहण करके खंड जीवन ही ग्रहण किया जाता है, उसे खंडकाव्य कहते हैं। यह खंड जीवन इस प्रकार व्यक्त किया जाता है, जिससे वह प्रस्तुत रचना के रूप में स्वत: पूर्ण प्रतीत होता है।''

नोट्स खंडकाव्य में जीवन का संपूर्ण चित्र न होकर उसके किसी महत्त्वपूर्ण पक्ष का चित्रण होता है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह के शब्दों में ''सामान्यतया आठ अथवा आठ से अधिक सर्गों वाले प्रबंधकाव्य को महाकाव्य और आठ से कम सर्गों वाले काव्यों को खंडकाव्य माना जाता है परंतु यह वैज्ञानिक विभाजन नहीं है। महाकाव्य वही प्रबंधकाव्य माना जाएगा जिसमें महान् उद्देश्य, महान् चरित्र, समग्र युग-जीवन का चित्रण, गरिमामयी और उदात्त शैली आदि महाकाव्य के सभी गुण पाए जाएँ। जिन प्रबंधकाव्यों में महाकाव्य के उपर्युक्त लक्षण नहीं मिलते, वे चाहे आकार में बड़े हों अथवा छोटे, चाहे आठ से कम सर्ग वाले हों अथवा अधिक सर्ग वाले, महाकाव्य नहीं माने जाएँगे। इसके विपरीत जिनमें जीवन का खंड दृश्य चित्रित होता है और जो कथावस्तु की लघुता तथा उद्देश्य की सीमाओं के कारण वृहदाकार तथा महान् नहीं कहे जाते, खंडकाव्य कहलाते हैं।'' **डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा** ने खंडकाव्य की परिभाषा इस प्रकार से प्रस्तुत की है–''खंडकाव्य एक ऐसा पद्यबद्ध तथा काव्य है जिसके कथानक में इस प्रकार की एकात्मक अन्विति हो कि उसमें अप्रासंगिक कथाएँ सामान्यत: अंतर्मुक्त न हो सकें, कथा में एकांगिता हो तथा कथा-विन्यास में क्रम–आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो। कथा की एकांगिता के परिणामस्वरूप खंडकाव्य के आकार में लघुता स्वाभाविक है और साथ ही उद्देश्य की महाकाव्य जैसी महनीयता संभव नहीं है।''

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. खंडकाव्य .... का ही एक विशेष रूप है।
2. महाकाव्य के लक्षण .... में संकुचित रूप में आते हैं।
3. महाकाव्य में .... का वर्णन और सभी रसों का यथास्थान निवेश होता है।

13.2 खंडकाव्य के तत्व

उपर्युक्त परिभाषाओं से खंडकाव्य के **निम्न तीन तत्वों** का परिचय मिलता है–

1. खंडकाव्य में जीवन का **संपूर्ण चित्र न होकर** उसके किसी **महत्त्वपूर्ण पक्ष का** चित्रण होता है। 'खंड' उस अनुभूति के स्वरूप की ओर संकेत करता है जिसमें जीवन अपने संपूर्ण रूप में कवि को प्रभावित

न कर खंड रूप में ही प्रभावित करता है। महाकाव्य और खंडकाव्य में उपन्यास और कहानी का-सा अंतर है। सीमित दृष्टि पथ से जीवन का जितना दृश्य दिखाई पड़ता है, उसी का चित्रण कहानी और खंडकाव्य में होता है। ऐसे जीवन दृश्य में महाकाव्य और महाकाव्यात्मक उपन्यास जैसी व्यापकता, उच्चता और गहराई नहीं होती और न ही उसमें उतार-चढ़ाव और मोड़ ही होते हैं। न उसमें अवांतर कथाएँ होती हैं और न ही कथा से अनावश्यक स्फीति ही होती है। उसमें तो अनुभूति के किसी एक ही पक्ष में मार्मिक चित्रण द्वारा पाठक को अभिभूत किया जाता है। इसके लिए कवि प्रथम किसी भावोद्‌बोधक, रोचक तथा रमणीय घटना, परिस्थिति अथवा प्रसंग की योजना करता है और पुन: अपने वर्णन-कौशल से उसे भव्य तथा हृदयहारी रूप दे देता है।

2. खंडकाव्य महाकाव्य का संकुचित रूप है अर्थात् महाकाव्य के लक्षण खंडकाव्य में संकुचित रूप में ही आते हैं। खंडकाव्य में ही घटना तीव्र गति से अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होती है। उसमें सर्गों की संख्या अवश्य कम होती है और छंद योजना में भावानुकूलता को महत्त्व दिया जाता है। किसी एक ही रस की अभिव्यक्ति होती है तथा अवांतर वर्णनों—सज्जन, प्रशंसा, दुर्जन निंदा आदि के लिए विशेष अवकाश नहीं रहता, परंतु प्रबंधात्मकता अक्षुण्ण रहती हैं।
3. खंडकाव्य में अन्विति और कसाव के तत्त्व अधिक समृद्ध होते हैं। खंडकाव्य की प्रेरणा के मूल में अनुभूति का स्वरूप एक संपूर्ण खंड की प्रभावात्मकता से बनता है। जीवन के मर्मस्पर्शी खंड का बोधमात्र कवि के हृदय में नहीं होता प्रत्युत उसका समन्वित प्रभाव उसके हृदय पर पड़ता है। तब प्रेरणा के बल पर जो रूप खड़ा होता है, यह खंडकाव्य कहलाता है।

टास्क आनंदवर्धन ने प्रबंधकाव्य के लिए किस शब्द का प्रयोग किया है?

हिंदी में नरोत्तम कवि कृत ''सुदामा चरित्र'' मैथिलीशरण गुप्त कृत ''जयद्रथ वध'' रामनरेश त्रिपाठी कृत 'पथिक', 'मिलन', 'स्वप्न', जगन्नाथ रत्नाकर का 'गंगावतरण' जयशंकर प्रसाद का 'प्रेमपथिक' पंत का 'ग्रंथि' निराला का 'तुलसीदास' तथा रामकुमार वर्मा का 'चित्तौड़ की चिता' सुंदर खंडकाव्य हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

4. खंडकाव्य महाकाव्य का .... रूप है।

   (क) संकुचित (ख) रोचक (ग) खंड (घ) सामान्य
5. खंडकाव्य में अन्विति और कसाव के तत्व .... होते हैं।

   (क) कम समृद्ध (ख) अधिक समृद्ध (ग) बिल्कुल नहीं (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. कथा की एकांगिता के परिणामस्वरूप खंडकाव्य के आकार में .... स्वाभाविक है।

   (क) लघुता (ख) दृढ़ता (ग) दीर्घता (घ) इनमें से कोई नहीं।

13.3 सारांश (Summary)

- खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का ही एक विशेष रूप है। संस्कृत के आचार्यों ने प्रबंधकाव्य शब्द का प्रयोग अधिक न करके प्राय: सर्गबंध अथवा सर्गबंधकाव्य शब्द का ही प्रयोग किया है क्योंकि प्रबन्ध के भीतर ही वे सर्गबंधकाव्य के अतिरिक्त रूपक, कथा आख्यायिका आदि सभी प्रबंध रूपों को ग्रहण करते थे।

नोट

- रुद्रट ने सभी प्रबंधों को महत् और लघु दो प्रकारों में विभक्त कर उनका अंतर इस प्रकार बताया है—महाकाव्य में चतुर्वर्गों का वर्णन और सभी रसों का यथास्थान निवेश होता है और लघुकाव्य में चतुर्वर्ग में किसी एक धर्म अथवा अर्थ अथवा काम अथवा मोक्ष का और रसों में किसी एक रस का वर्णन होता है।
- विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'वाङ्मय विमर्श' में खंडकाव्य की परिभाषा इस प्रकार से दी है—

  ''महाकाव्य के ही ढंग पर जिस काव्य की रचना होती है पर जिसमें पूर्ण जीवन न ग्रहण करके खंड जीवन ही ग्रहण किया जाता है, उसे खंडकाव्य कहते हैं। यह खंड जीवन इस प्रकार व्यक्त किया जाता है, जिससे वह प्रस्तुत रचना के रूप में स्वत: पूर्ण प्रतीत होता है।''
- खंडकाव्य में जीवन का संपूर्ण चित्र न होकर उसके किसी महत्त्वपूर्ण पक्ष का चित्रण होता है। 'खंड' उस अनुभूति के स्वरूप की ओर संकेत करता है जिसमें जीवन अपने संपूर्ण रूप में कवि को प्रभावित न कर खंड रूप में ही प्रभावित करता है।
- खंडकाव्य महाकाव्य का संकुचित रूप है अर्थात् महाकाव्य के लक्षण खंडकाव्य में संकुचित रूप में ही आते हैं। खंडकाव्य में अन्विति और कसाव के तत्त्व अधिक समृद्ध होते हैं।

13.4 शब्दकोश (Keywords)

चतुर्वर्ग – चार वर्ग

सामान्यतया – सामान्य रूप से

महनीयता – महानता, प्रशंसा करने योग्य

13.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. खंडकाव्य से क्या तात्पर्य है? परिभाषित कीजिए।
2. खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का ही एक विशेष रूप है, सिद्ध कीजिए।
3. खंडकाव्य के तीन तत्वों का परिचय दीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. प्रबंधकाव्य	2. खंडकाव्य	3. चतुर्वर्गों
4. (क)	5. (ख)	6. (क)

13.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. सरल हिंदी व्याकरण और रचना—*वासुदेव नंदन प्रसाद, भारती भवन।*
2. परिष्कृत हिंदी व्याकरण—*बद्रीनाथ कपूर, प्रभात प्रकाशन।*
3. अभिनव हिंदी व्याकरण—*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*

नोट

इकाई–14 : काव्य के प्रमुख भेद–मुक्तक काव्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
14.1 मुक्तक काव्य
14.2 मुक्तक के भेदोपभेद
14.3 उद्भव और विकास
14.4 हिंदी में मुक्तक काव्य का विकास
14.5 सारांश (Summary)
14.6 शब्दकोश (Keywords)
14.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
14.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मुक्तक काव्य को जानने में।
- मुक्तक काव्य के भेदोपभेद जानने में।
- हिंदी में मुक्तक काव्य का विकास जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्राचीन भारतीय आचार्यों ने प्रबंध-काव्य के विपरीत रूप अर्थात् अप्रबंध-काव्य के लिए मुक्तक शब्द का व्यवहार किया है। अग्निपुराण ने ऐसे श्लोकों को मुक्तकों की संज्ञा दी है जो अपने अर्थद्योतन में स्वत: समर्थ हों–''मुक्तक श्लोक एकैकश्चमत्कारक्षम: सताम्।'' आगे चलकर ध्वन्यालोक के लोचनकार **अभिनवगुप्त** ने इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए लिखा है कि ऐसे पद्य को, जिसका अगले-पिछले पद्यों से कोई संबंध न हो तथा जो अपने विषय को प्रकट करने में अकेला समर्थ हो, उसे मुक्तक कहते हैं। साथ ही स्वतंत्र और निरपेक्ष रूप में अर्थ-द्योतन में समर्थ होते हुए भी वह प्रबंध के बीच समाविष्ट हो सकता है। अभिनवगुप्त ने इसकी एक विशेषता और बताई है कि वह उसमें विभाव, अनुभावादि से परिपुष्ट इतना रस भरा होता है कि वह पाठक को रसानुभूति प्रदान कर सकता है। **आनंदवर्धनाचार्य** का कथन है कि प्रबंध के अंतर्गत जितने भावों या रसों का परिपाक संभव है, उतने ही भावों या रसों की व्यंजना मुक्तक में भी संभव है।

14.1 मुक्तक काव्य

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने मुक्तक के स्वरूप का अधिक स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है कि ''मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं रहती जिसमें कथा-प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता

नोट

है और हृदय में एक-स्थायी प्रभाव ग्रहण करता है। इसमें तो रस के छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदय-कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबंधकाव्य की विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है, इसी से यह सभा-समाजों के लिए अधिक उपयुक्त होता है।'' यद्यपि यहाँ मुक्तक के स्वरूप की रूपरेखा बहुत ही आकर्षक शब्दावली में प्रस्तुत की गई है जिससे प्रबंध और मुक्तक के अंतर पर प्रकाश पड़ता है, किंतु हमारे प्राचीन और आधुनिक आचार्यों ने कहीं भी इस प्रश्न का विचार नहीं किया कि मुक्तक रचना में रस-निष्पत्ति किस प्रकार होती है? रस-निष्पत्ति के लिए भाव, विभाव, अनुभाव एवं संचारी आदि का चित्रण अपेक्षित होता है, किंतु मुक्तक का क्षेत्र संकीर्ण होता है, उसमें इन सबके लिए स्थान नहीं होता–किसी एक अंग का ही चित्रण हो पाता है, अत: उससे रसानुभूति की अपेक्षा कैसे की जा सकती है और यदि किसी एक अवयव से ही रस-निष्पत्ति हो सकती है तो फिर प्रबंध में सभी अवयवों के विकास पर क्यों बल दिया जाता है?

यह तो स्वयं **आचार्य शुक्ल** ने भी स्वीकार कर लिया है कि प्रबंध में जहाँ हृदय को रस-मग्न करने की क्षमता होती है, वहाँ मुक्तक से रस के छींटे ही पड़ते हैं, जिनकी हृदय-कलिका खिल उठती है (उसमें मग्न नहीं हो पाती)। इसका तात्पर्य हुआ कि रसानुभूति की दृष्टि से मुक्तक काव्य में प्रबंध की अपेक्षा न्यून शक्ति होती है। फिर भी हमारी मूलभूत समस्या–कि मुक्तक से रस-निष्पत्ति (भले ही रस की धारा न होकर छींटे ही सही) किस प्रकार होती है–का समाधान नहीं होता।

हमारे विचार से उत्कृष्ट कोटि का मुक्तक काव्य प्रबंधकाव्य से चुनकर अलग किया हुआ कोई ऐसा अंश नहीं होता, जो कि वाटिका से चुनकर तैयार किए हुए गुलदस्तों के समान हो और न ही वह प्रबंध का एक लघु-संस्करण होता है। प्रबंध और मुक्तक का संबंध पूरे शरीर और उसके एक अंग (हाथ, पैर आदि) का-सा नहीं होता, और न ही दीर्घकाय मनुष्य और लघुकाय शिशु का-सा होता है। एक बार डॉ० गुलाब राय जी ने उपन्यास और कहानी का अंतर स्पष्ट करते हुए बैल और मेंढक का उदाहरण दिया था, वही बात प्रबंध और मुक्तक के संबंध में कह सकते हैं। वस्तुत: दोनों की स्वतंत्र सत्ता है और दोनों स्वतंत्र विधाएँ हैं। एक मुक्तककार रस के सारे अवयवों को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत नहीं करता, जिससे कि वे उन सबका चर्वण करके रस की उपलब्धि कर सकें, अपितु कवि स्वयं अपने मानस में ही उन सबका आलोड़न-विलोड़न कर लेता है और उससे प्राप्त अनुभूति-मात्र को अपने काव्य में प्रस्तुत करता है। कहना चाहिए कि प्रबंध में वह सारी स्थूल सामग्री उपस्थित होती है, जिससे रस की निष्पत्ति संभव होती है; जबकि मुक्तककार सामग्री प्रस्तुत न करके उसका केवल सार या रस मात्र प्रस्तुत करता है। प्रबंधकार, मैदा, चीनी, घृत आदि सब कुछ प्रस्तुत करता है जिससे हलुआ तैयार हो सके; जबकि मुक्तककार केवल बना-बनाया हलुआ ही उपस्थित कर देता है, भले ही आकार-परिमाण की दृष्टि से वह न्यून ही क्यों न हो।

मुक्तक काव्य में रस के सभी स्थूल अवयवों का चित्रण नहीं होता, उसमें किसी एक अवयव या भाव-दशा का निरूपण होता है, किंतु इसमें कुछ ऐसे संकेत होते हैं जिससे शेष अवयवों की कल्पना करने में पाठक स्वयं समर्थ हो सके। उदाहरण के लिए निम्नांकित सवैया द्रष्टव्य है–

पर कारज देह को धारे फिरौ, परजन्य! जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ, सबही विधि सुंदरता सरसौ।
'धन आनंद' जीवनदायक हौ, कबौ मेरियौ पीर हिए परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन मो अँसुवान को ले बरसौ।

यहाँ आलंबन और आश्रय का स्पष्ट रूप से कोई उल्लेख नहीं है, उनकी परिस्थितियों व भाव-दशा का भी अंकन नहीं है, किंतु प्रणयी हृदय के व्याकुल उद्गारों द्वारा ही सारी स्थिति की व्यंजना हो जाती है। वस्तुत: यहाँ स्थायीभाव के विभिन्न अवयव न होकर स्वयं स्थायीभाव ही द्रवीभूत होकर प्रवाहित हो रहा है।

14.2 मुक्तक के भेदोपभेद

संस्कृत विद्वानों एवं आचार्यों ने मुक्तक के कई भेदोपभेद किये हैं। दंडी ने उसके मुख्य तीन भेद किए हैं–मुक्तक, कुलक कोष और संघात। आगे चलकर भेदों की संख्या में वृद्धि हो गई। ये भेदोपभेद मुख्यत: श्लोक संख्या व

विषय-भेद पर ही आधारित हैं। विभिन्न विद्वानों द्वारा मुक्तक के ये 9 भेद स्वीकृत किए गए हैं–(1) मुक्तक–एक श्लोक में पूर्ण होने वाली रचना, (2) युग्मक–दो श्लोकों में समाप्त होने वाली, (3) विशेषक–तीने श्लोकों वाली रचना, (4) कलापक–चार श्लोकों वाली रचना, (5) कुलक–पाँच श्लोकों वाली रचना, (6) कोप–ऐसे श्लोकों का संग्रह को परस्पर संबद्ध न हों, (7) प्रघट्टक–एक ही कवि द्वारा रचित श्लोकों का समूह, (8) विकीर्णक–अनेक कवियों द्वारा रचित श्लोकों का संग्रह, (9) संघात या पर्याय बंध–एक कवि द्वारा एक विषय पर रचित छंदों का संग्रह।

नोट्स मुक्तक काव्य में रस के सभी स्थूल अवयवों का चित्रण नहीं होता, उसमें किसी एक अवयव या भाव-दशा का निरूपण होता है।

उपर्युक्त वर्गीकरण न तो वैज्ञानिक है और न ही विशेष उपयोगी। सामान्यत: आजकल मुक्तक के प्रथम भेद मुक्तक (एक श्लोक वाली रचना) को मुक्तक कहा जाता है। शेष भेदों का प्रचलन नहीं है। **डॉ. शंभुनाथ सिंह** ने हिंदी में प्रचलित मुक्तकों का वर्गीकरण बहुत ही सुंदर ढंग से किया है जो इस प्रकार है–

(1) संख्याश्रित मुक्तक काव्य जैसे 'हजारा', 'सतसई', 'शतक', 'पचास', 'बावनी', 'चालीसा', 'पचीसी', 'बाईसी' आदि।

(2) वर्णमालाश्रित मुक्तक काव्य–जैसे मातृका संज्ञक (दोहा मातृका), कक्क संज्ञक, ककहरा; अखरावट, बारहखड़ी आदि।

(3) छंदाश्रित–दोहावली, कवितावली।

(4) रागाश्रित–जैसे राम लावनी रेखता आदि।

(5) ऋतु आश्रित–चर्चरी, फागु, होरी, बारहमासा, षड्ऋतु आदि।

(6) पूजा-धर्म आश्रित–स्तोत्र, स्तुति, स्तवन आदि।

यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो यह वर्गीकरण भी विशुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि पर आधारित नहीं है। इसमें विभिन्न मुक्तक-संग्रहों के नामकरण को ही आधार माना गया है, उसकी विषय-वस्तु या शैली का ध्यान नहीं रखा गया है। वस्तुत: मुक्तक काव्य भेदोपभेद के पचड़े एवं वर्गीकरण की सीमाओं से भी मुक्त रहना अधिक पसंद करता है, अत: उसे बलात् भेदों के कठघरे में जकड़ना उचित नहीं होगा। मुक्तक काव्य का कोई निश्चित विषय, निश्चित रूप या निश्चित शैली नहीं है, अत: उसके रूप-भेदों की संख्या अगणित है।

क्या आप जानते हैं प्राकृत के मुक्तक काव्य का सर्वाधिक वैभव हाल की 'गाथा-सप्तशती' में उपलब्ध होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. आचार्य शुक्ल के अनुसार, यदि प्रबंधकाव्य विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ .... है।
2. दंडी ने मुक्तक के तीन भेद किए हैं–मुक्तक, ... और संघात।
3. .... का कोई निश्चित विषय, निश्चित रूप या निश्चित शैली नहीं है।

नोट

14.3 उद्‌भव और विकास

यद्यपि सृष्टि के आदि-काव्य के विषय में आज हम कुछ नहीं जानते, किंतु इतना निश्चित है कि उसकी शैली मुक्तक ही रही होगी, क्योंकि प्रबंधकाव्य का विकास तो धीरे-धीरे मानवीय सभ्यता की उन्नति एवं मानव-मस्तिष्क के विकास के साथ-साथ मुक्तक काव्य के अनंतर ही हुआ होगा। विश्व की प्राचीनतम उपलब्ध रचना ऋग्वेद भी मुक्तक रूप में ही रचित है। आगे चलकर पालि और प्राकृत साहित्य में भी मुक्तक की प्रधानता मिलती है। बौद्ध कवियों द्वारा थेरि गाथाओं में तथा जैन कवियों द्वारा अर्द्धमागधी में उपदेश एवं नीति-प्रधान सुंदर मुक्तकों की रचना हुई है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–''स्वार्थरहित देने वाला दुर्लभ है, स्वार्थरहित जीवन निर्वाह करनेवाला भी दुर्लभ है। स्वार्थरहित देने वाला और स्वार्थरहित होकर जीने वाला दोनों ही स्वर्ग को जाते हैं।'' एक अन्य मुक्तक में कहा गया है–''जैसे बिडाल के रहने के स्थान के पास चूहों का रहना प्रशस्त नहीं है, उसी प्रकार स्त्रियों के निवास-स्थान के बीच में ब्रह्मचारियों का रहना क्षम्य नहीं।''

प्राकृत के मुक्तक काव्य का सर्वाधिक वैभव हाल की 'गाथा-सप्तशती' में उपलब्ध होता है। इसमें कवि ने अपना उद्देश्य काम की शिक्षा देना घोषित किया है, अत: इसमें शृंगार-रस की प्रधानता होना स्वाभाविक है। शृंगार के अतिरिक्त इसमें नीति, ज्योतिष, वैद्यशास्त्र एवं कृषि-विज्ञान आदि की चर्चा हुई है। गाथा-सप्तशतीकार का दृष्टिकोण सर्वत्र यथार्थवादी है, अत: इसमें काल्पनिक जगत् के राजा-रानियों को भूलकर खेत-खलिहानों में कार्य करने वाले जनसाधारण का चित्रण स्वाभाविक रूप में किया गया है। प्रेमी-प्रेमिका के मनोभावों, दूत-दूतिकाओं द्वारा पहुँचाए जाने वाले संदेशों, परिवार और समाज की मर्यादाओं का उल्लंघन करके होने वाले गुप्त संबंधों आदि का चित्रण इसमें खुलकर हुआ है। इसमें शैली की सरलता, सरसता और स्वाभाविकता का गुण विद्यमान है।

स्वयं हाल के कथनानुसार प्राकृत में शृंगारी मुक्तकों की संख्या करोड़ों तक पहुँचती थी, जिनमें से कुछ अच्छे मुक्तकों का संग्रह उसने 'काव्य-सप्तशती' के रूप में किया। नाट्य-शास्त्र, ध्वन्यालोक, शृंगार-प्रकाश, दश-रूपक, काव्य-प्रकाश आदि ग्रंथों में भी स्थान-स्थान पर प्राकृत के मुक्तकों को उद्धृत किया गया है, जिससे अनुमान किया जाता है कि प्राकृत में मुक्तक-शैली का बहुत प्रयोग एवं प्रचार रहा होगा। संभवत: प्राकृत में मुक्तकों की लोकप्रियता से प्रभावित होकर ही संस्कृत के कवियों का ध्यान भी मुक्तक-रचना की ओर आकर्षित हुआ होगा। संस्कृत के कवियों में अमरुक ने 'अमरुक-शतक' की, भर्तृहरि ने शृंगार-शतक, नीति-शतक एवं वैराग्यशतक की और गोबर्द्धन ने आर्या-सप्तशती की रचना की। इन ग्रंथों पर 'गाथा-शप्तशती' का पूरा प्रभाव पाया जाता है। इनके अतिरिक्त कवि विल्हण की 'चोर-पंचाशिका', कालिदास की 'शृंगार-तिलक' आदि भी उल्लेखनीय हैं। संस्कृत के अन्य कवियों ने देवी-देवताओं की स्तुति में भी मुक्तक शैली में शतक, स्तोत्र एवं स्तुतिपाठ लिखे, जैसे–चंडीशतक, दुर्गा-सप्तशती, राम-स्तोत्र आदि, किंतु साहित्यिक दृष्टि से ये महत्त्व-शून्य हैं।

प्राकृत और संस्कृत की मुक्तक-परंपरा का विकास अपभ्रंश में हुआ। एक ओर सिद्ध कवियों में से सरहपाद ने 'दोहा-कोश' की रचना की, तो दूसरी ओर जैन कवियों में से योगींदु ने 'परमात्म-प्रकाश' व 'योगसार' की, रामसिंह ने 'पाहुड़ दोहा', सुपभाचार्य ने 'वैराग्यसार', देवसेन ने 'सावधम्म दोहा', जिनदत्त सूरि ने 'उपदेशरसायन राज' आदि की रचना की। इन मुक्तकों में धर्म, सदाचार एवं नीति का प्रतिपादन हुआ है, अत: इनमें शांत रस की प्रमुखता है, किंतु अपभ्रंश में शृंगारिक मुक्तकों का भी अभाव नहीं है। प्राकृत-व्याकरण, छंदानुशासन, कुमार-प्रतिबोध, प्रबंध-चिंतामणि, प्रबंध-कोष, प्राकृत-पैंगलम् आदि में अनेक ज्ञात और अज्ञात कवियों के असंख्य मुक्तकों को उद्धृत किया गया है। इन मुक्तकों में भावों की सरसता, व्यंजना का वैभव, शैली की स्वाभाविकता एवं भाषा की सरलता आदि अनेक गुण विद्यमान हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

4. शृंगार मुक्तकों का संग्रह हुआ है–
   (क) काव्य सप्तशती के रूप में (ख) आर्या-सप्तशती के रूप में
   (ग) इनमें से कोई नहीं (घ) उपरोक्त दोनों
5. 'कबीर ग्रंथावली' में साखियाँ विभाजित हैं–
   (क) 19 अंगों में (ख) 39 अंगों में (ग) 59 अंगों में (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. प्राय: मध्यकाल को कहा जाता है–
   (क) शृंगारी-युग (ख) विकारी-युग (ग) स्वर्ण-युग (घ) इनमें से कोई नहीं

14.4 हिंदी में मुक्तक काव्य का विकास

पूर्ववर्ती प्राकृत, संस्कृत एवं अपभ्रंश के मुक्तक साहित्य को विषय की दृष्टि से इन तीनों वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–(1) बौद्ध एवं जैन कवियों के धर्म एवं वैराग्य संबंधी मुक्तक। (2) गाथा सप्तशतीकार अमरुक; गोबर्द्धनाचार्य आदि के शृंगारी मुक्तक। (3) भर्तृहरि व अन्य कवियों के नीति संबंधी मुक्तक। हिंदी में भी इन तीनों धाराओं का विकास दृष्टिगोचर होता है। कबीर, दादू, सुंदरदास आदि संत कवियों ने धर्मोपदेश एवं वैराग्य संबंधी मुक्तकों की रचना की तो दूसरी ओर, बिहारी, मतिराम, देव, पद्माकर आदि ने शृंगारी मुक्तकों की परंपरा को आगे बढ़ाया। भर्तृहरि के ''नीति-शतक'' की भाँति गिरिधर, वृंद, रहीम आदि ने नीति-विषयक मुक्तकों की भी रचना की। हिंदी के मध्यकालीन शृंगारिक मुक्तकों को भी मुख्यत: दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं–(1) रीतिबद्ध मुक्तक और (2) रीति-मुक्त मुक्तक। इस प्रकार आधुनिक युग से पूर्व रचित मुक्तक-साहित्य को हम इन चार शीर्षकों के अंतर्गत समाविष्ट कर सकते हैं–(1) भक्ति एवं वैराग्य संबंधी, मुक्तक, (2) रीतिबद्ध मुक्तक-काव्य, (3) स्वच्छंद प्रेम-मूलक मुक्तक और (4) नीति-संबंधी मुक्तक काव्य। इनके अतिरिक्त पाँचवाँ वर्ग वीर-रस के मुक्तकों का भी हिंदी में मिलता है।

(1) भक्ति एवं वैराग्य संबंधी मुक्तक–इस वर्ग के मुक्तकों की परंपरा का प्रवर्त्तन संत कबीर द्वारा हुआ। उनके पूर्व अपभ्रंश में योगींदु, रामसिंह 'देवसेन, जिनदत्त सूरि आदि के द्वारा धर्म एवं वैराग्य संबंधी दोहों की रचना पर्याप्त मात्रा में हो चुकी थी। कबीर ने भी दोहों से ही मिलती-जुलती शैली को अपनाया, जिसे जिन्होंने दोहा न कहकर 'साखी' के नाम से पुकारा। कबीर अशिक्षित थे, अत: वे छंदों के नियमों की पूर्ति में समर्थ नहीं थे और न ही अपने काव्य को किन्हीं कृत्रिम नियमों में आबद्ध करना चाहते थे, अत: उनकी साखियों में भावों की अभिव्यक्ति सहज स्वाभाविक रूप में उपलब्ध होना स्वाभाविक है। 'कबीर-ग्रंथावली' में उनकी साखियाँ 59 अंगों में विभाजित हैं, जिनसे विषय-क्षेत्र के विस्तार का अनुमान किया जा सकता है। इनमें मुख्यत: गुरु-भक्ति, ज्ञान, परिचय, चेतावनी, माया, कुसंगति, विरक्ति, ईश्वर-प्रेम; विरह आदि विषयों का निरूपण हुआ। कबीर के मुक्तकों में मार्मिकता की दृष्टि से विरह-संबंधी उक्तियाँ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

चोट सताणी विरह की, सब तन जर जर होइ।
माराणहारा जाणि है, कै जिहि लागी सोइ॥
विरहिन ऊभी पंथ सिरि, पंथी बूझै धाइ।
एक सबद कहि पीब का, कबर मिलेंगे आई॥

इन साखियों में अनुभूतियों की तीव्रता के कारण पर्याप्त सरलता आ गई है। इसके अतिरिक्त कबीर सूक्ष्म विषयों का निरूपण भी स्थूल रूपकों के माध्यम से करते हैं जिससे वे सहज ही अनुभूतिगम्य हो सकते हैं–

माखी गुड में गडि रहि, पंख रही लपटाय।
ताली पीटै सर धुनै, मीठै बोई माय॥

नोट

हाड़ जलै ज्यों लाकड़ी, केश जलै ज्यों घास।
सद जग जलता देखि करि, भया कबीर उदास।।

यहाँ क्रमशः लोभ एवं संसार की नश्वरता का प्रतिपादन इस ढंग से किया गया कि पाठक के कल्पना-चक्षुओं के समक्ष एक सजीव दृश्य उपस्थित हो जाता है। लोभ की बुराइयों या संसार की नश्वरता का वर्णन यहाँ अभिधात्मक शैली में न होकर व्यंजना की सहायता से हुआ है। शैली की इसी विशेषता के कारण कबीर की उपदेशात्मक उक्तियाँ भी काव्यात्मकता से ओत-प्रोत हो गई हैं।

कबीर का अनुकरण न केवल परवर्ती संत कवियों द्वारा हुआ, अपितु रामभक्ति शाखा एवं कृष्ण-भक्ति शाखा के कवियों ने भी थोड़ी-बहुत मात्रा में मुक्तकों की रचना की। आगे चलकर दोहों के स्थान पर कवित्त और सवैयों का भी संत कवियों द्वारा प्रयोग होने लगा। उदाहरण के लिए सुंदरदास के कवित्त व सवैयों की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

बोलिये तौ तब जब बोलिबे की सुधि होय,
ना तौ मुख मौन गहि चुप होय रहिए।
जोरिए तौ तब जब जोरिबै की रीति जानैं,
तुक छंद अरथ अनूप जामें लहिए।।

\+ \+ \+

गेह तज्यो अरु नेह तज्यो पुनि, खेह लगाइ कै देह सँवारी।
मेह सहे सिर, सीत रहै तन, धूप समै जो पंचागिनि बारी।
भूख सही रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहे दुःख भारी।
डासन छाँडि कै कासन ऊपर, आसन मार्‌यो पर आस न मारी।

तुलसीदास ने अपनी 'कवितावली' में भी कवित्त-सवैयों की रचना अत्यंत सरल रूप में की है। वस्तुतः परवर्ती युग में हिंदी कवि दोहे की अपेक्षा इन छंदों को अधिक अपनाने लगे। इनका कारण संभवतः एक तो इनका विस्तार है, जिससे किसी भी विषय का अधिक सुगमता से इनमें निरूपण हो सकता है। दूसरे, इनमें नाद का ऐसा माधुर्य, शब्दों का ऐसा प्रवाह और भाषा की ऐसी लचक का आविर्भाव हो जाता है, जो सहज ही श्रोता के मन को आकर्षित कर सके। अतः इन्हें लोकप्रियता प्राप्त होना स्वाभाविक है।

(2) रीतिबद्ध मुक्तक काव्य–जिस प्रकार धर्म-संप्रदायों के आश्रय में भक्ति और वैराग्य के मुक्तकों की रचना हुई, उसी प्रकार राज्याश्रय में रीतिबद्ध मुक्तक काव्य का विकास हुआ। संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश में शृंगारिक मुक्तकों की रचना प्रचुर मात्रा में हुई, किंतु उनमें काव्य-शास्त्र के लक्षणों की पूर्ति का प्रयास नहीं मिलता। वस्तुतः संस्कृत में शास्त्रीय लक्षणों का समन्वय करने का प्रयास सर्वप्रथम एक मुक्तककार में नहीं–एक गीतिकार में मिलता है, जिन्होंने अपने 'गीत-गोविंद' में नायिका-भेद एवं शृंगार के विभिन्न शास्त्रीय भेदोपभेदों का समन्वय उल्लेखपूर्वक किया है। हिंदी में भी रीति का प्रयोग प्रारंभ में भक्त कवियों द्वारा हुआ–सूरदास की 'साहित्य-लहरी' एवं नंददास की 'रसमंजरी' हिंदी की रीति-परंपरा के प्रारंभिक ग्रंथ हैं। जिस समय भक्त कवि इस ओर लगे हुए थे, अकबर के दरबार में नरहरि, ब्रह्म, रहीम और गंग आदि के द्वारा कवित्त-सवैयों में शृंगारिकता पनप रही थी। इन दरबारी कवियों के काव्य में नायिका के रूप-सौंदर्य, उसकी विभिन्न चेष्टाओं, उसके नख-शिख, तथा प्रेमी-प्रेमिकाओं की लीला का चित्रण होता था; किंतु उसमें काव्य-शास्त्र के लक्षणों की पूर्ति का प्रयास नहीं मिलता। यथा बीरबल 'ब्रह्म' का यह छंद देखिए–

सेजहिं तैं उठि नारि चली, मन-मोहन जू हँसि चीर गह्यो,
प्रगट्यो रवि, कान्ह विहान भयो, मुख मोरि कै यो मृगनैनी कह्यो।
बेनी दुहूँ कुच बीच रही उपमा कवि ब्रह्म भने निबह्यो,
जनमेजय के मनो जज्ञ समै दुरि तच्छक मेरु की सधि रह्यो।

तो इस प्रकार अकबरी दरबार में शृंगारी मुक्तकों की बहुत-सी प्रवृत्तियों का विकास हो चुका था, किंतु केशवदास पहले रीतिकालीन कवि हैं, जिन्होंने अपनी 'रसिक-प्रिया' एवं 'कवि-प्रिया' में भक्त-कवियों द्वारा गीतिकाव्य में पोषित 'रीतिप्रकृति' को शृंगारिक मुक्तकों से संबंधित किया। आगे चलकर तो रीति और शृंगारिकता का मुक्तक काव्य में ऐसा समन्वय हो गया कि किसी गीतिकार ने रीति का नाम तक नहीं लिया।

अकबरी दरबार का प्रभाव तत्कालीन शासक वर्ग के अन्य लोगों पर भी पड़ा, जिससे अनेक नरेशों, सामंतों और रईसों के आश्रित कवि रीतिबद्ध शृंगारिक मुक्तकों की रचना में प्रवृत्त हो गए। देव, मतिराम, पद्माकर, ग्वाल आदि अनेक कवियों ने रीति के निर्वाह के साथ-साथ अनुभूतिपूर्ण सरस मुक्तकों की रचना की है। इसके अतिरिक्त हमारे अनेक सतसई कारों–बिहारी, मतिराम, विक्रम आदि–ने दोहों में शृंगार-रस का प्रतिपादन किया, जिस पर रीति का प्रभाव परिलक्षित होता है। वस्तुत: मध्यकालीन शासन वर्ग को रुचि के प्रभाव से हिंदी का मुक्तक काव्य अपनी उन्नति की चरम सीमा तक पहुँच गया।

(3) स्वच्छंद प्रेम-मूलक मुक्तक-काव्य–मध्यकाल में से कवियों का भी प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने वैयक्तिक प्रेमानुभूतियों की व्यंजना के लिए मुक्तक-शैली को ग्रहण किया। ऐसे कवियों में घनानंद, बोधा, आलम, रसखान आदि उल्लेखनीय हैं। यद्यपि इन्होंने रीतिबद्ध शृंगारी कवियों की भाँति कवित्त सवैया पद्धति का ही प्रयोग किया, किंतु शास्त्रीय नियमों या रीति के पचड़े में ये नहीं पड़े। भावात्मकता व अनुभूति की गंभीरता की दृष्टि से इनका काव्य मध्यकाल के समस्त मुक्तक काव्य में सर्वोत्कृष्ट है। भाव-पक्ष भी अत्यंत प्रौढ़ है। व्यंग्यात्मकता एवं भाषा प्रवहणशीलता के कारण इनके मुक्तकों के प्रभाव में गहरी अभिवृद्धि हो गई है। मुक्तक काव्य में रसानुभूति की क्षमता किस मात्रा में विद्यमान है, यह देखने के लिए घनानंद, बोधा, आलम आदि की कुछ पंक्तियों का आस्वादन ही पर्याप्त होगा–

अति सूधो सनेह को मारग है, जहँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहँ साँचे चलैं तजि आपनपौं, झिझकैं कपटी जो निसाँक नहीं।।
'घन आनंद' प्यारे सुजान सुनो, इत एक ते दूसरो आँक नहीं।
तुम कौन सी पाटी पढ़े हौ लला, मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।। –घनानंद

\+ + +

एक सुभान के आनन पै कुरबान जहाँ लगि रूप जहाँ को।

× × ×

जान मिलै तौ जहान मिलै नहिं, जान मिलै तौ जहान कहाँ को।

\+ + +

यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवारि की धार पै धावनो है।

\+ + +

सहते ही बनै न, कहतै न बनैं, मन ही मन पीर पिरैबी करै। –बोधा

× × ×

जा थल कीने बिहार अनेकन ता थल काँकरि बैठि चुन्यो करैं।

× × ×

नैनन मैं रहते जे सदा तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करैं। –आलम

टास्क द्विवेदी युग किसके लिए प्रसिद्ध है?

(4) नीति-मुक्तक संबंधी काव्य–जैसा कि पीछे कहा गया है, मध्यकाल के कुछ कवियों ने केवल नीति-संबंधी विषय को लेकर मुक्तकों की रचना की। इनमें वृंद, गिरिधर, घाघ, वैताल आदि उल्लेखनीय हैं। कवियों ने दोहा, कुंडलिया, छप्पय आदि छंदों का प्रयोग किया। यद्यपि विषय की बौद्धिकता के कारण इनके

नोट

काव्य में भावात्मकता के विकास के लिए स्थान नहीं था, किंतु फिर भी शैलीगत आकर्षण के कारण इनकी सूक्तियाँ भी पर्याप्त रोचक बन गई हैं; देखिए–

भले बुरे सब एक सम जौ लौं बोलत नाहिं।
जानि परत हैं काग पिक ऋतु बसंत के माँहिं।। –वृन्द

रहिए लटपद काटि दिन बरु धामहिं मैं सोय।
छाँह न बाकी बैठिए, जो तरु पतरो होय।
जो तरु पतरो होय एक दिन धोखा देहै।
जा दिन बहै बयारि टूट तब जर तें जैहै।।
कह गिरधर कविराय छाँह मोटे की गहिए।
पाता सब जरि जाय तऊ छाया में रहिए।। गिरधर-कविराय

(5) वीर-रसात्मक मुक्तक-काव्य–प्राय: मध्यकाल को श्रृंगारी-युग कहा जाता है, किंतु इस युग में वीर-रसात्मक काव्य की रचना भी पर्याप्त मात्रा में हुई, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस काव्य को दो उपभेदों में बाँट सकते हैं–

(1) राजस्थानी कवियों द्वारा डिंगल भाषा में रचित और (2) अन्य कवियों द्वारा ब्रजभाषा में रचित। प्रथम वर्ग में पृथ्वीराज, बाँकीदास, दुरसा जी, सूर्यमल मिश्र आदि कवि आते हैं, जिन्होंने वीरभावों की अभिव्यक्ति अनुभूतिपूर्ण शब्दों में की। उस युग के राष्ट्र नायक महाराणा प्रताप की वीरता, दर्प एवं महिमा को लेकर इन्होंने अनेक ओजपूर्ण मुक्तकों की रचना की। आश्चर्य तो यह है कि पृथ्वीराज और दुरसा जी का अकबरी दरबार से गहरा संबंध होते हुए भी उन्होंने महाराणा के गौरव-गान में किसी प्रकार का संकोच नहीं किया, अपितु महाराणा के आगे अकबर की हीनता, तुच्छता एवं लघुता का प्रतिपादन खुले शब्दों में किया है; कुछ उक्तियाँ–

माई एहड़ा पूत जण, जेहड़ा राण प्रताप।
अकबर सूतो औझके, जाण सिराणैं साँप।।
आइरे अकबरियाह, तेज तुहालो तुरकड़ा।
नग तग नीसरियाह, राण बिना सहराजवी। –पृथ्वीराज

अकबर गरब न आंण हींदू सह चाकर हुवा।।
दीठों कोई दीवाण, करती लटका कटहड़ै।। –दुरसा जी

कवि राजा सूर्यमल मिश्र ने अपनी 'वीर सतसई' में मध्यकालीन राजपूती आदर्श की व्यंजना सफलतापूर्वक की है। राजस्थानी कवियों ने मुख्यत: दोहा व उससे मिलते-जुलते छंदों का प्रयोग किया है।

ब्रजभाषा में वीर रस के मुक्तकों की रचना करने वाले वर्ग में सर्वश्रेष्ठ कवि भूषण माने जाते हैं, जिन्होंने महाराज छत्रसाल और छत्रपति शिवाजी के यश का गान कवित्त-सवैयों में तथा फड़कती हुई भाषा व ओजस्वी शैली में किया है। उनके अतिरिक्त पद्माकर, ग्वाल आदि कवियों ने भी अपने आश्रयदाताओं की प्रशंसा के लिए कुछ वीर रस के छंदों की रचना की थी, जिनमें बहुत कुछ भूषण का अनुकरण हुआ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्यकाल का मुक्तक साहित्य विषय-क्षेत्र की दृष्टि से बहुत व्यापक है। भक्ति, वैराग्य, श्रृंगार, नीति और वीर रस के अतिरिक्त इस युग में 'बेनी के भंडौवे' और 'खटमल-बाइसी' जैसी हास्य-रस की भी मुक्तक-रचनाएँ लिखी गईं। वस्तुत: शैली की दृष्टि से रीति-काल को हम 'मुक्तक-काल' भी कह दें तो अनुचित नहीं होगा।

आधुनिक काल–आधुनिक काल का प्रारंभ भारतेंदु युग से होता है। इस युग में मुक्तकों के भाव-क्षेत्र एवं विषय-क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने एक ओर पूर्ववर्ती कवियों का अनुसरण करते हुए भक्ति-भावना और प्रेम से ओतप्रोत मुक्तकों की रचना की तो दूसरी ओर देश-प्रेम, समाज-सुधार, हास्य और व्यंग्य आदि विषयों पर छोटे-छोटे मुक्तक लिखे। उनके साहित्य में अनुभूति की विशदता, भावों की स्पष्टता और

भाषा की स्वाभाविकता व कोमलता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। उनका मुक्तक काव्य भी इन गुणों से वंचित नहीं है। उनके युग के अन्य कवियों ने भी भारतेंदु हरिश्चंद्र का अनुकरण किया।

द्विवेद्वी-युग प्रबंधात्मकता के लिए प्रसिद्ध है। इस युग के कवि एवं लेखक राष्ट्रीय-जागरण के उद्देश्य से विगत युग के महापुरुषों के जीवन का चित्रण करना चाहते थे, जो प्रबंध-शैली में ही संभव है। फिर भी नाथूराम 'शंकर', अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' रामरनेश त्रिपाठी आदि ने मुक्तक रचना की, जिनमें उपदेशात्मकता की प्रधानता है। इस युग के कवियों की शैली में इतना अधिक विस्तार मिलता है कि वह मुक्तक रचना के उपयुक्त नहीं लगती, अत: इनके मुक्तकों में अपेक्षित भावात्मकता नहीं आ सकी। आगे चलकर छायावादी और प्रगतिवादी युग के कवियों ने भी मुक्तकों की अपेक्षा गीति-शैली का अधिक प्रयोग किया, किंतु फिर भी उन्होंने यत्र-तत्र अच्छे मुक्तकों की रचना की है। इस युग में ऐसी छोटी-छोटी कविताओं की भी रचना हुई, जिनमें छंदों की संख्या पाँच-सात है तथा जो गेय न होकर पाठ्य हैं–इन्हें 'प्रलंब मुक्तक' कहा गया है। मुक्तक-शैली में रचित 'आँसू' और 'मधुशाला' जैसी अत्यंत लंबी रचनाएँ भी लिखी गई हैं।

इधर 'प्रयोगवादियों' ने 'नई कविता' में एक ऐसी शैली का प्रयोग किया है, जो मुक्तक और गीति के बीच की कही जा सकती है।' आकार प्रकार की दृष्टि से इनकी रचनाएँ मुक्तक ही है; किंतु उनका सस्वर पाठ होने के कारण वे गीति का रूप धारण कर लेती है। इनकी रचनाओं में भावात्मकता की अपेक्षा बौद्धिकता, अनुभूति की अपेक्षा विचारों की अधिकता है; अत: इन्हें सूक्तियों या उक्तियों की संज्ञा दी जा सकती है।

उपर्युक्त पर्यालोचन से स्पष्ट है कि विभिन्न युगों में हिंदी मुक्तक-काव्य की धारा विभिन्न विषयों के धरातल पर प्रवाहित होती हुई निरंतर आगे बढ़ती रही और सदा बढ़ती रहेगी।

14.5 सारांश (Summary)

- प्राचीन भारतीय आचार्यों ने प्रबंध-काव्य के विपरीत रूप अर्थात् अप्रबंध-काव्य के लिए मुक्तक शब्द का व्यवहार किया है। अग्निपुराण ने ऐसे श्लोकों को मुक्तकों की संज्ञा दी है जो अपने अर्थद्योतन में स्वत: समर्थ हों–''मुक्तक श्लोक एकैकश्चमत्कारक्षम: सताम्।''
- अभिनवगुप्त ने इसकी एक विशेषता और बताई है कि वह उसमें विभाव, अनुभावादि से परिपुष्ट इतना रस भरा होता है कि वह पाठक को रसानुभूति प्रदान कर सकता है।
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने मुक्तक के स्वरूप का अधिक स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है कि ''मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं रहती जिसमें कथा-प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक-स्थायी प्रभाव ग्रहण करता है। इसमें तो रस के छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदय-कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबंधकाव्य विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है, इसी से यह सभा-समाजों के लिए अधिक उपयुक्त होता है।''
- संस्कृत विद्वानों एवं आचार्यो ने मुक्तक के कई भेदोपभेद किये हैं। दंडी ने उसके मुख्य तीन भेद किए हैं–मुक्तक, कुलक कोष और संघात।
- विश्व की प्राचीनतम उपलब्ध रचना ॠग्वेद भी मुक्तक रूप में ही रचित है। आगे चलकर पालि और प्राकृत साहित्य में भी मुक्तक की प्रधानता मिलती है।
- पूर्ववर्ती प्राकृत, संस्कृत एवं अपभ्रंश के मुक्तक साहित्य को विषय की दृष्टि से इन तीनों वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–(1) बौद्ध एवं जैन कवियों के धर्म एवं वैराग्य संबंधी मुक्तक। (2) गाथा सप्तशतीकार अमरुक; गोबर्द्धनाचार्य आदि के शृंगारी मुक्तक। (3) भर्तृहरि व अन्य कवियों के नीति संबंधी मुक्तक।
- आधुनिक काल का प्रारंभ भारतेंदु युग से होता है। इस युग में मुक्तकों के भाव-क्षेत्र एवं विषय-क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने एक ओर पूर्ववर्ती कवियों का अनुसरण करते हुए भक्ति-भावना और प्रेम से ओतप्रोत मुक्तकों की रचना की तो दूसरी ओर देश-प्रेम, समाज-सुधार, हास्य और व्यंग्य आदि विषयों पर छोटे-छोटे मुक्तक लिखे।

नोट

14.6 शब्दकोश (Keywords)

समाविष्ट – समाहित
रसानुभूमि – रस की अनुभूति
निष्पत्ति – पूर्णता

14.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'मुक्तक' के संबंध में आचार्च रामचंद्र शुक्ल के विचार व्यक्त कीजिए।
2. मुक्तक के स्वीकृत 9 भेदों का उल्लेख कीजिए।
3. रीतिबद्ध मुक्तक काव्य से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।
4. वीर-रसात्मक मुक्तक काव्य का विवरण दीजिए।

उत्तर–स्व-मूल्यांकन (Answers–Self Assessment)

1. गुलदस्ता	2. कुलक कोष	3. मुक्तक काव्य
4. (क)	5. (ग)	6. (क)

14.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अभिनव हिंदी व्याकरण–*रूपनारायण त्रिपाठी, श्याम प्रकाशन।*
2. मुग्धबोध हिंदी व्याकरण–*कृष्ण नारायण प्रसाद मागध।*
3. हिंदी व्याकरण की अभ्यास पुस्तिका–*जी.पी. शर्मा, ओरिएंट ब्लैक स्वान।*